पशु की परम्परा

पूँजीवाद से लेकर कम्यूनिज़म तक आधुनिक पाश्चात्य की समस्त प्रवृत्तियाँ एक ही परम्परा में प्रतिष्ठित हैं—पशु की परम्परा में। कारण, इन समस्त मत-मतान्तरों की मूलभूत मनीषा मनुष्य को एक आत्मपोषण-प्रवण पशु से इतर कुछ भी नहीं मानती।
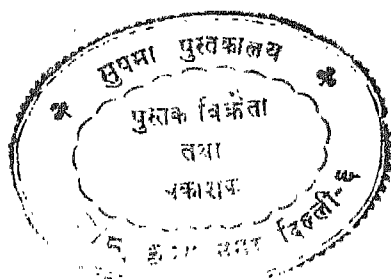
पशु की परम्परा

पशु की परम्परा

सव्यसाची

प्रकाशक : **भारती साहित्य सदन,**
३०/९०, कनॉट सरकस, नई दिल्ली-१

आवरण शिल्पी : **पाल बंधु**

प्रथम संस्करण : **अप्रैल, १९६१**

मुद्रक : **श्री गोपीनाथ सेठ,**
नवीन प्रेस, दिल्ली

दो शब्द

आधुनिक पाश्चात्य के मनीषी—और उनके अपाश्चात्य अनुयायी भी—अनेक प्रकार की शंकाओं-आशंकाओं से त्रस्त हैं। क्या सिगरेट पीने से मनुष्य को कैन्सर हो जाता है? बालकों को पहिले शिक्षित करना चाहिए अथवा उनके माता-पिता को? इत्यादि। किन्तु एक विषय में वे सर्वथा विगत-संशय हैं। उनको निमेष मात्र के लिए भी कभी यह शंका नहीं होती कि गत दो-तीन शताब्दी में जिस सभ्यता-संस्कृति का उदय पाश्चात्य में हुआ है वह मानव-इतिहास की समस्त सभ्यता-संस्कृतियों की तुलना में ऊर्ध्वतम तथा श्रेष्ठतम है।

अर्वाचीन युग के उदारवादी, मानवत्ववादी, उग्रवादी, समाजवादी, कम्युनिस्ट इत्यादि दल इस प्रश्न पर भले ही वादविवाद करते रहें कि आधुनिक पाश्चात्य में यह अभूतपूर्व चमत्कार हुआ तो क्योंकर और किन कारणों के कार्य-स्वरूप। वे इस चमत्कार से उद्भूत सत्ता तथा सौख्य पर एकाधिकार जमाने के लिए परस्पर युद्धरत भी होते रहते हैं। किन्तु यदि कोई 'अभागा' एक क्षण के लिए भी आधुनिक पाश्चात्य की सभ्यता-संस्कृति के प्रति संशयापन्न होने लगता है तो ये समस्त दल समवेत होकर उसकी विगर्हा करते हैं और उसका दमन करने के लिए तत्पर हो जाते हैं।

अपने इस विश्वास के समर्थन में कि आधुनिक पाश्चात्य की सभ्यता-संकृति अतीतकाल की समस्त उपलब्धियों से अनन्त गुणा प्रकृष्ट-तर तथा प्रशस्ततर है, पाश्चात्य का मनीषी-मण्डल अनेक प्रकार के प्रमाण भी प्रस्तुत करता है। सर्वप्रथम वे एक ऐसे सृष्टिशास्त्र की दुहाई देते हैं

जिसके अनुसार हमारी यह वसुन्धरा एक आदिम जड़पदार्थ के एकार्णव से अकारण ही उत्क्रान्त हो गई। तदनन्तर वे एक ऐसा प्राणीशास्त्र प्रस्तुत करते हैं जिसके अनुसार बर्ट्रेन्ड रसेल-जैसा आज का प्रकाण्ड पण्डित काल-क्रम में एक अस्थि-मज्जा-विहीन मत्स्यपिण्ड में से मूर्त हुआ है। और अन्ततः वे एक ऐसा समाजशास्त्र हमारे सामने रखते हैं जिसके अनुसार अतीतकाल का प्रत्येक पर्व एक निबिड़ अन्धकार में निमज्जित था—आधुनिक पाश्चात्य सभ्यता का उदय होने के पूर्व ! और हम सब लोगों से अनुरोध किया जाता है कि ये समस्त 'शास्त्र' साइन्स द्वारा सिद्ध होने के कारण पूर्णरूपेण प्रमादहीन हैं।

किन्तु तनिक-सा मनन तथा विश्लेषण करने पर यह बात तुरन्त ही समझ में आ जाती है कि साइन्स-संगत कहलाने वाले ये समस्त 'शास्त्र' कोरी कपोल-कल्पनाओं से अधिक अन्य कुछ भी नहीं। साइन्स तो प्रत्यक्ष को ही एकमात्र प्रमाण मानती है और प्रत्यक्ष की कषपट्टिका पर पूरा उतरे बिना कोई भी अनुमान साइन्स के लिए स्वीकार्य नहीं हो सकता। परन्तु ये समस्त 'शास्त्र' तो कभी भूलकर भी किसी प्रकार के प्रत्यक्ष प्रमाण का छोर तक नहीं छूते। ये सब तो अटकलपच्चू और अललटप्पू अनुमानों के घोरान्ध घटाटोप-मात्र हैं। सो भी उस बुद्धि के अनुमान जो पूर्णतया बहिर्मुख होने के परिणामस्वरूप उत्तरोत्तर अधोमुख है।

इसलिए आधुनिक पाश्चात्य के अपने अहंकार के अतिरिक्त अन्ततः कोई प्रमाण ही नहीं कि आधुनिक पाश्चात्य की सभ्यता-संस्कृति अतीत-काल की किसी भी सभ्यता-संस्कृति की अपेक्षा श्रेष्ठतर है। और इस तथ्य के समर्थन में शत-शत प्रमाण उपलब्ध हैं कि आधुनिक पाश्चात्य की सभ्यता-संस्कृति पूर्णरूपेण पाप-परायण, अन्तःसार-शून्य तथा मनुष्य को अधःपतन की पराकाष्ठा पर पहुँचाने वाली है। यह एक निरा अकस्मात् नहीं है कि इस सभ्यता-संस्कृति के गर्भ से किसी भी श्रेष्ठ साहित्य, संगीत, शिल्प अथवा स्थापत्य का उदय नहीं हुआ। इन ललित-कलाओं के नाम पर आज भी जिन कृतियों को सर्वोत्तम माना

जाता है वे सब-की-सब किसी-न-किसी अतीत युग में ही सृष्ट-तथा संचित हुई थीं ।

वस्तुतः आधुनिक पाश्चात्य अज्ञान और अहंकार की जिस अन्ध-तमिस्रा में आपादमस्तक डूबा हुआ है उसका उदाहरण मानव-इतिहास में बहुत कम उपलब्ध होता है । और उलूक-दृष्टि होने के कारण उसको जिस ओर भी उजाला दिखाई देता है उसी ओर से आँखें मूँदकर वह उस उजाले की विकट विगर्हा करने लग जाता है । इसलिए प्राची में उदित होने वाली अध्यात्म-परम्पराएँ सामान्यतः और भारतवर्ष का सनातन धर्म विशेषतः, आज के प्रत्येक पाश्चात्य मनीषी के लिए जुगुप्सा तथा कुत्सावाद के पात्र बने हुए हैं ।

पाश्चात्य में इस अन्धतमिस्रा का आगमन उस आन्दोलन द्वारा हुआ था जिसको रिनैसाँ का नाम देकर अर्वाचीन पाश्चात्य अपने स्वर्ण-युग के नाम से स्मरण करता रहता है । हमको सूचित किया जाता है कि रिनैसां का प्रथम प्रतीक था वह प्रतिवाद, जिसने यह मानना अस्वीकार कर दिया कि ब्रह्माण्ड तथा पिण्ड के अन्तर में किसी अध्यात्म-तत्त्व का समावेश है । दूसरा प्रतीक था उस पुरातन परम्परा का प्रत्याख्यान जिसके अनुसार मानव-प्राणी के अन्तर में उसकी ज्ञानेन्द्रियों तथा बाह्य बुद्धि के अतिरिक्त ज्ञानार्जन का कोई अन्य और श्रेष्ठतर सामर्थ्य भी निगूढ़ है । और तीसरा प्रतीक था इस सिद्धान्त का प्रतिपादन कि इसी लोक में, मानव के इसी जीवनवृत्त को उसका एकमात्र जीवनवृत्त मानकर, मनुष्य-मात्र अपने-अपने स्थूल सौख्य के संग्रहार्थ सतत् संघर्ष करे ।

रिनैसां के आन्दोलन का प्रचार और प्रसार होते ही आत्मा तथा परमात्मा का बहिष्कार होने लगा । और साधु-सन्तों को वंचक अथवा विक्षिप्त की संज्ञा से विभूषित किया जाने लगा । उन्नीसवीं शताब्दी के विकासवाद और मार्क्सवाद तथा बीसवीं शताब्दी के फ्रायडियन और अन्यान्य मानसशास्त्रों में रिनैसाँ की यह परम्परा अपनी पराकाष्ठा पर आ पहुँची ।

इस परम्परा के अनुसार यह समस्त सृष्टिचक्र एक चैतन्य-विहीन जड़पदार्थ का जटिल जंजालमात्र है जो कतिपय आत्मनिर्भर नियमों द्वारा प्रत्यावर्तित होता रहता है। मानव-प्राणी इसी जंजाल में से अकस्मात् आविर्भूत हुआ है। और आहार-निद्रा-भय-मैथुनंश्च द्वारा प्रवर्तित होने वाले पशु के परे मनुष्य का कोई भी प्रकृत परिचय नहीं। मानव-समाज अनेकानेक अहंकार-विमूढ़ व्यक्तियों अथवा परस्पर प्रतिस्पर्धा करने वाले विभिन्न वर्गों का समन्वय-हीन समूह मात्र है। राजनीति का एकमात्र सिद्धान्त यह है कि एक-न-एक वर्ग निरंकुश सत्ता प्राप्त करके अपने स्वार्थ का अनर्गल पोषण तथा अन्यान्य वर्गों का अन्तहीन शोषण करता रहे। धर्म व्यक्तियों अथवा वर्गों के स्वार्थ-परक संघर्ष का अस्थायी संतुलन मात्र है। सौन्दर्य नारी की नग्न देह में अपनी पराकाष्ठा प्राप्त कर लेता है। और ज्ञान विविध प्रकार के और परस्पर असम्बद्ध बुद्धिवादी वितण्डावादों का समुच्चय मात्र है।

यह परम्परा वस्तुतः पशु की परम्परा है। मनुष्य को परमात्मा का अंश मानने वाली अध्यात्म-परम्परा से पूर्णतया प्रतिकूल। पूंजीवाद से लेकर कम्यूनिज़म तक, आधुनिक पाश्चात्य की समस्त प्रवृत्तियाँ एक ही परम्परा में प्रतिष्ठित हैं—पशु की परम्परा में। कारण, इन समस्त मत-मतान्तरों की मूलभूत मनीषा मनुष्य को एक आत्मपोषण-प्रवण पशु से इतर कुछ भी नहीं मानती। राजनीति के रंगमंच पर इन विभिन्न प्रवृत्तियों का पारस्परिक संघर्ष इनकी आधारभूत एकता को अन्तर्हित किए रहता है। किन्तु उसी समय तक जब तक कि कोई अध्यात्म-वादी मनीषा इन प्रवृत्तियों का प्रतिरोध करने के लिए प्रस्तुत नहीं हो पाती। अध्यात्मवाद के विरुद्ध ये समस्त प्रवृत्तियाँ समवेत हो जाती हैं। और केवल मात्र अध्यात्मवाद का आन्दोलन ही इन प्रवृत्तियों की पितृभूत पशु-परम्परा का उच्छेद कर सकता है।

—सव्यसाची

प्रथम परिच्छेद

: १ :

न्यू इण्डिया कॉटन मिल्ज़ की मजदूर-बस्ती। घरूलों से घिरे मैदान में दो-तीन हजार मजदूर उपासीन हैं। साँझ के समय। हेमन्त का सूर्य बुझते हुए दीपक के समान अधिक देदीप्यमान हो उठा है।

किन्तु मज़दूरों को सूर्यास्त का स्वर्णिम वैभव निहारने का अवकाश नहीं है। उनके उन्नमित मुख मञ्च पर दण्डायमान वक्ता की वाग्धारा पर मुग्ध हैं। और उन शत-शत निर्निमेष नयनों में न जाने कैसी एक नृशंसता-सी निखर रही है। मानो दूसरे क्षण वे एक निर्मम नरमेध के लिए तत्पर हो जाएँगे।

मञ्च पर पड़ी मेज़ के पीछे खड़ा है वह विप्लववादी वक्ता। उसकी वाणी का विस्तार करने के लिए लाउड-स्पीकर का आयोजन है। किन्तु उसकी कर्कश कण्ठ-ध्वनि का विपुल वैभव बतला रहा है कि उसको इस यन्त्र की तनिक भी आवश्यकता नहीं। शत-शत स्पीचों में सिद्ध हुआ उसका स्वर-विन्यास अनायास ही संसार के दिग्दिगन्त तक अपना सन्देश पहुँचा सकता है।

मेज के अगले छोर से छिटक रहा है मजदूर-यूनियन का निजी निशान। लाल कपड़े पर अवदात अबरी के अक्षरों में लिखा है—न्यू इण्डिया कॉटन मिल्ज़ मज़दूर यूनियन। मेज़ के पीछे की ओर पड़ी कई कुर्सियों पर अन्यान्य नेता विराजमान हैं। बीच की कुरसी पर बैठी प्रौढ़ा इस सभा की प्रधान हैं। और मञ्च के अगली ओर दक्षिणवर्ती कोने पर कम्यूनिस्ट पार्टी की लाल पताका लहरा रही है। हँसिया और हथौड़े के मिष से हिंसात्मक हँसी हँसती

हुई पताका।

वक्ता की वाग्धारा रुकी। तब सभा में से कई-एक मजदूरों ने एक साथ उठकर मुक्के तान लिए। उनके कण्ठों से निर्गत एक समवेत हुंकार वातावरण में व्याप्त हो गया : "इन्....न्...क्लाब !!"

शेष सभा ने एक स्वर से प्रत्युत्तर दिया : "जिन्दा...बाद !!"

हुँकार तथा प्रत्युत्तर की कई पुनरावृत्तियाँ हो लेने पर, प्रधान ने अपने आसन से ईषत् उत्थान किया। और दूसरे क्षण एक नारी-कण्ठ का नीरस निनाद सुन पड़ा : "साथियो ! अब आपकी यूनियन के सैक्रेटरी कॉमरेड जोरावरसिंह आप लोगों को अपनी सलाह देंगे। वे आज के आखिरी स्पीकर हैं।"

प्रधान ने अपने पास बैठे पुरुष की ओर देखकर कहा, "कॉमरेड जोरा-वरसिंह !"

कॉमरेड जोरावरसिंह उठकर खड़ा हो गया। उसके वस्त्र मटमैले थे। कुरता और पाजामा। मुख भी मटमैला। उलझ-पुलझ रेखाओं से पटा पड़ा था वह मुख। मानो अन्तर के आवेग ने अभिव्यक्त होकर अनेक धाराओं में बह जाने का हठ किया हो। सिर पर अधपके केशों की काट-छाँट बहुत दिन से नहीं हो पाई थी। अतएव कॉमरेड जोरावरसिंह का चेहरा कुछ और भी कड़वा हो चला था।

जोरावरसिंह ने अपना भाषण आरम्भ किया। एक अशान्त व्यक्ति शान्त स्वर में बोल रहा था। धीमी आवाज का आश्रय लेकर। लाउड-स्पीकर की सहायता से। मानो वह इस अभी-तक-अप्रयुक्त यन्त्र के लिए दिया गया किराया वसूल करना चाहता हो। उसने कहा : "साथियो ! आप लोगों ने आज अपने उन नेताओं के भासण सुणे जिन्होंने बहुत बरस से आप लोगों की सेवा की है; जिन्होंने जिन्दगी की जबर्दस्त जदोजहद में आप लोगों की रहबिरी की है। मुझे मुकम्मल विसवास है के आप लोग ठण्डे दमाग़ से नेताओं की बातों पर गोर फरमाएँगे। और जलद-से-जलद उन लोगों को आगा कर देंगे के आप लोगों का आखरी फैसला क्या है।

"आप लोगों को सही रास्ता दिखलाणा नेताओं का फरज है। उस रास्ते पर चलणा आप लोगों का फरज। इस मामले के मुतलक नेताओं को और कुछ नहीं कहणा। आप लोग अगर हड़ताल का फैसला करेंगे तो नेता लोग आपके अगुआ रहकर हड़ताल को कामयाब बणाणे की कोसस करेंगे। और अगर आप लोग फैसला करेंगे के हड़ताल नहीं होणी चाहिए तो नेता लोग सिर झुकाकर आपका फैसला मंजर कर लेंगे। इस बारे में मुझे आप लोगों से और कुछ नहीं कहणा।

"लेकिन आप लोगों की होसला इफजाई करणा अभी बाकी है। और वो फरज आज एक नई सकसियत पूरा करेंगी। वो सकसियत कोण हैं? कामरेड कमला सरमा आज इस सभा की परधान हैं। वो आपकी यूनियन की परधान भी हैं। उणके बारे में मैं आपको क्या बतलाऊँ? आप सब लोग बरसों से उणको पिछाणते हैं। लेकिन उनकी सुपतरी कामरेड रोजा सरमा के नाम से सायद आप लोग वाकफ नहीं। वाकफ होंगे भी कैसे? कामरेड रोजा सरमा आज पहली बार आपकी बस्ती में तसरीफ लाई हैं। और वो कई बरस से इस मुलक में भी मोजूद नहीं थीं।

"कामरेड रोजा सरमा ने आज से छः-सात साल पहले यहाँ के मिसन कालेज से बी० ए० पास किया था। फिर वो फोरण ही बिलायत चली गई। ऊँचे दरजे की तालीम हासल करणे के लिए। अब वो बिलायत में अपनी तालीम पूरी करके वापस आई हैं। और वो आप लोगों की सेवा में जिन्दगी बिताणे के लिए बेचैण हैं।

"कामरेड रोजा सरमा ने पाँच बरस तक बिलायत में रहकर सिरफ तालीम ही हासल नहीं की। उन्होंने आँखें खोलकर सारे यूरप को देखा भी है। वे बरतानिया, फिराँस, जरमणी और यूरप के दीगर मुलकों में घूमी हैं। और उन्होंने यूरप के पूरब में रोसणी फैलाते हुए सोवियट रूस को भी अपणी आँखों से देखा है। उनके पास आप लोगों के लिए एक नया पगाम है। इसलिए आप लोग उनकी बातों को बड़े गोर से सुणें। अब मैं कामरेड रोजा सरमा और आप लोगों के दरम्याण खड़ा रहणा नहीं चाहता।"

जोरावरसिंह बैठने लगा तो सभा में फिर वही हुंकार हुआ। और मज़दूरों के अगणित कण्ठों ने फिर वही प्रत्युत्तर प्रस्तुत किया। तब प्रधान ने उठकर कॉमरेड रोज़ा शर्मा का नाम घोषित कर दिया। रोज़ा प्रधान के पास दूसरी कुरसी पर बैठी थी। वह उठकर खड़ी हो गई और आगे बढ़कर लाउड-स्पीकर के आयतन को निहारने लगी। लाउड-स्पीकर उसके अपने आयतन से किञ्चित् ऊँचा था।

लाउड-स्पीकर के पास बैठे मिस्तरी ने लाउड-स्पीकर को नीचा करने में मन लगाया। और मज़दूर लोग मुँह बाए कॉमरेड रोजा शर्मा की सौन्दर्यश्री निहारने लगे। अत्यधिक आकर्षक थी वह सौन्दर्यश्री। वैसी सौन्दर्यश्री इसके पूर्व इस मजदूर-बस्ती में कभी दिखलाई ही नहीं दी थी। रोज़ा जैसी वेश-भूषा और शृङ्गार-सज्जा तो मज़दूरों ने सिनेमा में ही देखी थी।

रोज़ा का कमनीय, कोमल और गौरवर्ण मुखड़ा, अंग्रेजी ढंग से सँवारी हुई ज़ुल्फों के आबनूसी फ्रेम में, जड़े हुए फोटो के समान निखर उठा था। नुकीली नाक पर गहरे काले रँग के शीशों से सजे गॉगल्ज न्यस्त थे। मानो वे उसके कमलनयनों को कुदृष्टि से बचाने की स्पृहा में स्वयं काले पड़ गए हों। सुडौल शरीर पर दो उन्नत उरोज ऊर्ध्वायमान थे। ऊँचे दाम की ऊन से बुने हुए चित्र-विचित्र पुलोवर में से ऊर्ध्वायमान। और पुलोवर के नीचे हिलोरें ले रही थी हैण्डलूम-हाउस से ख़रीदी हुई बहूमूल्य सिल्क की सुरमई साड़ी।

लाउड-स्पीकर ठीक होते ही रोज़ा ने अपना दाँयाँ हाथ उठाकर उसका स्पर्श किया। और दूसरे क्षण उसकी साड़ी का आँचल उसके स्कन्ध से स्खलित हो गया। आँचल को सँभालने की चेष्टा में रोजा ने अपना सिर स्पन्दित किया तो उसकी कृष्णकाय, कुञ्चिताग्र केशराशि अन्तरिक्ष में आन्दोलित हो उठी। तब रोज़ा ने अपने करपल्लव से उस केशराशि को कुसुमित कर दिया।

मज़दूरों के मानस एक अभूतपूर्व आह्लाद से आपूरित हो चुके थे।

उनको सहसा ऐसा आभास हो रहा था कि वे कोई सपना देख रहे हैं। कहाँ तो नरक को भी निन्दित करने वाली उनकी वह अस्त-व्यस्त बस्ती ! और कहाँ यह नन्दन-कानन से सीधी उतर कर आने वाली अप्सरा !! उस क्षण में मजदूर लोग अपना सारा दुख-दर्द भूल गए।

रोज़ा के अधरोष्ठ पर एक हल्की-सी मुस्कान मुकुलित हुई। और दूसरे क्षण उसका कोकिल-कण्ठ कूक उठा। कण्ठ-स्वर में कर्कशता का किञ्चित् मात्र भी आभास नहीं था। किन्तु कण्ठ से निर्गत शब्द-राशि का आशय अवश्य कठोर था। रोज़ा मुस्का तान-तानकर कह रही थी :

"कॉमरेड्स् ! अब वो दिन चले गए जब के जनता के खून-पसीने से कमाए हुए सरमाए को अपनी अंटी में लगाकर एक मुट्ठी-भर जमींदार और साहूकार अपनी मूँछों पर ताव दिया करते थे। कॉमरेड्स ! अब वो जमाना जा चुका जब के कुछ इने-गिने जंगबाज़ एक देश की जनता को दूसरे देश की जनता से लड़ाकर खून की होली खेला करते थे। कॉम-रेड्स ! अब वो वक्त बीत चुका जब के योरप और अमेरिका की कुछ सफेद साम्राज्यवादी शक्तियाँ एशिया और एफ्रिका के काले और पीले कुलियों को बूट की ठोकर से ठेलकर अपने कारखानों के लिए कच्चा माल मोहिया करने पर मजबूर किया करती थीं।

"कॉमरेड्स ! मजदूर अब जाग उठा है। कॉमरेड्स ! किसान अब करवटें बदल रहा है। देश-देश की जनता ने अपनी आज़ादी के लिए जी-जान लड़ाकर, संसार की शान्ति के लिए जंग करके, साम्राज्यवाद का सिर कुचल दिया है, जंगबाज़ों का जनाज़ा निकाल दिया है। आज एशिया आज़ादी का ऐलान कर चुका है। आज एफ्रिका अँगड़ाइयाँ ले रहा है।

"कॉमरेड्स ! आज किस साम्राज्यवादी शक्ति में इतना साहस है के वो एशिया और एफ्रिका की ओर एक आँख उठाकर भी देख ले ? आज किस जंगबाज़ में जीवट है के वो एशिया और एफ्रिका के एक चप्पे पर भी पाँव जमा सके ? एशिया और एफ्रिका की जागृत जनता में साम्राज्यवादी की आँख फोड़ डालने का साहस है। एशिया और एफ्रिका

का किसान और मजदूर जंगबाज़ को ज़िबाह् कर डालने के लिए कटिबद्ध है। यह बात आप लोगो को अपने दिलों पर नक़्श कर लेनी चाहिए।

"और, कॉमरेड्स् ! नक़्श कर लेनी चाहिए एक और बात। कौनसी है वो बात ? सोवियत् यूनियन के सामर्थ्य की बात। आप लोगों को याद रखना चाहिए के मज़दूरों की इस जवाँमर्द जमाअत की रहनुमा सोवियत् यूनियन है—वो सोवियत् यूनियन जो किसानों के इस तूफानी कारवाँ को मंज़िले-मक़्सूद पर ले जाने के लिए मुस्तैद है; वो सोवियत् यूनियन जो एशिया और एफ्रिका की इस जागृत जनता की ज़िन्दादिल दोस्त है; वो सोवियत् यूनियन जो आज़ादी और अमन के क़िले की पासबाँ है।

"कॉमरेड्स ! सोवियत् यूनियन के गुज़श्ता कारनामों से आप लोग बख़ूबी वाक़िफ़ हैं। सोवियत् यूनियन ने अकेले ही हिटलर और मुसोलिनी जैसे दरिंदों के दाँत तोड़कर दुनिया को एक खौफ़नाक ख़तरे से नजात बख़्शी। सोवियत् यूनियन ने अकेले ही चीन और एशिया के दूसरे देशों को टोजो के जापानी जानवरों के जबाड़े से निकाल बाहर किया। सोवियत् यूनियन ने बर्तानियाँ, फ्रांस और हालैण्ड के साम्राज्यवादियों को एशिया से नौ-दो-ग्यारह हो जाने पर मजबूर कर दिया। और अब सोवियत् यूनियन एफ्रिका की आज़ादी के लिए कमर कसकर मुस्तैद है।

"और, कामरेड्स् ! आप लोग तो जानते हैं के सोवियत् यूनियन मज़दूरों का अपना मुल्क है, सोवियत् यूनियन किसानों का अपना मुल्क है। सोवियत् यूनियन मज़दूर और किसानों की मदरलैण्ड यानी मातृभूमि है, फादरलैण्ड यानी पितृभूमि है। कैसा है वो देश ? वो देश जहाँ....

रोज़ा अपनी बात पूरी नहीं कर पाई। मैदान के उस कोने से किसी का गगनभेदी किन्तु सुरताल से सधा हुआ गायन गूँज उठा। लाउड-स्पीकर की सारी शक्ति को परास्त करके किसी का मधुर स्वर मुखरित था :

जहनवाँ से आयो, अमर वाही देसवा रे...

अमर वाही देसवा रे....

रोज़ा की वक्तृता का धाराप्रवाह सहसा प्रतिहत हो गया। उसने

मुख मोड़कर तथा आँखें उठाकर उस ओर दृष्टिपात किया जिस ओर से वह गायन गूँज रहा था। मज़दूर-मण्डल भी मन्त्रमुग्ध होकर उसी ओर देख रहा था। मञ्च पर उपासीन नेता लोग भी। उन सबने एक-साथ देखा कि मैदान के तट पर खड़े हुए एक साधु बाबा चिमटा बजा-बजाकर भजन गा रहे हैं। उनकी आँखें मुँदी हुई थीं। उनके मुख पर मस्ती छलक रही थी। और उनका सुडौल शरीर सुरताल के साथ-साथ लहरा रहा था।

साधु बाबा की देह पर केवल एक काषायवस्त्र था। घुटनों के नीचे तक लटका हुआ, मोटे खद्दर का एक लम्बा-सा कुरता। उनकी उच्च-काय तथा हृष्ट-पुष्ट देह सरदी की ठिठुरती हुई सांझ का तीव्र तिरस्कार कर रही थी। मूँछ और दाढ़ी से विहीन मुख गौरवर्ण की गहन गरिमा से गर्वित था। और उनका मुण्डित मस्तक भजन की स्वरभङ्गी के साथ-साथ स्पन्दित होकर उनके मानस में भरी मुदिता को अनेक मुद्राओं में मुखरित कर रहा था।

साधु बाबा की स्वर-ध्वनि और ऊँची उठी :

पौन ना, पाणी ना, धरती आकासवा रे...

जहनवाँ से आयो....

रोज़ा की मुखश्री रोष से रुद्ध हो उठी। और उसने अपने दाहिने हाथ का करकमल ऊपर उठा दिया। निषेधात्मक मुद्रा में मुकुलित कर-कमल। वह साधु बाबा को संकेत कर रही थी कि वे मौन हो जाएँ और उसकी वक्तृता के बीच में विघ्न उपस्थित न करें।

किन्तु साधु बाबा ने रोज़ा के करकमल को नहीं देखा। वे तो आँखें मूँदकर अपनी स्वर-लहरी को लालित करने में लीन थे :

ब्राह्मण ना, छत्री ना, सूदर ना, बैसवा रे...

अमर वाही देसवा रे...

रोज़ा का करकमल केवल मजदूर-मण्डल को ही मुग्ध करने में सफल-मनोरथ हुआ। उस करकमल की किसलय-कोमल अँगुलियाँ, अंशुमालि की

अन्तिम अरुणिमा में आरक्त होकर, नव-प्रफुल्लित किंशुक के कुसुम-कोरकों-सी दमक उठी थीं। कनॉटप्लेस के सबसे स्मार्ट ब्यूटी-सैलून में मैनीक्योर्ड नखों की छटा, दिनकर के विकीर्ण होते हुए किरण-जाल से कुंकुमित होकर, रंग-बिरंगी फुलझड़ियों-सी जल रही थी।

तब रोज़ा ने अपने नयन-द्वय पर से गॉग्लज़ का आवरण उतार लिया। उन दीर्घपक्ष्म और निर्निमेष नेत्रों से असहिष्णुता के साथ-साथ एक प्रकार की असमर्थता भी व्यक्त हो रही थी। मृगनयनी की उस मधुर मुद्रा को देखकर मज़दूर-मण्डल विभोर हो गया। किन्तु साधु बाबा ने उस लावण्य को भी लक्ष्य नहीं किया। वे लयताल के उन्मेष में उन्मत्त होकर गा रहे थे :

मुगल पठाण ना, सैयद ना सेखवा रे....

जहनवाँ से आयो...

जहनवाँ से आयो, अमर वाही देसवा रे...

और अन्ततः रोज़ा भी मन्त्र-मुग्ध-सी होकर मौन खड़ी रह गई। साधु बाबा के स्वर-विन्यास में न जाने कैसा एक विलक्षण वैभव था। रोज़ा के मर्म को बींधने लगा वह स्वर-वैभव। वह भूलने लगी कि वह कहाँ है, क्यों है, और क्या कर रही है।

मज़दूर लोग तो पहिले ही साधु बाबा के स्वर-वैभव पर विमुग्ध हो चुके थे। मञ्च पर खड़ी रोज़ा को किंकर्तव्य-विमूढ़ देखकर उनमें से अनेक लोग उठ खड़े हुए और दल-पर-दल साधु बाबा की ओर चल पड़े।

जोरावरसिंह ने खड़े होकर मज़दूरों को रोकने का प्रयास किया। उसका अनुरोध मानकर कुछ मजदूर पुनरेण अपने स्थान पर बैठ गए। किन्तु उनका ध्यान भी, मञ्च की ओर न होकर, मैदान के तीर की ओर ही था। और उनके अधिकांश साथी तो मैदान पार करके साधु बाबा के चारों ओर मण्डलाकार खड़े हो चुके थे।

सभा को विसर्जितप्राय देखकर रोज़ा अपनी कुरसी पर बैठ गई। सभा की प्रधान तथा अन्यान्य नेतागण अभी भी मैदान के उस ओर बद्धदृष्टि थे। रोज़ा ने कॉमरेड कमला शर्मा का स्कन्ध छूकर कहा : "ममी ! हिन्दुस्तान

की राजधानी के मजदूरों को क्या मीटिंग करने की भी तमीज नहीं ? आप तो कहती थीं के इस कारखाने के मजदूर सबसे ज्यादह ऐडवान्स्ड हैं !! लेकिन ये तो इतना भी नहीं जानते के इनका दोस्त कौन है और दुश्मन...

जोरावरसिंह बीच में ही बोल उठा। उसने कमला शर्मा को सम्बोधित किया : "कामरेड सरमा ! आप हुकम दीजिए। मैं अभी जाकर इस मुस्टण्डे के सिर पर दो धौल जमा देता हूँ। यह फोरण अपने रास्ते चला जाएगा, और हम लोग...

कमला शर्मा बोली : "पागल हो गए हो, जोरावर ! वैसी हरकत करने का वक्त क्या अभी आया है ?"

'वक्त तो आ गया, कामरेड सरमा !"

"नहीं, जोरावर ! अभी वो वक्त आने में देर है।"

"क्या देर है ? आप याद रखिए के ये १९६१ का सन् ईस्वी है। १९६१ का फरवरी महीना।"

"तो क्या हुआ ?"

"हिन्दुस्ताण को आजाद हुए चौदह बरस हो गए। सोसलिजम का नारा उठे भी सात बरस बीत गए। अब भी, और इस दिल्ली सहर में भी, अगर इन मुफतखोरों की....

कमला मुस्करा उठी। फिर वह बोली : "जोरावर ! क्या तू ने कॉम-रेड लेनिन की वह किताब पढ़ी है ?—वही जिसमें वे मजहब के मसले पर गौर फरमाते हैं ?"

जोरावरसिंह कमला का मुख ताकने लगा। कुछ-कुछ हतप्रभ-सा हो कर। किताबें पढ़ने के मामले में वह कच्चा था। वह स्पीच दे सकता था। दिल दहला देने वाली स्पीच। वह मार-पीटकर सकता था। ऐसी मार-पीट कि पुलिस के आए बिना पिटने वाले का पिण्ड ही नहीं छूट पाए। किन्तु किताबों का नाम सुनकर ही उसका कलेजा धक् से रह जाता था। न जाने ये नेता लोग मोटी-मोटी पोथियों में क्योंकर सिर खपाए जाते थे ?

कमला ने कहा : "नहीं पढ़ी ना ? तभी तू ऐसी बेतुकी बातें कर रहा

है।"

जोरावरसिंह ने नरम पड़कर पूछा : "कामरेड लेणिन इस मामले में क्या मशोरा देते हैं, कामरेड सरमा !"

"लेनिन ने साफ लफ्जों में लिखा है के मजहब बहुत ही पेचीदा मसला है और किसी भी कम्यूनिस्ट पार्टी को उसके बारे में बहुत ही सँभलकर कोई क़दम उठाना चाहिए। जमींदारी और सरमाएदारी के जुल्मों से दबकर सीधी-सादी जनता सैकड़ों, नहीं नहीं, हजारों बरस से मजहब की अफीम निगलती आई है। जनता की वो नशा करने की आदत एक दिन में तो नहीं छूट सकती। वो आदत तो तभी छूटेगी जब के मजदूर तबक़ा इन्क़लाब करके अपनी डिक्टेटरशिप क़ायम कर लेगा, और उस अफीम का व्योपार करने वालों को नेस्तो-नाबूद कर देगा। इन्कलाब के पहले तो पार्टी को भूलकर भी मजहब से नहीं उलझना चाहिए। पार्टी का फर्ज है के मजहब से कन्नी काटकर ही इन्क़लाब करने का काम पूरा करे। इन्कलाब के बाद इन मुस्टण्डों और मुफ्तखोरों से नजात पाना, इन मुल्ला-मौलवियों और पण्डत-पादरियों से पिण्ड छुड़ाना बहुत आसान काम हो जाएगा।"

"तब तक ये लोग हमारे अन्दोलण में दस्तमदाजी करते रहें, और हम लोग चुप रहें ?"

"नहीं, चुप रहने को कौन कहता है, जोरावर ! चुप तो हम किसी भी मसले पर नहीं रहते। इन्क़लाब से पहले मजहब के मामले में एक ही पॉलिसी कारगर है—मजहबी लोगों को पॉलिटिक्स से दूर रखना। इसीलिए पार्टी का परचार है के मजहब इन्सान का जाती मामला है, उसको पब्लिक लाइफ में नहीं लाना चाहिए।"

"मभबी लोग क्या इतना-भर कह देणे से मान जाएँगे ?"

"उनमें से ज्यादातर तो मान जाते हैं। वो तो खुद कहते है के खुदा के बन्दे को दुनियादारी से क्या सरोकार ? दस पाँच सिरफिरे फिर भी नहीं मानते। उनका इलाज करना पार्टी जानती है। पार्टी उनकी मुख़ालफत उन्हीं के फिरक़े के और लोगों से करवाती है।"

"इस तरह तो वो और लोग मजबूत हो जाते हैं।"

"अपाहज अब और क्या मज़बूत होगा, जोरावर ! जिन लोगों ने असूलन यह मान लिया के मजहब को दुनिया के धन्धों में दिलचस्पी नहीं लेनी चाहिए, वो तो मुरदा हो चुके। उनकी लाश नचाकर पार्टी का कोई काम अगर किसी दिन निकलता है तो शको-शुबा की गुंजायश नहीं रहनी चाहिए।"

किन्तु जोरावरसिंह को सन्तोष नहीं हुआ। वह कमला की बात का उत्तर तुरन्त नहीं दे पाया। फिर भी उसके मुख का भाव बतला रहा था कि वह किसी उत्तर की खोज में है। कमला ने रोज़ा से कहा : "रोजी ! चल, अब घर चलते हैं। यहाँ का काम तो एक तरह से ख़त्म हो गया।"

रोजा बोली : "ममी ! चलिए, ज़रा उस साधू को भी देखने चलें।"

"साधू का क्या देखेगी, पगली ! ये तो गली-गली में फिरते हैं। तूने क्या कोई साधू नहीं देखा ?"

"फिर भी, ममी ! इस साधू को मैं एक बार ज़रूर देखूंगी।"

"क्यों, इसमें क्या ख़ास बात है ?"

"मैं बतला नहीं सकती। लेकिन मेरा दिल कहता है के यह मामूली साधू नहीं है।"

"तो फिर देख ले। तेरा वहम दूर हो जाएगा।"

कमला और रोजा उठ खड़ी हुईं। मञ्च पर बैठे अन्यान्य नेता-गण भी उठ खड़े हुए। तब सहसा ज़ोरावरसिंह ने कहा : "कामरेड सरमा ! कामरेड लेणिन ने तो असूल की बात कही थी। और उस असूल से भला कौण मुतफक नहीं होगा ? लेकन असूल पर अमल करते वकत हालात पर भी तो गोर कर लेना चाहिए।"

कमला ने पूछा : "कौन से हालात पर ?"

"आज के हिन्दुस्ताण में मझब का इतना जोर नहीं है जितना लेणिन के वकत रूस में था। आखर ये तो आप जाणती हैं के जवाहरलालजी मझब को कैसी-कैसी खरी-खोटी सुनाते रहते हैं। और जणता बराबर उणकी

बात पर तालियाँ पीट-पीटकर वाह्-वाह् करती-रहती है।"

"जवाहरलाल की बात छोड़ो, जोरावर ! वह तो बहुरूपिया है। मज़-हब को गाली भी देता है। और कुम्भ के मेले में जनेऊ पहनकर सिर पर गंगाजल भी छिड़क लेता है। गांधी और बुद्ध को महापुरस कहने वाला आदमी मज़हब का हिमायती ही है। सैकण्डरी बातों को लेकर मज़हब पर हमला करने से जनता नहीं चिढ़ती।"

"आपकी बात का जबाब मैं नहीं दे सकता, कामरेड सरमा ! लेकन मेरा दिल गवाही नहीं देता। मेरा दिल तो यही कहता है के मोजूदा हिन्दु-स्ताण में मभब का परभाव मिट चुका।"

कमला हँसने लगी। फिर वह मैदान के उस ओर अँगुली उठाकर बोली : "तभी तो तुम्हारी यूनियन के सारे मज़दूर अपने लीडरों का अपमान करके उस गिरहकट के गिर्द मण्डरा रहे हैं !! ज़रा उधर देख लो आँखें उठाकर। हाथ कंगन को आरसी क्या, ज़ोरावर !" .

जोरावरसिंह निरुत्तर हो गया। उसने एक बार मैदान के उस पार दृष्टिपात करके आँखें नीची कर लीं। होंठ काट रहा था जोरावरसिंह। मञ्च पर बैठे नेताओं को परस्पर वार्तालाप करते देखकर रहे-सहे मज़दूर भी साधु बाबा के निकट जा पहुँचे थे। अब मैदान के बीचोंबीच केवल नेता-गण ही रह गए थे। और वे सब मज़दूर उस यूनियन के सदस्य थे जो सारे देश की यूनियनों में अत्यधिक प्रगतिशील मानी जाती थी ! उस यूनियन के सदस्य जिसमें कम्यूनिस्ट पार्टी के पन्द्रह होल-टाइमर बीस बरस से खून-पसीना एक कर रहे थे !!

जोरावरसिंह के मुख से एक शब्द भी और नहीं निकला। लाज के मारे वह धरती में धँसा जा रहा था। विशेषकर इसलिए कि आज कॉमरेड रोज़ा शर्मा ने उसकी पराजय को अपनी आँखों से देख लिया था। क्या कहेंगी कॉमरेड रोज़ा शर्मा ! यही कि जोरावरसिंह की यूनियन निकम्मी है ! यही कि जोरावरसिंह निखट्टू है !! जोरावरसिंह को पसीना छूट पड़ा। वह कॉमरेड रोज़ा शर्मा को देखते ही उसका शैदा हो गया था। और उसको

आशा थी कि....

रोज़ा अपनी ममी का हाथ पकड़कर अग्रसर हो गई। दूसरे नेतागण भी उनके पीछे चल पड़े। जोरावरसिंह लपककर मज़दूरों की भीड़ के पास जा पहुँचा। ज़ोर-ज़ोर से डाँट-फटकार करके मज़दूरों को हटाने लगा वह। रोज़ा के लिए रास्ता साफ़ करने के आशय से। मज़दूरों ने रास्ता दे दिया। और रोज़ा, कमला तथा दूसरे नेतागण उस मण्डल-व्यूह में प्रवेश पा गए।

कई एक मज़दूर लोग साधु बाबा के पास बैठकर बातें कर रहे थे। यूनियन के नेताओं को उस ओर आते देखकर वे मौन हो गए। साधु बाबा ने दृष्टि उन्नत करके एक बार कॉमरेड कमला शर्मा को देखा। फिर कमला के पार्श्व में खड़ी हुई रोज़ा को। और उनके नयन सहसा आर्द्र-से हो गए। वात्सल्य-सा छलकने लगा उन नयनों में। उस वात्सल्य ने रोज़ा के अन्तरतम मर्म का स्पर्श कर लिया।

किन्तु कमला के नयनों से साधु बाबा के नयन मिलते ही वह आपाद-मस्तक कम्पायमान हो उठी। मानो उसके मानस पर कोई कठोर आघात हुआ हो। और फिर उसके मुख से अनायास ही निकल गया : "तुम!!"

कमला नेत्र विस्फारित करके, मुँह बाए खड़ी थी। साधु बाबा ने फिर उसकी ओर देखा। स्निग्ध दृष्टि से। और तब वे शान्त स्वर में बोले : "हाँ, कमला! मैं ही हूँ। तुमने भूल नहीं की।"

कमला के मुख से एक शब्द भी नहीं निकला। किन्तु उस मुख पर सहसा एक वैवर्ण्य विस्तार पाने लगा। मानो उस मुख की शिराओं का समूचा रक्त सिमटकर कहीं अन्यत्र प्रवास करने के लिए बद्धप्रतिज्ञ हो चला हो।

ममी की यह दशा देखकर रोज़ा ने अपना शिर स्पन्दित किया। मानो वह नींद से जागी हो। उस चेष्टा के फलस्वरूप उसके बॉण्ड कवरीपाश के कुञ्चित केशाग्र काले सर्पों के समान अन्तरिक्ष में स्फूर्त हो उठे। और उस कवरीपाश से विकीर्ण होते हुए लैवण्डर के सौरभ-सार ने वहाँ का वातास विदिग्ध कर दिया। मज़दूर-मण्डल एक क्षण कमला की विजड़ित व्यग्रता

को लक्ष्य कर रहा था, और एक क्षण रोज़ा के लोल लावण्य को।

रोज़ा ने कमला से पूछा : "क्या बात है, ममी ? आपकी क्या तबियत..."

किन्तु कमला ने उत्तर नहीं दिया। वह रोजा का हाथ पकड़ कर उसे भीड़ के बाहर की ओर खींच ले चली। और फिर वह एक क्षण भी रुके बिना मैदान पार कर गई। मैदान के उस छोर पर उसकी कार खड़ी थी—बीच ह्वाइट और एपल ग्रीन के दोहरे रंग से पुती हुई स्टैण्डर्ड डिलक्स कार। एकदम नई। जोरावरसिंह माँ-बेटी का अनुसरण कर रहा था। अन्यान्य मज़दूर नेता भी। कुछ इने-गिने मज़दूर भी अपनी प्रधान को विदा देने के लिए उस ओर बढ़ चले। किन्तु इससे पूर्व कि कोई भी उसके निकट पहुँच पाता, कमला ने रोज़ा को बाएँ ओर की अगली सीट में ढकेल दिया। और फिर स्वयं ड्राइवर की सीट पर बैठकर उसने कार स्टार्ट कर दी। कमला के पाँव का भरपूर भार एक्सैलरेटर पर पड़ा। और दूसरे क्षण कार वहाँ से हवा हो गई।

रोज़ा ने पूछा : "इस साधू को आप पहचानती हैं, ममी !"

कमला ने उत्तर नहीं दिया। वह इलैक्ट्रिक हॉर्न को अपनी कलाई से बार-बार दबाकर रास्ता चलने वालों से ऐलान कर रही थी : "मलिका मुअज्जमा की सवारी आ रही है! जान की अमान चाहते हो तो रास्ते से हट जाओ !!"

रोज़ा ने देखा कि कार कई बार एक्सीडैण्ट करते-करते बची है। और समय होता तो वह स्वयं कार चलाती। उसके होते कमला कभी ड्राइवर की सीट पर नहीं बैठती थी। किन्तु आज न जाने ममी को क्या हो गया था ! साधू बाबा को एक आँख देखने-भर से !!

कार एक सपाटे में कमलानगर और जवाहरनगर को पार कर गई। रिज के प्रशस्त पथ पर आकर कमला ने कार की स्पीड और भी बढ़ा दी। रोजा से नहीं रहा गया। वह बोल पड़ी : "इतनी तेज़ नहीं, ममी ! यह छोटी कार है।"

किन्तु कमला ने उसकी बात पर ध्यान ही नहीं दिया। न ही कार की स्पीड को कम किया। बस एक कर्कश दृष्टि से एक बार रोज़ा की ओर देख-भर लिया। रोज़ा मुँह फेरकर बाहर का दृश्य निहारने लगी। अलीपुर रोड पर घिरती स्याही में खड़ी वृक्ष-पाँति बहुत परवश-सी प्रतीत हो रही थी। वैसी ही परवश जैसी कि ममी की कार में कैदी की नाईं बैठी हुई वह स्वयं। रोज़ा की आँखों में आँसू उमड़ आए। न जाने क्यों ?

हार्डिंग एवेन्यू पार हुआ चाहती थी। रोज़ा ने एक बार फिर साहस करके पूछा : "ममी ! कौन था वो ?"

कमला ने अनमने-से स्वर में पूछा : "वो कौन ?"

"वही....साधू...

कमला गुर्रा उठी : "शट...अप ! !"

ममी के स्वर में भरी कर्कशता ने रोज़ा का कण्ठ रुद्ध कर दिया। वह फिर मुँह फेरकर बाहर की ओर देखने लगी। इण्डिया गेट के मैदानों पर बिखरती हुई भीड़ की ओर। अवशिष्ट रहे मार्ग में उन दोनों में से किसी ने भी मुख नहीं खोला।

कार गोल्फ लिंक में आकर रुकी। एक नए ढंग की चित्र-विचित्र कोठी के सामने। सीट से बाहर कूदकर कमला ने कार का दरवाज़ा इतने ज़ोर से बन्द किया कि शीत से सन्न वातास भी भयभीत-सा होकर भाँय-भाँय कर उठा। फिर अपने हाथ की चाभी कार में बैठी रोज़ा की ओर फेंक कर वह बोली : "गाड़ी को लॉक करती आइयो, रोज़ी !"

रोज़ा कार से निकली। पिछली ओर के दोनों दरवाज़ों के शीशे पहिले ही चढ़े हुए थे। उनको खींचकर वह समझ गई कि दरवाजे भीतर से लॉक्ड हैं। तब उसने आगे के दोनों दरवाज़ों के शीशे चढ़ाकर लॉक लगा दिया। और वह हौले-हौले चलकर कोठी में घुस गई।

ड्राइंग रूम में ममी नहीं थी। टेलीफोन भी नहीं था। रोज़ा ने साँस रोक कर सुना। ममी के बैडरूम से बोलने की आवाज़ आ रही थी। ममी टेलीफोन को उठाकर भीतर ले गई होगी। उसके बैडरूम में दूसरा स्विच

था। ममी को जब-जब कोई ज़रूरी बात करनी होती थी तो वह ऐसा ही किया करती थी।

रोज़ा ने बैडरूम के दरवाज़े पर जाकर भीतर झाँका। डरते-डरते। कमला टेलीफोन को कान पर लगाकर बक-झक कर रही थी। और आवेश के कारण इतस्ततः टहल भी रही थी। सहसा उसकी दृष्टि रोज़ा पर जा पड़ी। और वह टेलीफोन के माउथपीस पर हथेली सटाकर चीत्कार कर उठी : "यू...ऊ—गैट आउट !!!"

रोज़ा सहमकर पीछे हट गई। और फिर वह उलटे पाँव भागकर अपने बैडरूम में जा पहुँची। पलंग पर औंधे मुँह पछाड़ खाकर सिसकने लगी रोज़ा।

: २ :

एक आधुनिक ढंग से सजा हुआ ऑफिस-रूम। साउण्ड प्रूफ और एयरकण्डीशण्ड। डैस्क पर रखी हुई समस्त स्टेशनरी अमेरिका से आयात की गई है। ऑफिस को आलोकित करने वाले फिक्शचर्ज़ भी। डैस्क के पीछे की दीवार पर टंगे क्लॉक में साढ़े सात बजा चाहते हैं। साँझ के साढ़े सात।

ऑफिस के समूचे फर्श पर बिछे हुए बहुमूल्य काश्मीरी कालीन पर इतस्ततः चहलकदमी करने वाले पुरुष ने डैस्क पर बैठी स्टैनो-सैक्रेटरी को डिक्टेशन दी। अंग्रेजी में। वाक्य-विन्यास विकृत था। उच्चारण भी अशुद्ध। किन्तु स्टैनो बड़ी श्रद्धापूर्वक उस कर्णामृत का पान करके अपनी पैन्सिल से उसका लिपिकरण कर रही थी।

पुरुष कह रहे थे : "मैं आजीवन अपने प्रधान मन्त्री का पुजारी रहा हूँ। इसलिए नहीं कि वे मोतीलाल नेहरू-जैसे महापुरुष के पुत्र हैं। इसलिए भी नहीं कि वे सुन्दर, सुशिक्षित और सुशील हैं। इसलिए भी नहीं कि वे महात्मा गांधी के मनोनीत उत्तराधिकारी हैं। और इसलिए भी नहीं कि वे राष्ट्रीय आन्दोलन के अन्यतम नेता रहे और स्वाधीनता आने पर प्रधान मन्त्री बने। उनके प्रति मेरी श्रद्धा का एक ही कारण

है—सोशलिज़म के प्रति उनकी अटूट श्रद्धा ।

"मैं स्वयं पूँजीपति हूँ । किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि मैं सोशलिज़म के सौन्दर्य का साक्षात्कार नहीं कर सकता । सोवियत् रूस तथा लाल चीन की यात्रा करने के पूर्व भी मैं जानता था कि सोशलिज़म के सिवाय संसार की समस्याओं का कोई समाधान ही नहीं । किन्तु उन महान् देशों का अपनी इन आँखों से दर्शन कर लेने के उपरान्त तो मुझे कोई संशय ही नहीं रह गया कि स्वर्ग का द्वार किस ओर है । अतएव सोशलिजम को लेकर मुझसे वादविवाद करना व्यर्थ है । सोशलिज़म के प्रति मेरे मानस में कोई संशय न किसी दिन रहा है, न रहेगा ।

"और सोशलिज़म का विरोध करने के सिवाय आपकी स्वतन्त्र पार्टी के पास कोई और सिद्धान्त ही नहीं । इसलिए मैं स्वतन्त्र पार्टी में सम्मिलित नहीं हो सकता । मैंने आजीवन राष्ट्रीय काँग्रेस के माध्यम से स्वदेश की सेवा की है । अब अपनी इस वृद्धावस्था में क्या मैं राष्ट्रीय काँग्रेस को दगा दे दूँ ?

"अतएव, मिस्टर मसानी ! मैं क्षमा चाहता हूँ । ऑल इण्डिया मैनूफैक्चरर्ज ऐसोसिएशन के सामने भी यह प्रश्न उपस्थित नहीं होना चाहिए । वह संस्था इसलिए बनी है कि कारखानेदार अपनी कठिनाइयों को सरकार के सामने रखकर सरकार की सहायता माँगे । यदि उस संस्था में किसी प्रकार की राजनीति का प्रवेश करने का प्रयास किया गया तो मैं उसका विरोध करूँगा...

यहाँ आकर उनकी वाग्धारा रुक गई । वे किंचित् चिन्तित होकर कमरे के कई चक्कर काट गए । स्टैनो अपना श्वासोच्छ्वास रोककर उनकी ओर कर्णपात किए बैठी थी । उसकी पैंसिल भी सतत् सावधान थी ।

पुरुष की आयु साठ को पार कर चुकी होगी । ठिगना कद । इकहरा गात, अचकन और चूड़ीदार में और भी सिकुड़-सा गया था । किंचित् श्यामवर्ण मुख पर दाढ़ी-मूँछ नहीं थी । नाई की कृपा के कारण । सिर के केश भी लुप्त-प्राय थे । बुढ़ापे के प्रताप से । केवल सिर के चारों ओर

श्वेत बालों की एक झालर-सी लटक रही थी। उसी को एक हाथ की हथेली से सहलाते हुए वे अपने मानस का मन्थन कर रहे थे। मर्म की कोई और बात रह गई हो तो उसे भी खोज निकालने के लिए।

किन्तु मर्म की कोई अन्य बात उन्हें नहीं मिली। तब वे स्टैनो को सम्बोधित करके बोले : "बस, मिस मलहोत्रा! इतना काफी है। चिट्ठी तुरन्त जानी चाहिए। तुम खुद जाकर डिलीवर कर आना। मिस्टर ममानी की कोठी पर।"

मिस मलहोत्रा ने पूछा : "एनी कॉपीज़, सर!"

"हाँ, कॉपी तो कई होंगी। एक कॉपी तो प्रधान मन्त्री के पास जानी चाहिए। दूसरी कांग्रेस के प्रैज़ीडेण्ट के पास। और तीसरी जिन्जर ग्रुप के सैक्रेटरी के पास। और चौथी...चौथी...

"मिस्टर क्रिश्ना मैनन के पास, सर!"

"हाँ, ज़रूर। उनके पास तो जानी ही चाहिए। प्रधान मन्त्री के बाद ....खैर जाने दो वह बात। जाओ, तुम अपना काम पूरा करो।"

मिस मलहोत्रा उठकर खड़ी हो गई। उसकी साड़ी और ब्लाउज को देखकर ही कोई यह अनुमान कर सकता था कि वह लड़की है। सिर के बाल तो उसने लड़कों की भाँति छोटे-छोटे कटवाए हुए थे। लड़कों के सिर पर बालों का फिर भी एक विशिष्ट विन्यास होता है। मिस मलहोत्रा के बाल अस्त-व्यस्त-से थे। नारी-सौन्दर्य की नवीनतम नॉवेल्टी के अनुरूप। और वह धुआँधार सिगरेट पी रही थी।

स्टैनो चली गई। पुरुष अपनी सीट पर आ बैठे। वे अपने सामने पड़े कागज़-पत्र उठाना ही चाहते थे कि टेलीफोन की घण्टी बज उठी। हाथीदाँत के समान श्वेत-वर्ण के टेलीफोन की घण्टी। पुरुष ने टेलीफोन उठाकर कहा : "यस....दिस इज़ पी० एस० गुप्ता...यस...यस....आम दि मैनेजिंग डायरेक्टर ऑफ न्यू इण्डिया कॉटन मिल्ज़....ओ यस...पुट मी ऑन टू हिम...

उस ओर से किसी प्राइवेट एक्सचेंज ऑपरेटर ने किसी विशिष्ट

व्यक्ति के लिए मिस्टर पी० एस० गुप्ता को सम्बोधित किया था। एक क्षण उपरान्त वे विशिष्ट व्यक्ति उधर से बोलने लगे। पहली बात सुन कर ही मि० गुप्ता चौंक उठे। वे अपने स्वर को ऊँचा करके बोले : "क्या कहा! मिल में हड़ताल होगी!!...नहीं...मुझे कोई खबर नहीं मिली...स्वतन्त्र पार्टी के बारे में....अभी मैंने कोई फैसला नहीं किया... सोच ही रहा हूँ...खयाल तो बहुत अच्छा है...सोशलिज़म का विरोध तो होना ही चाहिए...प्रधान मन्त्री तो पागल हैं...जी...ज़रूर...आप इसी वक्त चले आइए ना...अभी फैसला हो जाएगा...मैं गाड़ी भेज देता हूँ...दस मिनट में...आप तुरन्त चले आइए....जी...अभी लीजिए।"

टेलीफोन रखकर मिस्टर गुप्ता ने मिस मलहोत्रा को बुलाया। वह कमरे में घुसी ही थी कि मि० गुप्ता बोल उठे : "मिस मलहोत्रा! वह चिट्ठी अभी रहने दो। और देखो...मिल के मैनेजर से मेरी बात करवाओ... फौरन। और...

मिस्टर गुप्ता चुप हो गए। मिस मलहोत्रा ने कहा : "यस, मिस्टर गुप्ता! ह्वाट एल्स् ?"

"वह अभी रहने दो। पहले मैनेजर से बातें करवाओ।"

मिस मलहोत्रा चली गई। दो क्षण उपरान्त एक अन्य टेलीफोन की घण्टी बज उठी। यह काले रंग का टेलीफोन था। ऑफिस के एक्सचेंज से मिला हुआ। मिस्टर गुप्ता ने रिसीवर उठाकर पूछा : "हाँ, मैनेजर साँब! आज क्या कम्यूनिस्ट यूनियन ने कोई मीटिंग की थी?...क्या कहा? कमला ने हड़ताल की अपील की है? तो तुमने मुझको इत्तला क्यों नहीं दी...

मिस्टर गुप्ता सहसा उत्तेजित हो गए। वे स्वर को ऊँचा करके बोले : "मीटिंग को खत्म हुए दो घण्टे से ज्यादा हो गए और तुमने मुझको खबर तक नहीं दी!! शट्-अप!...जी....मैं आपके दर्शन तो रोज़ करता हूँ....जी...आपके पास यह टेलीफोन इसीलिए रखवाया है के आप मुझको किसी भी खास बात की खबर फौरन दे दें...लेकिन आप

शायद...रहने दो...मैं कुछ सुनने के लिए तैयार नहीं...नहीं, नहीं इस वक्त मुझको फ़ुरसत नहीं है...नहीं, नहीं, तुम्हारा एक्स्प्लैनेशन कल सुनूँगा। नहीं, नहीं..."

मिस्टर गुप्ता ने टेलीफोन पटक दिया। फिर उन्होंने मिस मलहोत्रा को बुलाकर आदेश दिया : "मिस्टर मसानी की कोठी पर जाओ। इसी वक्त। वहाँ मिस्टर कपूर हैं। उनको फौरन ले आओ। दस मिनट से ज्यादह नहीं लगने चाहिएँ। मेरी कैडीलाक ले जाओ। मिस्टर कपूर को फौरन मेरे पास ले आना।"

मिस मलहोत्रा "यस, सर !" कहकर कमरे के बाहर हो गई। मिस्टर गुप्ता मेज़ के कागज़ उलटने-पलटने लगे। किन्तु किसी भी काम में उनका जी नहीं लगा। वे फिर उठकर कमरे में टहलने लगे।

दस पन्द्रह मिनट बीते होंगे। मिस मलहोत्रा ने फिर कमरे में प्रवेश किया। वह बोली : "सर ! मिस्टर कपूर आ गए हैं।"

मिस्टर गुप्ता ने कहा : "उनको फौरन भीतर ले आओ।"

मिस मलहोत्रा बाहर जाने लगी। किन्तु वह ऑफिस का द्वार खोलती उसके पूर्व ही मि० गुप्ता बोल उठे : "और देखो ! किसी को कानों-कान खबर नहीं होनी चाहिए कि मि० कपूर मेरे कमरे में हैं। कोई और आदमी आए तो कह देना कि मैं बाहर गया हुआ हूँ। मैं सफेद बत्ती जला देता हूँ।"

मिस मलहोत्रा "यस, सर !" कहकर चली गई। दूसरे क्षण एक अधेड़ आयु के सज्जन ने कमरे में प्रवेश किया। वे सिर से पाँव तक अंग्रेजियत के रँग में रँगे हुए थे। उनको डैस्क के सामने कुरसी पर बैठाते हुए मिस्टर गुप्ता ने कहा : "आप चाय-कॉफी वगैरह कुछ लेंगे, मिस्टर कपूर !"

मिस्टर कपूर हँसने लगे। फिर वे बोले : "यह क्या चाय-कॉफी का टाइम है, मिस्टर गुप्ता !"

"तो कोई ड्रिंक मँगवाऊँ ?"

"आप शौक फरमाते हैं तो कोई हर्ज नहीं।"

"आप जैसे साहबान के साथ मैं भी कभी-कभी कुछ ले लेता हूँ। आखिर मुझे भी सोसाइटी में मूव करना है। इसके विना काम नहीं चलता।"

"लेकिन आपका दिल कहता रहता है के आप पाप कर रहे हैं ?"

"पुराने जमाने का आदमी हूँ ना। बचपन से यही सुनता आया था के ये सब चीजें...आप तो जानते हैं।"

"मैं सब जानता हूँ। मैं भी तो आप की तरह एक दक़ियानूसी हिन्दू घर में पैदा हुआ था। खैर...जाने दीजिए वह सब। वक़्त कम है। बातें बहुत-सी करनी हैं। सवा दस बजे के प्लेन से मिस्टर मसानी बम्बई जा रहे हैं। इसके पहिले ही कोई फैसला हो जाए तो...

मिस्टर गुप्ता ने कोई उत्तर नहीं दिया। वे चुपचाप अपनी कुरसी पर आ बैठे। फिर उन्होंने मिस मलहोत्रा को बुलाया और ह्विस्की सोडा भेज देने के लिए कह दिया।

कपूर साहब बोले : "आपने कार भेजी, इसके लिए शुक्रिया अदा करता हूँ। मैं तो पैदल चला आता। कैनिंग स्ट्रीट से कर्ज़न रोड भला कितनी दूर है।"

मिस्टर गुप्ता ने कहा : "यह तो आप तकल्लुफ कर रहे हैं, कपूर साब! मेरी कार सो आपकी कार। इसमें शुक्रिया अदा करने की कौनसी बात है ?"

"आप जैसा दरियादिल आदमी नहीं देखा, गुप्ता साब!"

"इसी दरियादिली ने तो यह दिन दिखा दिया! कमला की कितनी मदद की है मैंने। हमारी मिल में उसकी यूनियन बनी तब से लेकर आज तक। और दोनों जनरल इलेक्शन्स में भी। अब वह उस सबका सिला दे रही है। मेरी दरियादिली की दाद!"

मिस्टर गुप्ता सूखी हँसी हँसने लगे। ह्विस्की सोडा आ गया था। अपना ग्लास ऊपर उठाकर मिस्टर कपूर बोले : "टू योर हैल्थ एण्ड हैपी-

नैस...पिछली बातें भूल जाइए, गुप्ता साब ! अब तो आगे की सोचिए। यह आप जानते हैं के आपके कारखाने पर कम्यूनिस्ट यूनियन का कब्जा है। आप अगर उस यूनियन से नजात पाना चाहते हैं तो...

मिस्टर कपूर अपनी बात पूरी न करके ह्विस्की पीने लगे। मिस्टर गुप्ता ने भी दो घूँट पीकर कहा : "अभी उस दिन की बात है। यही कोई बीस-पच्चीस रोज़ हुए होंगे। कमला मुझे मिली थी। चैम्सफोर्ड क्लब में। बड़े तपाक से बातें कर रही थी। उसने तो ऐसा कोई इशारा नहीं किया कि उसकी पार्टी हमारी मिल बन्द करवाने पर तुली हुई है।"

मिस्टर कपूर बोले : "कम्यूनिस्टों की बात छोड़िए, मिस्टर गुप्ता ! कम्यूनिजम यानी कॉंस्पीरेसी। नेहरू ने भी तो महात्मा गांधी और पटेल के रहते हुए कभी नहीं कहा के वो इस मुल्क में सोशिलजम कायम करना चाहता है। फिर अचानक...आप जानते हैं।"

"हाँ, ताज्जुब तो मुझे भी बहुत हुआ। आवड़ी का रेजोल्यूशन पढ़-कर। कॉंग्रेस से मुझको यह उम्मीद हरगिज नहीं थी। जिसका दूध पीया, उसी को डसने का इरादा कर लिया कॉंग्रेस ने। आखिर हम कैपीटलिस्ट लोग जो इतना मोटा चन्दा कांग्रेस को बरस-दर-बरस देते आए थे सो क्या इसलिए के कॉंग्रेस हमारी ही जड़ खोदने लग जाए।"

"अब अफसोस करने से क्या फायदा ? कॉंग्रेस तो अपना रास्ता तय कर चुकी। अब तो आप लोगों को अपना रास्ता तय करना है। मेरा मतलब, मुल्क के सरमाएदार तबक़े को। मिस्टर मसानी वो रास्ता दिखा चुके हैं।"

"मिस्टर मसानी या राजाजी ?"

"राजाजी की बात छोड़िए। वो तो ढ़िलमिल आदमी हैं। आज कुछ, कल कुछ। उसको तो इसीलिए आगे किया गया है के मुल्क में उसका नाम बहुत है। सुतन्तर पार्टी के कर्ताधर्ता तो मिस्टर मसानी ही हैं।"

"राजाजी जब धरम-करम की बातें करते हैं तो मेरा दिल भी उनसे दूर भागता है। अपन तो भइ बिजनैस मैन हैं। बिजनैस, यू नो, इज़ बिज-

नैस। बिजनैस में धरम-वरम का पचड़ा नहीं चलता। वैसे चन्दा हम सब लोगों को देते रहते हैं। जने कौन-कौन से फण्डस् में।"

"बात ये है, मिस्टर गुप्ता! के ये देश अभी तक लकीर का फकीर है। खरी-खरी बात कहो, कोई भी नहीं सुनता। धरम-वरम का ढकोसला किए बिना यहाँ की जनता को अपने पीछे लगाना अभी तो मुश्किल है। आनेवाले जमाने की मैं नहीं कहता। तो यह बात है।"

मिस्टर गुप्ता ने कुछ नहीं कहा। वे कुछ चिन्तित-से होकर मिस्टर कपूर की ओर देखने लगे। मिस्टर कपूर ने कहा: "अब आपका क्या ख़याल है, मिस्टर गुप्ता!"

मिस्टर गुप्ता बोले: "कुछ समझ में नहीं आता।"

"बात ये है के जो डरता है सो मरता है। सरमाएदारों ने इतने दिन तक सरकार से डर-डरकर अपने इन्ट्रैस्ट की बात नहीं कहीं, और सरकार उनके सिर पर ही सवार हो गई! अब और इस तरह नहीं चल सकता। अब तो कोई कड़ा कदम उठाना पड़ेगा।"

"बात आपकी सोलहों आने सच है। लेकिन मैं अकेला चना सरकार से कैसे टक्कर ले लूँ। मेरे कारखाने में सरकार का बहुत-सा रुपया लगा हुआ है। फिर कानून भी तो सरकार के हाथ में है। और...

"रुपया तो मुल्क का है। सरकार की मिल्कियत नहीं। रहा कानून का सवाल। कानून को बदलने के लिए ही तो ये जद्दोजहद है। वरना सुतन्तर पार्टी की क्या जरूरत थी?"

"तो मेरे लिए क्या हुक्म है?"

"हुक्म तो आप कीजिए, गुप्ता साब! हम लोग तो आपके ख़ादिम हैं।"

"इस तरह एकदम से आपकी पार्टी में आने के लिए मेरा मन नहीं मानता। कहीं मैं अकेला न रह जाऊँ?"

"आप पार्टी में एकदम मत आइए। इस वक्त तो आप सिर्फ़ इतना मान लीजिए के अगर कोई आपसे पूछे के क्या आप सुतन्तर पार्टी में जाना

चाहते है तो आप इन्कार मत कीजिए।"

"उससे क्या होगा ?"

"वाह ! आप क्या कोई ऐरे-गैरे आदमी हैं ? दिल्ली के सरमाएदारों के सरताज हैं आप। एक बार यह बात फैली और फैली। यहाँ के सारे सरमाएदारों का हौसला बढ़ जाएगा। आप ऑल इण्डिया मैनूफैक्चरर्ज ऐसोसिएशन के भी खास आदमी हैं। इस अफवाह का असर ऐसोसिएशन के दीगर मैम्बरान पर बहुत गहरा पड़ेगा। फिर जब आप मुनासिब समझ तो पार्टी का फार्म भर दें।"

"कोई चन्दा-वन्दा तो नहीं देना पड़ेगा ?"

"आपका नाम ही हमारे लिए सबसे बड़ा चन्दा है। सुतन्तर पार्टी भुखमरों की पार्टी थोड़े ही है। उसके पीछे टाटा हाउस है। चन्दा आप मुनासिब समझें तब दें। इस बारे में हम कोई ज़ोर-जबर नहीं करने वाले। फिर अभी तो जनरल इलैक्शन बहुत दूर है।"

"एक बात बतलाइए, मिस्टर कपूर ! टाटा को अचानक हुआ क्या ? सारी उम्र तो वो नेहरू को सपोर्ट करते रहे। और अब....

"ये सच है के टाटा को नेहरू बहुत पसन्द था। सारी काँग्रेस में एक वही तो लीडर था जो टाटा की तरह खुद प्रोग्रैसिव था। टाटा को उससे बहुत उम्मीदें थीं। वे समझते थे के नेहरू के हाथ में बागडोर आते ही मुल्क की दक़ियानूसी दूर हो जाएगी और मुल्क प्रोग्रैस करेगा। पटेल तो पूरी तरह बिड़ला ग्रुप के हाथ में था। और बिड़ला तो आप जानते हैं....

"अच्छी तरह जानता हूँ। एक नम्बर के चोर हैं। एक तरफ तो मन्दर और धर्मशाले, और दूसरी तरफ जनता की गरदन साफ। मैं तो इस मामले में टाटा का पैरोकार रहा हूँ।"

"और टाटा कोई सोशलिजम के खिलाफ थोड़े ही हैं। मिस्टर मसानी तो खुद सोशलिस्ट रह चुके हैं। सुतन्तर पार्टी बनी तो वो इसका नाम भी रैडीकल पार्टी या ऐसा ही कुछ प्रोग्रैसिव-सा नाम रखना चाहते थे। लेकिन राजाजी और रंगा जैसे खूसट नहीं माने।"

"तो फिर सुतन्तर पार्टी का सरकार से इख्तलाफ क्या है ?"

"ज़रा-सी बात है। कहने को। लेकिन है बड़ी अहम बात। असली तौर पर। असली सवाल है इस अण्डरडैवलप्ड मुल्क का इण्डस्ट्रियलाइजेशन। टाटा तो खुद चाहते हैं के जल्द-अज़-जल्द इण्डस्ट्रियलाइजेशन हो। लेकिन इसका यह मतलब नहीं के इण्डस्ट्रियलाइजेशन के नाम पर मुल्क को सोशलिस्ट बना दिया जाए। आखिर जापान, जर्मनी, अमेरिका और ब्रिटेन भी तो इण्डस्ट्रियलाइज हुए हैं। वहाँ कौनसा सोशलिजम था ?

"नेहरूजी कहते हैं के वो पैटर्न पुराने जमाने का था। उस वक्त का जब ये इम्पीरियलिस्ट मुल्क कोलोनियल मुल्कों को लूटकर पूंजी बटोर सकते थे। हमारा मुल्क तो इम्पीरियलिस्ट नहीं। इसके पास पूंजी कहाँ से आएगी ? यहाँ तो वही करना पड़ेगा जो रूस ने किया। रूस के पास भी पूंजी नहीं थी। मुझे तो, कपूर साब ! नेहरूजी की बात बहुत-कुछ ठीक लगती है।"

"एक हद तक बात ठीक ही है। सिद्धान्त के तौर पर। लेकिन झगड़ा तो इम्पलीमैन्टेशन का है। पूंजी का भण्डार है मुल्क का किसान। उसका धन देहात से शहर में आना चाहिए, और खेत की बजाए कारखाने में लगना चाहिए। कैपीटलिस्ट भी यह बात मानता है, और सोशलिस्ट भी।"

"तो फिर झगड़ा क्या है ?"

"सोशलिस्ट चाहता है के सारे कारखाने और काम-धन्धे सरकार के हो जाएँ। कैपीटलिस्ट कहता है के कम्पीटीशन के बिना पूंजी का पूरा रस नहीं निकलता। इसलिए काम-धन्धे प्राइवेट हाथों में ही रहने चाहिएँ।"

"लेकिन यहाँ तो ज्यादातर काम-धन्धे अभी भी प्राइवेट हाथों में हैं।"

"अभी तक। सवाल तो आनेवाले जमाने का है। सरकार ऐलान कर चुकी है के पब्लिक सैक्टर बढ़ता जाएगा और प्राइवेट सैक्टर सिकुड़ता जाएगा। फिर एक दिन ऐसा आएगा के प्राइवेट सैक्टर का नाम-निशान भी नहीं रहेगा। सब-कुछ सरकार का हो जाएगा।"

"मैंने तो सुना था के सरकार सिर्फ उन्हीं लोगों का कारोबार छीनेगी

जा सरकार की मुख़ालफ़त करते हैं। हम जैसे सरकार के सपोटर्ज़ को कोई खतरा नहीं।"

"ये तो कहने की बातें हैं। चीन में क्या हुआ? पहले वहाँ कहा गया था के सरकार सरमाएदारों को कुछ नहीं कहेगी, सरमाएदार अपने काम-धन्धे खूब बढ़ाएँ, सरकार तो सिर्फ ज़मींदारों को नापैद करना चाहता है। सरमाएदारों ने सोचा, भली बात है। और एक तरह से ठीक भी सोचा। आप जानते हैं के जमींदारी मिटे बिना सरमाएदारी में सरूर नहीं आता। लेकिन सोशलिस्ट तो ज़मींदारी ज़ब्त करके ही नहीं रुकता। वह फिर सरमाएदारों पर भी हमला करता है।"

"तो क्या चीन में अब सरमाएदार नहीं हैं?"

"सबको बेदखल कर दिया गया है। जिस किसी ने चीं-चपड़ की उसी को गोली से उड़ा दिया गया।"

"ये तो बहुत बुरी बात है। सरमाएदारों के बिना कोई मुल्क एक दिन भी नहीं चल सकता। लेकिन मैंने तो सुना है के चीन रूस के नक़्शे-क़दम पर चल रहा है?"

"हाँ, हू-बहू!"

"लेकिन रूस ने तो अपने सरमाएदारों को कभी नहीं सताया।"

"ये आपने किस से सुना? वहाँ तो अब एक भी सरमाएदार नहीं है। आज चालीस बरस होने आए जब रूस ने अपने सारे सरमाएदारों का सफाया कर दिया था।"

"आपकी यह बात मैं नहीं मानूँगा, मिस्टर कपूर! मैं तो खुद देख-कर आया हूँ। मास्को की चैम्बर्ज़ ऑफ कॉमर्स ने हमारा इस्तक़बाल किया था। सरमाएदारों के बिना चैम्बर्ज़ ऑफ कॉमर्स का क्या काम?"

मिस्टर कपूर कुछ कहना चाहते थे कि मिस मलहोत्रा ने आफिस का द्वार तनिक-सा खोलकर भीतर झाँका। मिस्टर गुप्ता उसको देखकर बोले: "यस, मिस मलहोत्रा!"

मिस मलहोत्रा भीतर चली आई। और वह बोली: "सर! ए०

आई० सी०सी० के दफ्तर का फोन है। सैक्रेटरी साब आप से मिलना चाहते हैं। इसी वक्त। मैंने कह दिया के पता लगाती हूँ मिस्टर गुप्ता कहा हैं। वे लाइन पर हैं। बोलिए, क्या कहूँ?"

मिस्टर कपूर उठकर खड़े हो गए। फिर वे बोले: "अब मैं जाता हूँ, मिस्टर गुप्ता! बात तय तो हो ही चुकी। आपका और वक्त मैं नहीं लूँगा।"

मिस्टर गुप्ता ने खड़े होकर उनसे हाथ मिलाया। फिर उन्होंने मिस मलहोत्रा से कहा: "उनको कह दो के चले आएँ। स्ट्रेट अवे। जन्तर-मन्तर रोड से बोल रहे हैं तो?"

मिस मलहोत्रा ने कहा: "जी हाँ!"

मिस मलहोत्रा चली गई। मिस्टर गुप्ता उठकर मिस्टर कपूर के साथ हो लिए। मिस्टर कपूर ने कहा: "आप तशरीफ़ रखिए, मिस्टर गुप्ता!"

मिस्टर गुप्ता बोले: "चलिए, आपको गाड़ी तक छोड़ आता हूँ।"

तब वे दोनों मकान की पोर्च में आ पहुँचे। मिस्टर गुप्ता की कैडीलाक वहाँ पहिले से ही प्रस्तुत थी। ड्राइवर ने द्वार खोल दिया। मिस्टर कपूर मिस्टर गुप्ता से हाथ मिलाकर उसमें बैठ गए। तब मिस्टर गुप्ता ने झुककर धीमे स्वर में उनसे कहा: "देखिए, मिस्टर कपूर! अभी यह बात हम दोनों तक ही रहे। किसीसे ज़िक्र मत कीजिएगा।"

मिस्टर कपूर ने पूछा: "मिस्टर मसानी पूछें तो क्या कहूँ?"

"कह दीजिएगा कि नौ-साढ़े नौ बजे तक मैं सोच-विचार कर टेली-फोन करूँगा।"

"जैसी आपकी मरज़ी। लेकिन भूलिए मत के आपका फैसला सुनकर ही मिस्टर मसानी बम्बई जाना चाहते हैं। वहाँ पार्टी के लीडरान की बहुत इम्पौरटैण्ट मीटिंग है। दिल्ली के बारे में वे सब लोग जानना चाहेंगे।"

मिस्टर गुप्ता मुस्करा दिए। मुख खोलकर उन्होंने कुछ नहीं कहा। कैडीलाक चल पड़ी। वह जिस समय मिस्टर कपूर को लेकर कोठी का एक द्वार पार कर रही थी, उसी समय ए० आई० सी० सी० के सैक्रेटरी की

एम्बैसडर कार दूसरे द्वार से भीतर आ गई। मिस्टर गुप्ता ने पोर्च में खड़े-खड़े ही सैक्रेटरी महोदय का स्वागत किया। और उसको लेकर वे फिर अपने ऑफिस में आ गये।

औपचारिक बातों के उपरान्त सैक्रेटरी ने कहा : "तीसरा जनरल इलैक्शन सिर पर आ गया, गुप्ताजी! हम लोग अभी से उसकी तैयारी में लगे हैं। दिल्ली में तो सारा दारोमदार आपके ऊपर है।"

मिस्टर गुप्ता ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वे मुँह लटका कर मेज़ पर पड़े पेपरवेट को उलटने-पलटने लगे। तब सैक्रेटरी ने पूछा : "आपने कोई जवाब नहीं दिया, गुप्ताजी!"

मिस्टर गुप्ता तुनककर बोले : "मैंने तो सदा कांग्रेस की सेवा की है। सरकार की भी। और इसका सिला यह मिला! कमला मेरी मिल में हड़ताल करवा रही है।"

"वह दूसरा सवाल है। मालिक और मजदूर का सवाल। वह पचड़ा तो चलता ही रहता है। मैं तो आपसे एक बड़ी बात कहने आया हूँ।"

"मेरे लिए मेरी मिल से बड़ी बात भला क्या हो सकती है? उसी की बिना पर तो मैं मुल्क की सेवा करने लायक बना हूँ।"

"तो बतलाइए, इस मामले में हम आपकी क्या मदद कर सकते हैं?"

"आप कमला से कहिए के मिल में हड़ताल नहीं करवाए।"

"सो कैसे सम्भव है? हड़ताल के बारे में तो कानून बना हुआ है। लेबर ट्रीब्यूनल हैं। आरबिट्रेशन है। हाईकोर्ट है। आप कानूनी कार्रवाई कीजिए। सुप्रीम कोर्ट तक।"

"कानून जब तक मेरी मदद कर पाएगा तब तक तो मैं बरबाद हो जाऊँगा।"

"अरे, गुप्ताजी! मैं तो आपको सलाह दूँगा के कमला से फैसला कर लीजिए। दो-चार लाख इधर या उधर। आपको क्या फर्क पड़ता है?"

"लेकिन आप मुझसे जो बार-बार इतना मोटा चन्दा लेते रहते हैं उसका भी तो कुछ लाभ होना चाहिए? आप भी तो किसी मर्ज की दवा

हैं ?"

"चन्दा आप देते हैं अपने देश के कल्याण के लिए। आप देश के नागरिक हैं, देश आपके सुख के लिए साधन जुटाता है, आपकी सम्पत्ति की रक्षा करता है। यह सब क्या कुछ कम है ?"

"देश जाए भाड़ में। अगर मेरी मिल पर ताला पड़ गया तो देश को लेकर क्या मैं चाटूँगा ?"

"मिल पर ताला क्यों पड़ेगा ?"

"कई बरस से कोशिश कर रहा हूँ कि मिल बन्द न हो। मैं झुकता गया, और कम्यूनिस्ट मुझको झुकाते गए। अब तो गले में आ लगी है। मैं और नहीं झुक सकता।"

"तो ठीक है। मिल को आप बेच डालिए। आप नहीं चला सकते तो आपका कोई भाई चला लेगा। मिल तो बन्द नहीं हो सकती।"

मिस्टर गुप्ता बिगड़ गए। वे गुर्राकर बोले : "और आप यही संदेसा लेकर मेरे पास आए हैं ?"

सैक्रेटरी हँसने लगा। फिर वह बोला : "मैं तो किसी और ही काम से आया था। आपने ही यह राग छेड़ दिया।"

"इस आफत के मारे मेरी तो नींद हराम है, और आप इसे राग कहते हैं ! !"

सैक्रेटरी उठकर खड़ा हो गया। और किंचित् गम्भीर होकर बोला : "तो मैं चला। आप सोच लीजिए। आपकी मिल बन्द हो या न हो, कुछ और तो हो ही सकता है। आप सब बातों का खयाल रखिए।"

मिस्टर गुप्ता ने कहा : "इन धमकियों से तो मैं तंग आ गया। एक तरफ कम्यूनिस्टों की धमकी। दूसरी तरफ कांग्रेस की। अब मैं यह सब बर्दाश्त नहीं कर सकता। मुझको कोई रास्ता निकालना ही पड़ेगा।"

सैक्रेटरी उठकर कमरे के द्वार तक आ गया था। वह मुड़कर बोला : "मिस्टर गुप्ता ! रास्ता तो निकला हुआ है। स्वतन्त्र पार्टी में नाम लिखवा लीजिए। राजाजी आकर सब ठीक कर जाएँगे।"

मिस्टर गुप्ता ने कोई उत्तर नहीं दिया। सैक्रेटरी चला गया।

तब मिस्टर गुप्ता ने मिस मलहोत्रा को बुलाया। और वे उससे बोले : "मिस मलहोत्रा ! वह ड्राफ्ट फाड़ डालो ! अभी फाड़ डालो ! !"

मिस मलहोत्रा समझी नहीं उनकी बात। वह पूछ बैठी : "कौन-सा ड्राफ्ट, सर !"

मिस गुप्ता ने मेज पर हाथ पटककर कहा : "वही जो मैंने मिस्टर ममानी के नाम लिखवाया था। तुम समझती क्यों नहीं !"

मिस मलहोत्रा ने सिटपिटा कर कहा : "आइ सी ! दैट्स् ऑल राइट, सर ! अभी फाड़ डालती हूँ।"

मिस मलहोत्रा जाने लगी। मिस्टर गुप्ता ने कहा : "ठहरो !"

मिस मलहोत्रा ने मुड़कर कहा : "यस, सर !"

"मिस्टर ममानी का टेलीफोन मिलाकर मिस्टर कपूर को लाइन पर बुलाओ।"

मिस मलहोत्रा ने वहीं पर रहकर मि० मसानी का टेलीफोन मिला दिया। उधर से कपूर साहब के आते ही वह फोन को मिस्टर गुप्ता के हाथ में देकर बाहर चली गई।

मिस्टर गुप्ता ने कहा: "कपूर साब ! मैंने फैसला कर लिया...हाँ-हाँ.... ना, ना...अभी ज्वॉइन नहीं करूँगा...हाँ, बेशक...मेरी इन्टेन्शन के बारे में आप रूमर फैला सकते हैं....ठीक है, मैं ना नहीं कहूँगा···अच्छा....अच्छा ....अच्छा....गुड बाई।"

टेलीफोन रखकर मिस्टर गुप्ता अपनी कुरसी में अधलेटे हो गए। मानो उनके सिर पर से संसार का भार उतर गया हो।

: ३ :

उसी रात के प्रायः नौ बजे होंगे। रोज़ा ने न्यू इण्डिया कॉफी हाउस में प्रवेश किया। कनॉट प्लेस का यह रेस्तराँ विविध राजनैतिक दलों के लोगों का अड्डा था। रोज़ा भी, इंग्लैण्ड जाने के पूर्व तथा इंगलैण्ड से लौट-कर, प्रायः नित्य ही यहाँ आती थी। आज किन्तु उसे देर हो गई थी। नियत

समय सात साढ़े-सात बजे का था।

कॉफी हाउस में भरी भीड़ ने एकदृष्टि होकर उसको देखा। निर्निमेष नेत्रों से। साँस रोककर। सांझ से ही प्यासे थे वे नेत्र। सांझ से ही रीते थे वे हृदय। कॉफी हाउस के पंछियों को रोज़ा की रूपमाधुरी का रसपान किए बिना कल नहीं पड़ता था। वे उसके आने की प्रतीक्षा में पलकें बिछाए बैठे थे।

रोज़ा ने द्वार से कुछ दूर आकर एक बार चारों ओर दृष्टिपात किया। कॉफी हाउस के महारथियों में से अनेक जनों से परिचय था उसका। वह किसी की भी मेज पर जाकर बैठ सकती थी। कइयों ने उसको अपनी ओर ताकते देखकर उससे आँखें मिलाने का प्रयत्न भी किया। कई-एक के अधरोष्ठ मुस्कान से स्फीत भी हुए। मधुर निमन्त्रण था उस मुस्कान में। किंतु रोज़ा ने तो मानो किसी को देखा ही नहीं। वह तो जैसे किसी विशिष्ट व्यक्ति को खोज रही थी।

वह व्यक्ति उसे दिखाई नहीं दिया। रोज़ा का अनमना-सा मुख और भी अनमना हो गया। उसके मुख से एक दीर्घ निश्वास निकल गया। फिर वह किसी ओर भी देखे बिना, हॉल को पार करके, दूसरे कोने में बने एक निर्जन केबिन में जा बैठी। केबिन महिलाओं के लिए नियत था। कोई अकेला पुरुष उसमें नहीं बैठ सकता था।

कॉफी हाउस में मातम-सा छा गया। एक क्षण पहले का कोलाहल न जाने कहाँ विलीन हो गया। आज रोज़ा अनमनी थी। कॉफी हाउस का अन्य कोई भी पंछी अनमना हुए बिना नहीं रह सका। प्रत्येक पंछी का हृदय एक ही उद्वेग से उद्वेलित था—जाकर रोज़ा के प्रति संवेदना प्रकट करे। किन्तु ऐसा साहस कोई नहीं कर सका।

तब एक युवक अपने स्थान से उठा। वह प्रायः अकेला ही बैठा था। टेबल पर साथ बैठने वालों से उसका विशेष परिचय प्रतीत नहीं होता था। अचकन और चुड़ीदार पाजामे में से अंग-प्रत्यंग का सौष्ठव बिखेरता हुआ वह युवक जाकर रोज़ा के केबिन के सामने खड़ा हो गया। रोज़ा ने

आँखें उठाकर उसकी ओर देखा। और युवक झुककर सलाम बजा लाया। फिर वह अपने स्वर को किंचित् कृत्रिम बनाकर बोला : "मैंने का, आदाबर्ज है, कॉमरेड शर्मा ! आपने तो इस नाचीज पर निगाह नहीं डाली। मगर बन्दा कब आदाब बजाए बिना रह सकता था ? आपने मुझे पहचाना नहीं, कॉमरेड।"

रोज़ा ने एक क्षण युवक की ओर देखा। फिर वह खड़ी होकर बोली : "अरे ! यह तो अटल है !!"

"ज़हे किस्मत ! आपने बन्दे पर करम तो किया !!"

"क्या बकता है, अटल ! तुझे मैं क्यूँ नहीं पहचानूँगी ?"

"मैंने सोचा, आप वलायत से तशरीफ लाई हैं...

"तो क्या हुआ ?"

"वलायत से वापस आने वाले बशर इस मोची मुल्क के इन्सान को ज़रा कम मुँह लगाते हैं, कॉमरेड !"

"अच्छा ! बातें मत बना। आ, बैठ जा मेरे पास।"

"आपके तख्लिए में...

"फिर वही बात ! मैं कहती हूँ, बैठ जा मेरे पास ! मैं तो खुद कोई साथी ढूँढ़ रही थी।"

अटल ने फिर से झुकाकर एक और सलाम बजाया। फिर वह केबिन में घुसकर रोज़ा के पास जा बैठा। रोज़ा ने पूछा : "कॉफी पीएगा ना ?"

अटल बोला : कॉफी के तो, कॉमरेड ! कई प्याले पी चुका हूँ। लेकिन आपका हुक्म होगा तो एक प्याला और पी लूँगा।"

बैरा पास ही खड़ा था। रोजा ने उसको बुलाकर दो कॉफी का आर्डर दे दिया। कॉफी विद् क्रीम ! वैरी हॉट !!

अटल ने पूछा : "आप कब तशरीफ लाईं, कॉमरेड ! मेरा मतलब, लायत से ?"

रोज़ा ने उत्तर दिया : "करीब एक हफ्ता हो गया। रोज ही तो यहाँ

आती हूँ। लेकिन तू तो दिखाई ही नहीं दिया।"

"मैं कुछ अरसे के लिए बाहर चला गया था। आज ही लौटा हूँ।"

"पार्टी के काम से गया था?"

"नहीं, काम तो अपना ही था। पार्टी तो, कॉमरेड! मैंने छोड़ दी।"

रोज़ा चौंक उठी। फिर अपने-आप को सँभालकर वह बोली: "तो मज़ाक करने की तेरी आदत नहीं गई, अटल!"

अटल ने गम्भीर होकर कहा: "नहीं, कॉमरेड! मैं मज़ाक नहीं कर रहा। सच-सच कह रहा हूँ। आप अपनी अम्मीजान से पूछ लीजिएगा।"

"लेकिन क्यों? बात क्या हुई?"

"वही जो हरेक ईमानदार आदमी के साथ होती है।"

"अपनी तारीफ पीछे कर लीजो, अटल! पहले तू बात तो बतला दे।"

कॉफी आ गई थी। रोज़ा ने एक प्याला बनाकर अटल की ओर सरका दिया। फिर दूसरा प्याला तैयार करती हुई वह बोली: "हाँ, तो क्या हुआ था?"

अटल कॉफी के प्याले को अपने हाथ में उठाकर बोला: "हुआ क्या? पार्टी ने दस बरस के अरसे दराज़ में भी मुझको पहचाना नहीं।"

"तू कुछ कहेगा भी, अटल! या पहेलियाँ ही बुझाए जाएगा? आखिर क़िस्सा क्या है?"

"किस्सा तो मुख्तसर-सा है। मैंने पार्टी के लिए अपनी बेशबहा ज़िंदगी के दस साल बरबाद कर दिए। पूरे दस साल। यानी के एक-सौ बीस महीने। यानी के पाँच-सौ बीस हफ्ते। यानी के तीन हज़ार छः सौ पचास दिन। घण्टे और मिनट तो क्या गिनाऊँ, कॉमरेड!"

रोज़ा ने अपने ब्लाउज में टका पैन निकालकर अटल के सामने पटक दिया। फिर वह मेज़ पर उँगली टिकाकर बोली: "कागज़ नहीं है मेरे पास। इस शीशे पर लिखकर हिसाब कर ले। मैं भी तो जानूँ, तेरे कितने सैकेण्ड बरबाद हुए हैं!"

अटल हँसने लगा। फिर उसने कहा: "आप तो इस नाचीज़ पर नाराज़ हो रही हैं, कॉमरेड !"

"और नहीं तो क्या तेरा मुँह चूम लूँ ! बड़े फूल झड़ रहे हैं ना जनाब की ज़बान से !!"

"आख़िर आप सोचकर तो देखिए। क्या आपको मालूम है के मैं इस वक्त कौन-सी क्लास में हूँ ?"

"मुझे क्या मालूम ?"

"एम० ए० प्रीवियस में हूँ, कॉमरेड ! एम० ए० प्रीवियस में !! पार्टी का हुक्म मानकर मैंने दस साल तक प्रीवियस का एग्ज़ैम नहीं दिया। मैं बार-बार सब्जैक्ट बदलता रहा। और अब पार्टी ने मेरे साथ ये सलूक किया !"

"पार्टी ने क्या किया ?"

"मुझ सस्पैण्ड कर दिया। एक जरा-सी बात पर। दस साल पुराने होलटाइमर की क़िस्मत का फ़ैसला करते हुए पार्टी के लीडरान को एक लम्हा भी नहीं लगा !"

"तेरा कुसूर क्या था ?"

"कुछ हो तो बतलाऊँ, कॉमरेड ! मास्को में यूथ कांफ्रेंस होने वाली थी। गुज़श्ता सितम्बर के महीने में। डैलीगेशन के नाम लिए जाने लगे तो सबको पक्का यकीन था के दिल्ली की यूनिट अटल परसाद पाण्डे का नाम पेश करेगी। लेकिन एक दिन अलल सुबा अखबार पर नज़र पड़ी तो देखा के दिल्ली से मिसेज माथुर का नाम चुना गया है। मैंने आपकी अम्मीजान के पास जाकर इतना कह दिया के मैं दस साल से पार्टी में पापड़ बेल रहा हूँ, मेरा भी कुछ खयाल रक्खा जाना चाहिए। बस फिर क्या था ! आफ़त बरपा हो गई !!"

"तू डिसिप्लिन तोड़ेगा तो तेरा जलूस तो निकलने से रहा !"

"लेकिन, कॉमरेड ! इन्साफ़ जैसी भी तो एक चीज़ होती है ना ! मिसेज़ माथुर को मुझ पर तरजीह दी गई, तो किस बिना पर ?"

"मुझको मालूम नहीं।"

"लेकिन मुझको मालूम है। दुनिया जहान को मालूम है। मिसेज माथुर तो शादी के पहले कभी पार्टी की सिम्पैथाइजर भी नहीं थीं। किसी नाम-जाद कम्यूनिस्ट को खसम बना लेने से ही क्या....

रोजा को तैश आ गया। वह अटल का हाथ पकड़कर बोली : "होश से बात कर, अटल! मैं अभी भी पार्टी की मेम्बर हूँ।"

अटल सहसा सिटपिटा गया। उसको यह आशंका नहीं थी कि रोजा रुष्ट हो जाएगी। उसने तो यही सोचा था कि वह आवेश प्रकट करेगा, और रोजा उसके प्रति संवेदना जताएगी। किन्तु हुआ ठीक इसके विप-रीत। वह खिसियाना-सा होकर चुप हो गया।

रोजा ने कहा : "आखिर तू अपने-आपको समझता क्या है? तू पार्टी का होलटाइमर रहा तो क्या पार्टी ने तुझे पे नहीं किया? और मुल्क-भर के स्टूडेन्ट्स में क्या तेरा नाम नहीं हुआ? पार्टी ने क्या तुझसे मुफ्त की मशक्क़त करवाई है?"

अब की बार अटल को भी कुछ तैश आ गया। वह स्वर को ऊँचा करके बोला : "हाँ भइ, मैंने तो पार्टी की पॉकेट मार ली! अटल परसाद पाण्डे क्या डेढ़-सौ रुपये महीना पाने लायक़ था!! डेढ़ सौ रुपए महीना में तो कॉमरेड क्रुश्चेव मास्को की मसनद छोड़कर चले आते। दिल्ली की गलियों में गलाबाज़ी करने के लिए। दिल्ली के कॉलिजों के छोकरों से उलझने के लिए! सच, मैंने तो पार्टी को लूट लिया!!"

रोजा ने पूछा : "क्यूँ? डेढ़-सौ रुपया क्या तेरे लिए कम था?"

"मेरे लिए तो डेढ़ सौ रुपया मेरी किस्मत की पूरी कीमत है, कॉम-रेड! अगर कम है तो एम० पी० लोगों का अलाउंस कम है। क्या मिलता है ग़रीबों को!! कुल मिलाकर पाँच हज़ार रुपल्ली माहवार! गोल्फ लिंक पर फ़क़त पाँच सौ रुपये महीने की कोठी! और अमरीकियों को कॉकटेल पिलाने-भर का खर्चा! कार की बात मैं नहीं कहता। स्टैन्डर्ड डिलक्स तो बहुत सस्ती आती है!! हद हो गई....

अटल कुछ और भी कहता। किन्तु रोज़ा ने उसके मुख पर हाथ रखकर उसे चुप कर दिया। रोज़ा की दृष्टि हॉल की ओर उठी हुई थी। अटल ने देखा कि एक अन्य युवक रोज़ा की ओर ताकता हुआ केबिन की ओर आ रहा है। रोज़ा ने कहा : "अटल ! देख सामने वो पम्मी आ रहा है। जानता है ना उसे ? कैपीटलिस्ट के सामने पार्टी की बातें मत करियो। भला ?"

अटल उस युवक को और भी ध्यान से देखने लगा। सूट-बूट से सजा-धजा इकहरे गात का साँवला-सा जवान तीन-चार मेज़ परे रुककर किसी से दुआ-सलाम करने लगा था। अटल ने उसे नहीं पहचाना। उसने रोज़ा से पूछा : "कौन है ये, कॉमरेड शर्मा !"

रोज़ा बोली : "इस को नहीं जानता ? न्यू इण्डिया कॉटन मिल्ज़ का नाम सुना है ? उसके मालिक का लड़का है। परमानन्द गुप्ता।"

"आपका इससे क्या ताल्लुक़ ?"

"वाह ! इंगलैण्ड में हम दोनों ने एक साथ बी० ए० पास किया है। लास्की के लन्दन स्कूल ऑफ़ इक्नॉमिक्स से। हम दोनों साथ-साथ सारे योरप में घूमे हैं। यह मेरा बहुत गहरा दोस्त है।"

"कम्यूनिज़म के मुतल्लिक़ इसकी क्या राय है ?"

"पार्टी का सिम्पैथाइज़र है।"

"तब तो पार्टी का जनाज़ा निकलने में देर नहीं !"

परमानन्द केबिन के निकट आ चुका था। रोज़ा ने अटल से कहा : "अच्छा, बाबा ! अब तू चुप कर जा। ये सब बातें फ़ुरसत में होंगी... हलो ! पम्मी !"

परमानन्द ने अपनी कलाई पर बँधी घड़ी की ओर देखकर कहा : "माफ़ी माँगता हूँ, रोज़ी ! देर हो गई। चला तो ठीक वक्त पर ही था। लेकिन रास्ते में एक्सीडैंट कर बैठा। और एक जाहिल को लेकर अस्पताल जाना पड़ा। वहीं से आ रहा हूँ।"

रोज़ा व्यग्र हो उठी। वह सीट छोड़कर परमानन्द के पास गई, और

उसको सिर से पाँव तक देखकर बोली : "तुझे तो चोट नहीं आई, पम्मी ! कुछ शेकन-सा तो लगता है !"

परमानन्द ने कहा : "शेक-अप तो होना ही था। मज़े-मज़े में आ रहा था। सड़क के किनारे खड़े उस देहाती को न जाने क्या सूझी ? अचानक दौड़कर कार के सामने आ पहुँचा। वो तो मेरे ब्रेक दुरुस्त थे। वरना बेवकूफ का राम-नाम सत्त हो जाता।"

"तू भी तो मजनूँ की तरह कार चलाता है। सच, मुझे तो तेरे साथ बैठते हुए भी डर लगता है। तुझे ख्याल ही नहीं रहता के तू है कौन-से मुल्क में। यह इंगलैण्ड तो नहीं है।"

'सो बात नहीं है, रोज़ी ! इस मोची मुल्क का ख्याल मुझे हरदम बना रहता है। यह क्या कोई भुला देने वाली चीज़ है ? लेकिन आज तो मैं किसी और ही ख्याल में डूबा हुआ था।"

"किस ख्याल में डूबा हुआ था ?"

"मजनूँ किस ख्याल में डूबेगा ? उसको भला लैला से फ़ुरसत ही कब मिली ?"

रोज़ा ने सिटपिटाकर अटल की ओर देखा। वह उन दोनों की बातें बड़े ध्यान से सुन रहा था। किन्तु परमानन्द ने रोज़ा की लाज रख ली। वह बोला : "तू एक मिनट बैठ, रोज़ी ! मैं ज़रा डैडी को फोन कर आऊँ। पुलिस ने रिपोर्ट लिखी है। डैडी स्टेशन ऑफीसर को कह देंगे तो वह चालान नहीं करेगा। एक तो इस मोची मुल्क के मूज़ियों को सड़क पार करना नहीं आता। फिर यहाँ के क्रीमीनल कोर्ट से तो खुदा बचाए !"

परमानन्द काउन्टर की ओर चला गया। रोज़ा अटल के पास बैठकर मधुर-मधुर मुस्कराई। फिर वह मधुर-स्वर में बोली : "अटल ! भैये ! मेरा एक काम कर दे।"

अटल ने आपादमस्तक विभोर होकर कहा : "जान हाज़िर है, कॉमरेड !"

"किसी से कहेगा तो नहीं ?"

"चोर का हाल सो मेरा हाल। मैंने, कॉमरेड! पार्टी के न जाने कैसे-कैसे राज़ इस सीने में छुपा रक्खे हैं। पुलिस मुझे पचास हज़ार तक देने को तैयार है। अमरीकन एम्बैसी तो दो-चार लाख लगा चुकी। लेकिन क्या मज़ाल के कोई अटल परसाद पाण्डे की परछाईं भी छू ले।"

"न्यू इण्डिया कॉटन मिल्ज़ की मज़दूर-बस्ती जानता है ना? वहाँ आज साँझ के वक्त एक मीटिंग थी। अचानक एक साधू वहाँ आ धमका। और उसने भजन गा-गाकर मीटिंग को तोड़ दिया। तू जाकर उस साधू का पता लगा दे। बहुत गोरा-चिट्टा साधू है वो। हट्टा-कट्टा। मैं जानना चाहती हूँ के वो है कौन। मज़दूरों में से कुछ लोग उसे ज़रूर जानते होंगे।"

"आपको ये क्या मुसीबत सूझी, कॉमरेड!"

"पूरी बात फिर कभी बतलाऊँगी। पहले तू मेरा काम कर दे। अच्छी तरह तहक़ीक़ात करके उस साधू का भेद निकाल ला। जितनी जल्दी हो सके। मुझे टेलीफोन कर लीजो। मैं खुद आकर तुझसे मिल लूँगी।"

"आपकी कोठी पर नहीं आऊँ?"

"तू तो खुद कह रहा था के ममी तुझसे नाराज़ हैं?"

"बेटी खुश हो जाएँ तो अम्मीजान को मोम बनते क्या देर लगती है?"

"ऐसी बात नहीं...बोल कब तक कर देगा मेरा काम?"

"फौरन से पेश्तर लो, कॉमरेड! यह कौन-सा बड़ा काम है। पार्टी से पूछिए मेरे कारनामे। मैंने जने कैसे-कैसे अमरीकी एजेन्टों की जड़ खोद निकाली है। अभी उस दिन की ही तो बात है। कॉलिज के कुछ लौण्डे डॉलर खाकर पार्टी के खिलाफ परचार कर रहे थे। पार्टी का हुक्म हुआ के उनकी पोल खुलनी चाहिए। मैंने एक ही दिन में सब सालों का कच्चा चिट्ठा...

परमानन्द को लौटते देखकर रोज़ा बीच में ही बोल उठी : "तेरी करामात मैं जानती हूँ, अटल! तभी तो तुझको यह काम सौंप रही हूँ।"

अटल फूल गया। वह चहक उठा : 'अजी यह क्या काम है, कॉम-

रेड ! काम तो उस दिन सोवियत् एम्बैसी के कल्चरल अटैचे ने दिया था....

रोज़ा ने अपने मुख पर हाथ की चार अँगुलियाँ रखकर आँखें तरेर दीं। अटल सीमा पार किए जा रहा था। संकेत समझकर वह मौन हो गया।

परमानन्द के पास आते ही रोज़ा बोली : "पम्मी ! यहाँ तो मेरा दम घुटा जा रहा है। तुझे कॉफ़ी पीनी हो तो यहाँ बैठें। नहीं तो तू मुझको घर छोड़ आ।"

परमानन्द समझ गया कि रोज़ा अपने साथी से पिण्ड छुड़ाना चाहती है। वह बोला : "कॉफ़ी पीने को तो जी नहीं चाहता। और देर भी हो गई है। मुझे अभी एक और भी एप्वायन्टमैंट कीप करना है। चल, तुझे छोड़ आऊँ।"

रोज़ा ने बैरा को बुलाकर बिल चुका दिया। फिर वह अटल से विदा लेकर परमानन्द के साथ हो ली। अटल सिगरेट सुलगाकर सुस्ताने लगा।

कॉफ़ी हाउस के बाहर आकर रोज़ा ने पूछा : "डैडी से बातें हो गईं, पम्मी !"

परमानन्द ने उत्तर दिया : "डैडी बोले, फिक्र नहीं, वे सब संभाल लेंगे। चलो, जान छुटी !"

"कैपीटलिस्ट सोसाइटी में यही तो मजे हैं, जनाब ! कार तले किसी बेचारे का कचूमर निकाल दिया, और अब उफ़ तक नहीं।"

परमानन्द मौन रहकर रोज़ा की ओर देखने लगा। उसकी आँखों में आँसू छलक रहे थे। एक क्षण उपरान्त वह बोला : "तू कहे तो मैं इसी वक्त रो सकता हूँ।"

उसके स्वर में आर्द्रता थी। रोज़ा का हृदय पिघल गया। वह परमानन्द का कन्धा छूकर बोली : "बात क्या है, पम्मी !"

परमानन्द ने मुँह फेरकर कहा : "मेरे सामने रह-रहकर उस कम्बख़्त की शकल आ जाती है। बड़ी भोली शकल थी। बेहोशी की हालत

में वह और भी भोला लग रहा था। मैं रह-रहकर यही सोचता हूँ के बेचारा न जाने क्या-क्या मनसूबे बनाकर कहाँ जा रहा था! शायद अपने बीवी-बच्चों के पास!! और अब वह हस्पताल में पड़ा है...

"सीरियस केस है क्या?"

"डॉक्टर तो कहता था के कोई खतरा नहीं।"

"उसका नाम-पता कुछ नहीं मालूम पड़ा?"

"कुछ भी नहीं। एक बण्डी पहन रखी थी। धोती के ऊपर। जेब भी नहीं थी जो कोई कागज़-पत्तर ही निकल आता। अण्टी में दस-बारह आने मिले। और कोई सुराग़ नहीं।"

"चल ना, एक बार जाकर उसे देख आएँ। शायद होश में आ गया हो।"

"जी तो मेरा भी चाहता है। तू चलेगी तो ज़रूर चलूँगा।"

तब वे दोनों परमानन्द की कार में जा बैठे, और कुछ क्षण उपरान्त हस्पताल के कैजुएल्टी वार्ड में जा पहुँचे। अपने मरीज़ को पहचानकर परमानन्द ने नर्स से पूछा: "इसको होश आया, नर्स!"

नर्स ने उत्तर दिया: "तुम उसके पास जाकर खुद देख लो ना। शायद होश आ गया हो।"

वे दोनों मरीज़ की बैड के पास जा खड़े हुए। उसकी आँखें मुँदी हुई थीं। शरीर मोटे कम्बल से ढका हुआ था। रोज़ा ने उसकी छाती पर हाथ रखकर कहा: "साँस तो अच्छी तरह चल रही है।"

परमानन्द बोला: "लेकिन शॉक गहरा लगा है। कहीं इसका दिमाग़ खराब न हो जाए।"

रोज़ा ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह मरीज़ के मस्तक पर हथेली रखकर सहलाने लगी। उसकी आँखों से ममता फूटी पड़ रही थी। परमानन्द ने नर्स को बुलाकर कहा: "नर्स! यह आदमी जब भी होश में आए उसी वक्त मुझको खबर मिलनी चाहिए। मैं मिस्टर पी० एस० गुप्ता का लड़का हूँ। यह रहा मेरा टेलीफोन नम्बर—इस कार्ड पर लिखा है। मेरा

नाम भी। आप मुझे इत्तला दे देगी ना ?"

पी० एस गुप्ता का नाम सुनते ही नर्स पिघल पड़ी थी। उसने श्रद्धासूचक दृष्टि से परमानन्द की ओर देखकर उत्तर दिया : "ओ यस, मिस्टर गुप्ता ! आल इन्फॉर्म यू इमीजिएटली !"

नर्स को धन्यवाद कहकर रोज़ा और परमानन्द चले आए। और गाड़ी पर चढ़कर वे एक अन्य रेस्तराँ में जा बैठे। रोज़ा ने पूछा : "अब बतला, पम्मी ! मुझे क्यों बुलाया था ?"

परमानन्द ने कहा : "मैं रोज़मर्रा के वक्त पर न्यू इण्डिया में गया था। तू मिली ही नहीं। घर लौटकर सोचा तुझे टेलीफोन करके देखूँ क्या बात है। और तुझसे बातें हुई तो मिलने को जी चाहने लगा।"

"बस, इतनी-सी बात थी ?"

"यह क्या मामूली बात है, रोज़ी ! किसी से मिलने-मिलाने के लिए मन का मचलना—यह तो बहुत बड़ी बात है।"

रोज़ा ने बात बदलने के लिए कहा : "कॉफी मँगवाऊँ ?"

परमानन्द ने उत्तर दिया : "अपने हाथ से बनाकर पिलाए तो मँगवा ले।"

रोज़ा हँसने लगी। फिर वह बोली : "पम्मी ! तू सात साल तक वैस्ट में रहकर भी नेटिव का नेटिव ही रह गया।"

परमानन्द ने पूछा : "क्या गुस्ताखी हो गई मुझसे ?"

"जब देखो तब वही सैन्टीमेंट्लीज़म ! वही बातें जैसी पोयट्री में होती हैं !"

"क्या करूँ, रोज़ी ! तू चीज़ ही ऐसी लाजवाब है के पत्थर में से भी पोयट्री फूट पड़े। अगर तू जानती के मैं जुदाई के लम्बे-लम्बे लम्हे....

"बकवास बन्द कर, पम्मी ! नहीं तो....

"अच्छा भइ, मैं चुप हो जाता हूँ। सिर्फ एक बात और पूछ लेने दे।"

रोजा उत्सुक दृष्टि से परमानन्द की ओर देखने लगे। निर्निमेष नयनों से। परमानन्द को उसकी यह मुद्रा विशेष रूप से भाती थी। वह पुलकित

होकर रोजा की ओर देखने लगा। बोला कुछ नहीं। तब रोज़ा ने भौंहें तरेर कर कहा : "कुछ बोलेगा भी, या....

परमानन्द ने एक ठण्डी साँस लेकर कहा : "ओ ! मैं तो भूल ही गया था। हाँ....तू आज कॉफी हाउस क्यों नहीं आई ?"

"मेरा जी ठीक नहीं था।"

"क्या बात थी ?"

"ममी बात-बात पर मुझे काटने को दौड़ रही थीं। मेरे तो आँसू निकल आए। मुझको अचानक ऐसा लगने लगा के मैं भी क्या पिंजरे में बन्द पंछी हूँ ! बस....पड़ी रही पलंग पर। कहीं जाने-आने को, कुछ करने को, जी ही नहीं किया।"

परमानन्द गम्भीर हो गया। वह एक क्षण मौन रहकर रोजा की ओर देखता रहा। फिर बोला : "रोज़ी ! तू मेरी बात क्यों नहीं मान लेती ?"

रोजा ने पूछा : "कौनसी बात ?"

"मैंने उस दिन प्रोपोज़ किया था ना ?"

"ओ ! वह बात ! एक पिंजरे से निकलकर दूसरे में फँस जाऊँ ?"

"मेरी मुहब्बत को तू पिंजरा मानती है, रोज़ी !"

"मुहब्बत-वुहब्बत मैं कुछ नहीं मानती। मुझे मालूम ही नहीं के यह है क्या बला।"

"तुझको मुझसे मुहब्बत नहीं है क्या ?"

रोज़ा ने इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। वह परमानन्द की ओर देखकर मुस्कराने लगी। जैसे कोई बड़ा आदमी किसी बच्चे की ओर देखकर मुस्कराया करता है। फिर उसने बैरे को बुलाकर कॉफी और कुछ खाने का सामान मँगवा लिया। परमानन्द सहसा कुछ अन्यमनस्क-सा हो गया था। कुछ क्षण तक वे दोनों मौन बैठे रहे।

तब रोजा ने पूछा : "मेरे उस काम के बारे में क्या सोचा, पम्मी !"

परमानन्द ने कहा : "सोचना क्या था ? मेरे पास तो कुछ नहीं है। वरना तुझे दो बार कहने की ज़रूरत नहीं पड़ती। और डैडी से अभी तक

बातें नहीं हो पाईं। वे तो मिल में होने वाली हड़ताल को लेकर मुबतिला हैं।"

"वे पार्टी की बात क्यों नहीं मान लेते ? फिर हड़ताल नहीं होगी। तू उनको समझाता क्यों नहीं ?"

"मैंने कोशिश की थी। वे कहने लगे, रूस और चीन उन्होंने भी देखे हैं, कम्यूनिज़म के वे भी क़ायल हैं। लेकिन उन मुल्कों में तो कोई कारखाना कभी बन्द होता नहीं। मज़दूरों की मज़ाल नहीं के किसी तरह की चीं-चपड़ करें। यहाँ की कम्यूनिस्ट पार्टी ही बेकार में मज़दूरों को बहकाए जा रही है। अब की बार वे पार्टी की पोल खोलकर रहेंगे।"

"मैंने तो सुना था के वे पार्टी के भी सपोर्टर हैं।"

"अभी तक तो थे। लेकिन आजकल वे पार्टी पर बुरी तरह बिगड़े हुए हैं। उस दिन कह रहे थे के उन्होंने पार्टी को लाखों रुपए दिए, और पार्टी ऐसी नमकहराम निकली के उनके ही कारखाने में खुराफात करने लगी।"

रोज़ा ने इधर-उधर देखकर धीमे स्वर में कहा : "एक भेद की बात बतलाती हूँ, पम्मी ! किसी से कहना नहीं के मैंने तुझसे कही है। पार्टी हड़ताल इसलिए करवा रही है के तेरे डैडी स्वतन्त्र पार्टी ज्वॉइन करना चाहते हैं। वे स्वतन्त्र पार्टी से किनारा कर जाएँ तो पार्टी भी पीछे हट जाएगी।"

परमानन्द एक क्षण के लिए चकित-सा हो गया। फिर वह बोला : "अजीब बात है !! डैडी तो स्वतन्त्र पार्टी के बहुत खिलाफ हैं। उस दिन खुद मुझसे कह रहे थे के टाटा-ग्रुप नेहरू पर दबाव डालकर कुछ कन्सैशन्ज़ लेना चाहता है, इसीलिए यह स्वतन्त्र पार्टी का पाखण्ड खड़ा किया गया है।"

अब की बार रोज़ा चकित रह गई। वह बोली : "तो यह अफ़वाह फैली कैसे ?"

परमानन्द ने कहा : "मुझे क्या मालूम ? मैं तो, तू जानती है, इस शहर में अभी आया हूँ।"

"मुझे भी कुछ नहीं मालूम। यह क़िस्सा कई दिन पहले से चल रहा है।"

"पार्टी के लीडर डैडी से मिलकर फेस-टू-फेस बातें क्यों नहीं कर लेते ?"

"और तेरे डैडी ही क्यों पार्टी से किनारा किए बैठे हैं ? मम्मी से तो उनकी पुरानी दोस्ती है।"

परमानन्द ने कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रश्न का उत्तर उसके पास नहीं था। कॉफी वगैरह आ चुकी थी। परमानन्द कॉफी बनाने लगा। रोज़ा बोली : "पम्मी ! बात यह है के अगर यह चीन वाला झगड़ा नहीं हुआ होता तो तेरे डैडी को पार्टी से उलझने की हिम्मत नहीं होती। इधर कुछ दिनों से फिज़ा में कुछ तबदीली-सी दिखाई देती है। इसलिए कुछ लोगों को वहम हो गया है के पार्टी कमज़ोर पड़ गई। पार्टी को उन लोगों की ख़ामख़याली दूर करनी ही होगी।"

परमानन्द बोला : "जने चीन ने इतनी जबरदस्त ग़लती क्यों की ?"

"ग़लती चीन ने नहीं की, पम्मी ! ग़लती तो तू कर रहा है। एक सोशलिस्ट मुल्क पर शुबा ज़ाहिर करके। चीन ने तो कोई ग़लती नहीं की।"

"चीन की हरकत के कारन क्या इस देश की सोशलिस्ट फोर्सेज़ को धक्का नहीं पहुँचा ?"

"नहीं, चीन ने इस देश की सोई हुई सोशलिस्ट फोर्सेज़ को बेदार कर दिया है।"

"मैं नहीं मानता।"

"तू जानता ही नहीं के यहां हो क्या रहा था।"

"क्या हो रहा था ?"

"हिन्दुस्तान की पार्टी नेहरू के नाम पर घोड़े बेचकर सो रही थी। पार्टी के लीडर विश्वास कर बैठे थे के नेहरू पार्टी का रास्ता साफ कर रहा है। लेकिन इन्टरनैशनाल के नेता तो इतने निखट्टू नहीं हैं।"

"तो क्या नेहरू धोखा दे सकता है ?"

"दे क्यों नहीं सकता ? दिमाग़ से भले ही वह सोलहों आने कम्यूनिस्ट हो, आखिर पार्टी का मेम्बर तो नहीं है। और दिमाग़ को बिगड़ते क्या देर लगती है ? उस सिचवेशन का कोई पक्का इन्तजाम तो होना चाहिए ना। वह इन्तजाम चीन ने कर दिया। अब नेहरू की हिम्मत नहीं के टस से मस हो जाए।"

"लेकिन मुल्क की जनता तो कम्यूनिजम के बहुत खिलाफ होती जा रही है।"

"जनता की बात जाने दो। हुजूम तो हड़बड़ाया ही करता है। हमको देखना सिर्फ यह है के ताकत किसके पास है, और वह उसका क्या इस्तेमाल कर रहा है। इतना तो तू जानता है के इस मुल्क में सारी ताकत नेहरू के हाथ में है। और चीन के एक्शन के बाद वह पहले से भी ज्यादा सोवियत् कैम्प के नज़दीक आ गया है। बीच में वह कुछ गोल-मटोल बातें करने लगा था।"

"यह तो ठीक है। लेकिन आगे क्या होगा ? मुल्क में तो डैमोक्रेसी है ना ? नेहरू अगर बदनाम हो गया तो वह कितने दिन पावर में रहेगा ? और यह सच है के वो आए दिन बदनाम होता जा रहा है। लोग कहने लग गए हैं के नेहरू निकम्मा है, चीन ने धरती दबा ली और वो आँखें मटका कर रह गया।"

"डैमोक्रैसी का ढकोसला जितने दिन चले उतने ठीक है। फिर देखा जाएगा। उस दिन नेहरू को कोई फैसला करना पड़ेगा। अगर वह ताकत में रहना चाहेगा तो उसके लिए दो ही रास्ते रह जाएँगे। या तो पार्टी के साथ कोलीशन कर ले, या फिर अपनी जनता की जूतियाँ चाटे और....

रोजा ने अपनी बात पूरी नहीं की। वह कुछ आवेश-से में आ गई थी। परमानन्द ने पूछा : "और क्या, रोज़ी !"

"और सिविल-वार सँभाले। इन्टरनैशनाल को जिस दिन यक़ीन हो जाएगा के नेहरू हाथ से निकला चाहता है उस दिन वह नकारा नहीं बैठी

रहेगी।"

"तेरा क्या ख़याल है? नेहरू कोलीशन करेगा, या झगड़ा मोल लेगा?"

"मुझे तो यक़ीन है के बम की बात रहते नेहरू झगड़ा कभी नहीं मोल लेगा। झगड़े के नाम से ही उसकी जान जाती है। वाजिद अली शाह ने झगड़ा मोल लिया होता तो नेहरू झगड़ा मोल लेगा। उसकी बातों पर मत जा, पम्मी! उसकी ज़बान हमेशा ही दराज़ रही है। लेकिन भइ, दुनिया की हिस्ट्री में ऐसा हीजड़ा कभी पहले पैदा नहीं हुआ!"

परमानन्द ने कुछ नहीं कहा। कॉफ़ी के प्याले रीते हो चुके थे। रोज़ा ने परमानन्द का कंधा छूकर कहा: "एक-एक कॉफ़ी और हो जाए। अब की बार अपने हाथ से बनाकर पिलाऊँगी। सच!"

परमानन्द ने जैसे नींद से जागकर कहा: "लो भइ! हम तो लुट गए! वाह भइ, वाह! यह खूब रही! हमने तो बातों-बातों में अपने ही हाथ से कॉफ़ी बनाकर पी ली!!"

"नहीं! मुझे भी तो पिलाई है।"

"तू भी ख़ूब निकली! वायदा क्या किया था? लेकिन मुझको कॉफ़ी घोलते देखकर तूने टोका तक नहीं?"

रोज़ा हँसने लगी। फिर बोली: "बात यह है के मुझको मेहनत करने का शौक़ नहीं है।"

परमानन्द ने चुटकी काटी: "मुहब्बत करने का शौक़ तो है ना?"

"मुहब्बत और मेहनत में फ़र्क़ है, पम्मी!"

"माना। मेहनत करने से मुहब्बत नहीं होती। लेकिन मुहब्बत होने पर महबूब के लिए मेहनत तो की ही जाती है।"

"तूने अपने महबूब के लिए कौन्-सी मेहनत की?"

"महबूब कहे तो जान हथेली पर हाज़िर है।"

"झूठी बातें मत बना। एक काम के लिए कहा था। कितने दिन हो गए, आज तक कोई जवाब नहीं!"

परमानन्द चुप हो गया। रोज़ा ने कहा : "दे ना जवाब !"

परमानन्द बोला : "तेरा तो जवाब नहीं, रोज़ी ! हार मान लेता हूँ।"

"हार तो मैंने मान ली है। एक अरमान था। वही पूरा नहीं हुआ।"

"तू एक हफ्ते की मोहल्लत मुझे और दे दे। डैडी नहीं मानेंगे तो मैं रुपया उधार लाकर दूँगा। तेरा मन्थली पेपर ज़रूर निकलेगा। बस, अब हो जा खुश। और ला, हाथ मिला इसी बात पर।"

"सब के सामने ! नहीं, नहीं !"

"फिर वही नेटिव बात !"

"इन रोम, डू एज़ दि रोमन्ज़ डू !"

"अच्छा, रोज़ी ! जैसी तेरी मर्ज़ी। ले वह कॉफ़ी का प्याला आ रहा है। प्याले को अपने पूरे हाथ से छू दीजो। बंदा उसको चूमकर ही अपने-आपको खुश-क़िस्मत मान लेगा।"

रोज़ा हँसने लगी। परमानन्द आँखों ही आँखों में उसकी मुखश्री का पान कर रहा था।

: ४ :

उसी रात के प्रायः बारह बजे होंगे। कमला एक बन्द कमरे में बैठी एक पुरुष से बातें कर रही थी। पुरुष की आयु साठ वर्ष के लगभग होगी। उसकी वेशभूषा साधारण थी। किन्तु उसकी आँखों में न जाने कैसी एक सतर्कता का भाव भरा था। बातों के बीच-बीच में अचानक रुककर वह मानों आहट ले लेता था।

यह कमरा एक जीर्ण-शीर्ण मकान की दूसरी मंजिल पर बना हुआ था। जामा मस्जिद के पिछवाड़े एक गली के अन्त में। कमरे में साज़-सामान के नाते प्रायः कुछ भी नहीं था। एक मूँज की खाट जिस पर वह पुरुष बैठा था। और एक पुरानी कुरसी जिस पर कमला उपासीन थी। कमला ने अपने पाँव, ठिठुरने से बचाने के लिए, नंगे फर्श पर से ऊपर उठा लिए थे।

पुरुष मिली-जुली हिन्दी-उर्दू में ही बोल रहा था। किन्तु बोलने के

ढंग से आभास होता था कि वह बंगाल का रहने वाला है। वैसे हिन्दी-उर्दू बोलने का अभ्यास उसका खूब रहा होगा। उर्दू के शब्द भी वह एक प्रकार से ठीक-ठीक ही बोल रहा था।

कमला ने कहा : "कॉमरेड ! आज क़रीब बारह बरस होने आए। मुझको सपने में भी ये इमकान नहीं था के हबीब जिन्दा है। आज अचानक उसको देखकर मेरे तो पाँव तले की धरती सरक गई। ये तो बहुत अच्छा हुआ कि आप दिल्ली में क़याम फरमा रहे थे। वरना...

पुरुष बीच में ही बोल उठा : "मुझे तुम से मिलना तो किसी और सिलसिले में भी था। चलो, इसी बहाने मिलना हो गया। कॉमरेड घोष ने मुझसे तुम्हारी मुसीबत का जिक्र किया तो मुझ को भी यकीन नहीं हुआ। सोचा के तुमको बुलाकर पूरी तहकीकात कर लूँ। तुम तो जानती हो कि मुझको फुरसत बहुत कम मिलती है।"

"आप का लाख-लाख शुक्रिया, कॉमरेड ! मेरे तो प्रान सूखे जा रहे थे। आप क्या मिले, जैसे डूबते को किनारा मिल गया। अब मुझे कोई फिक्र नही।"

"ऐसी बात तो नहीं है, कमला ! फिक्र तुम्हारी मिटी नहीं। फिक्र तो शुरू हुई है।"

कमला ने चौंककर पूछा : "क्या मतलब, कॉमरेड !"

पुरुष ने मुस्कराकर कहा : "वह बात जाने दो। पहले काम की बात हो जाए।"

उसकी मुस्कराहट में न जाने कैसी एक कर्कशता-सी थी। कमला का दिल बैठ गया। वह सिर झुकाकर मौन रह गई।

पुरुष ने पूछा : "तुम को पूरा यकीन है के वो आदमी हबीब है।"

कमला ने उत्तर दिया : "मुकम्मल यक़ीन है, कॉमरेड ! मेरी आँखें मुझे धोखा नही दे सकतीं। उसका सिर मुँड़ा हुआ था। आँखों पर चश्मा भी नहीं था। तन पर उसने भगवा पहना हुआ था। लेकिन फिर भी मैंने उसको फौरन पहचान लिया।"

"तुम से भूल भी तो हो सकती है। आखिर हबीब का भूत तो तुम्हारे सिर पर सवार रहता ही होगा। हो सकता है के तुम जिस-तिस को हबीब समझ बैठी हो।"

"लेकिन उसने भी तो मुझ को पहचान लिया। देखते ही। एक सेकण्ड को भी शशोपंज नहीं दिखलाई उसने।"

"इसका शाबूत ?"

"वाह, उसने मेरा नाम लेकर पुकारा !"

"तब तो बात कुछ पक्की जान पड़ती हैं। अच्छा, हम खुद तहकीकात करवाएँगे। अभी तो हम मान लेते हैं के वो हबीब ही है। तुम क्या राय देती हो ? हम इस मामले में क्या करें।"

"मेरी तो कुछ भी समझ में नहीं आता। मैं आप को क्या राय दूँ ?"

"पुलिस में अभी भी उसके वारण्ट पड़े हैं। पुलिस को खबर दी जा सकती है।"

"इसमें तो पार्टी की भलाई नहीं। मामला कोर्ट में आया तो वो बोलेगा, और...

"तो और क्या किया जाए ?"

"लेकिन यह सब हुआ कैसे ? पहले तो मैं यही समझना चाहती हूँ।"

"बात मेरी भी समझ में नहीं आती। उसको लिक्वीडेट करने का काम जिस आदमी को सौंपा गया था उसने खुद आकर मुझसे कहा था कि हबीब को हलाल कर दिया गया है।"

"वो आदमी अब कहाँ है ?"

"खबर नहीं कहाँ है।"

"क्या उसको भी....

"नहीं, वह कुछ दीन बाद सोवियत् यूनियन चला गया था। अण्डर-ग्राउण्ड के रास्ते से। एपराट ने भेजा था उसे। उसके बाद उसकी कोई खबर नहीं मिली।"

"और कोई सुराग ?"

"अभी तो नहीं। सोचना पड़ेगा।"

"सोवियत् यूनियन काएपराट क्या कुछ खबर नहीं दे सकती ?"

"कैसी खबर ?"

"इतना तो साफ ज़ाहिर है के वो आदमी झूठा है। बहुत मुमकिन है के इम्पीरियलिस्ट एजेंट हो।"

"होने सकता है।"

"लेकिन सोवियत् यूनियन में उसका होना तो खतरे से खाली नहीं।"

"सोवियत् यूनियन को वह क्या खतरा करेगा ? वहाँ किसी इम्पीरियलिस्ट एजेण्ट का दाल नहीं गलने सकता।"

"लेकिन फिर भी, आप उनको खबरदार तो कर दें।"

"सो तो मैंने कर दिया। कॉमरेड घोष ने जिक्र किया उसी वक्त। आज सोवियत एपराट के कॉंटैक्ट से मेरी मीटिंग भी थी।"

"तब तो ज़रूर कोई खबर मिलेगी ?"

"कहने नहीं सकता।"

क्या वो लोग हम को नहीं बतलाएँगे के वो आदमी कहाँ है, क्या कर रहा है ?"

"जरूरत समझेंगे तो ज़रूर बतलाएँगे।"

"हबीब के मामले में उससे पूछ-ताछ नहीं करेंगे ?"

"जरूरत समझेंगे तो जरूर करेंगे।"

"लेकिन जरूरत तो हमारी है, कॉमरेड !"

"हमारी क्या जरूरत है ?"

"वाह ! ! हमें मालूम होना चाहिए के ये सब हुआ कैसे ?"

"मालूम होने से क्या हो जाएगा ?"

कमला के पास इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं था। वह ऐसे प्रश्नों के लिए प्रस्तुत होकर आई ही नहीं थी। इसलिए वह चुप हो गई। सिर झुकाकर बैठी रही कमला।

पुरुष ने खाट पर पड़ा पॉकेट उठाकर एक सिगरेट सुलगाई। फिर

वह धुएँ का बादल बिखेरता हुआ बोला : "क्या सोच रही हो, कमला !"

कमला ने आर्द्र कण्ठ से कहा : ' क्या सोचूँगी, कॉमरेड ! बरसों की मेहनत से मैंने अपनी पब्लिक लाइफ बनाई थी। और अब बरबादी सिर पर सवार है।"

"अपने-आप को लेकर इतनी चिन्ता काहे ? कम्यूनिस्ट पार्टी का मेम्बर तो कभी इस तरह नहीं सोचता।"

"यह मेरी कमजोरी ही सही, कॉमरेड ! और पार्टी को क्या नुक़सान नहीं पहुँचेगा ? हबीब ने मुँह खोला, और...

"लेकिन वह मुँह तो खोले ! थ्योरैटिकल पॉसीबिलीटी को ले कर काहे माथा खपा रही हो।"

"मुर्दा जब उठ कर बैठ गया, तो बोलेगा भी। नहीं बोलेगा ?"

"कहने नहीं सकता। बोलने भी सकता है।"

"उस सिचवेशन में पार्टी क्या करेगी ?"

"सिचवेशन पैदा होने पर पार्टी अपना फर्ज तै कर लेगी।"

"क्या तै कर लेगी ?"

"अभी से कुछ नहीं कहा जा सकता। जब तक हबीब कोई क़दम नहीं उठाता तब तक पार्टी भी कोई क़दम नहीं उठाएगी।"

"फर्ज किया वो बोल पड़ा। तब मेरा क्या होगा ?"

"फिर अपना फिक्र ! ! तुम्हारी क्या प्रॉब्लम है ? तुम्हारा फैसला तो दो मिनट में हो जाएगा।"

"मैं भी तो जानूँ के क्या फैसला होगा ?"

"तुम को पार्टी से निकालना पड़ेगा। इतना तो निश्चित है ही।"

"मेरा कुसुर ?"

"यह बूर्जुआ सवाल है। पार्टी तो किसी एक इन्सान के लाभ-अलाभ की नहीं सोच सकती। पार्टी को तो अपना फर्ज पूरा करना है।"

"तो पार्टी के लिए की गई ख़िदमात का मुझे यही सिला मिलेगा ?"

पुरुष ने कमला के प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। उसकी मुखभङ्गिमा

सहसा कठोर हो गई। वह निर्मम नेत्रों से कमला की ओर देखने लगा। एक क्षण के लिए कमला सहम गई। किन्तु तुरन्त ही साहस बटोर कर बोली : "बोलिए ना, कॉमरेड ! मेरी खिदमात का क्या यही सिला मिलेगा ?"

पुरुष ने पूछा : "मैं भी तो सुनूँ तुम ने पार्टी की क्या-क्या खिदमातें की हैं ?"

"ये भी क्या मुझे गिनाना पड़ेगा ?"

"बनिया की तरह हिसाब-किताब करने की बात तुमने ही तो उठाई है ?"

"अच्छा, हिसाब-किताब ही सही। मैंने पच्चीस बरस पार्टी के काम में लगा दिए। अपनी जिन्दगी का आधा हिस्सा !"

"पच्चीस बरस पहले तुम क्या थीं ?"

कमला ने उत्तर नहीं दिया। पुरुष ही एक क्षण रुककर बोला : "मैं ही बतला देता हूँ कि तुम क्या थीं। तुमको शायद याद नहीं रहा। कूचा नटवाँ में वह अपना घर तो याद है तुम्हें ? और वो हालत भी याद है जब पार्टी ने तुमको अपना होलटाइमर बनाया ?"

कमला सँभलकर बोली : "याद क्यों नहीं है ? सब याद है। कौनसी कमी थी मुझको ? मेरे बाप का घर तो भरा-पूरा था।"

पुरुष गुर्राया : "सो तो मुझे भी मालूम है। और मुझे यह भी मालूम है के तुम्हारा बाप ब्रिटिश सरकार का ऑडीटर नाकि एकाउन्टैन्ट, एक कुछ था।"

"तो फिर ?"

"उसी प्रकार का जीवन तुम बिताती रहतीं तो आज तुम कहाँ होतीं ?"

"कहाँ होती ? आप ही बतलाइए।"

"तुम खुद जानती हो कि तुम कहाँ होती। तुम्हारा बाप तुमको किसी दूसरे बूर्जुआ के हाथों में सौंप देता। तुम उसके बच्चे पैदा करतीं। और दूसरी औरतों में दिलचस्पी रखने के कारण उससे लड़ती-झगड़तीं। जिन्दगी बीत जाती तुम्हारी। और फिर तुमको निगमबोध घाट पर जला दिया

जाता। वैसे ही जैसे दिल्ली के आर आर बनिए जलाए जाते हैं।"

कमला ने कुछ नहीं कहा। पुरुष की बात सत्य थी। अपने समाज की अन्यान्य लड़कियों का जीवन उसने देखा था। उनसे मिलकर बातें करने में भी नफरत होती थी उसे। जब देखो तब कपड़े-लत्ते की बातें, क्लब और कॉकटेल पार्टी की बातें, सनेमा-थियेटर की बातें, या फिर पति की लम्पटता को लेकर रोना-धोना! मुख पर अहंकार का भाव धारण करके भी अन्तर में अकिञ्चनता का भार वहन कर रही थीं वे सब! मानो किसी बीहड़ में भटक पड़ी हों!!

और उसका अपना जीवन? उसने तो बहुत-कुछ पाया था। अपने से बड़े एक कॉज के लिए काम करना। सारे संसार के दुःख-सुख की चिन्ता करना। वह अपने-आप से बहुत बड़ी हो गई थी। और वह....

पुरुष बीच में ही बोल उठा: "तुम बनिया की बेटी थीं, कमला! बनिया की बेटी ही बनी रहीं। पार्टी तुमको रिएजूकेट नहीं कर सकी। तो लो, मैं तुमको बनिया वाला हिसाब ही समझाए देता हूँ।"

कमला ने सिटपिटाकर पुरुष की ओर देखा। उसकी आँखें फिर निर्ममता से चमक रही थीं। वह कमला को बींधता हुआ बोला: "पार्टी ने तुम से काम लिया तो क्या पार्टी ने तुमको कुछ भी नहीं दिया? आज पार्टी की वजह से तुम पार्लमिंट की मैम्बर हो। पार्टी तुमको पाँच हजार रुपया माहवार देती है। पार्टी ने नई दिल्ली के सबसे फैशनेबल क्वारटर्ज में तुम्हारे लिए कोठी किराए पर ले रक्खी है। तुम्हारे दरवाजे पर पार्टी की कार खड़ी रहती है। यह सब क्या कम है? कौनसा बूर्जुआ खसम तुम को इतना सब दे देता?"

कमला से उत्तर नहीं बन पड़ा। वह मुँह लटका चुप बैठी रही। पुरुष की सारी बातें सत्य थीं। पार्टी ने जो पद और उपभोग उसके जीवन में जुटाए थे वे सम्भवतः उसको उस दूसरे जीवन में नहीं मिलते। और अभी क्या अन्त आ गया था उसकी उन्नति का? वह तो कम्यूनिस्ट सरकार में कमीसार बनने के सपने भी देख रही थी। कमला का मानस सहसा

पश्चात्ताप से पूर्ण हो गया। क्यों उसने वह प्रसंग उठाया ?

पुरुष ने सिगरेट का पॉकेट उठाकर दो सिगरेट एक साथ सुलगाई। फिर एक सिगरेट को कमला के मुख में लगाता हुआ वह बोला : "तुम तो भाग्यवान हो, कमला ! तुमको वेशी कुर्बानी नहीं करनी पड़ी। वरना कम्यूनिस्ट को क्या-क्या नहीं करना पड़ता !"

कमला को सहसा अपने जीवन का परवर्ती प्रसंग याद आ गया। वही जो पिता का घर छोड़ने पर पार्टी ने उसके सम्मुख प्रस्तुत किया था। वह हबीब से प्रेम करती थी। हबीब उस पर प्राण देता था। किन्तु पार्टी ने उनको विवाह नहीं करने दिया। कह दिया कि ऐसे विवाह से हिन्दू जनता में पार्टी के विरुद्ध आवेश की सृष्टि होगी। क्रान्ति से पहले पार्टी इस प्रकार के विवाह की अनुमति नहीं दे सकती।

और उसको विवाह करना पड़ा उस पुरुष से जिसको उसने कभी भी नहीं चाहा था। कॉमरेड शर्मा दिल्ली की पार्टी का प्रधान था। किन्तु उसने तो किसी अन्य पुरुष से प्रेम किया था। कॉमरेड शर्मा के पद का उसे कोई लोभ नहीं था। फिर भी...

पुरुष बोला : "बूर्जुआ और कम्यूनिस्ट में यही तो फर्क होता है, कमला ! बूर्जुआ सब-कुछ अपने स्वार्थ के लिए करता है। और कम्यूनिस्ट का हरेक काम क्रान्ति के लिए होता है। क्रान्ति किन्तु कुरबानी माँगती है।"

कमला की आँखों में आँसू आ चुके थे। वह भर्राए हुए स्वर में बोली : "लेकिन कुर्बानी की भी तो कोई हद होती है, कॉमरेड ! आखिर आप ही याद करके देखिए। मैं इसी हबीब से कितनी मुहब्बत करती थी। और वो मोहब्बत किस हद तक पहुँच चुकी थी। पार्टी के लिए मैंने उस मुहब्बत को कुरबान कर दिया ! हबीब की औलाद को किसी और की औलाद कहलवाना मंजूर कर लिया ! उस आदमी की औलाद जिसके बिस्तर पर मैंने आज तक पाँव भी नहीं रक्खा ! आप तो...

कमला ने पुरुष की ओर देखा। वह हँस रहा था। कमला को जैसे किसी ने चोट मार दी हो। वह चुप हो गई। उसकी छाती में किन्तु बवण्डर

उठा था। मानो वह उसी क्षण फट पड़ेगी।

पुरुष ने निर्मम स्वर में कहा : "और सुनाओ, कमला ! अपनी कुरबानी की कथा को तुमने शेष क्यों का दिया ? अभी तो वह कथा और भी बाक़ी है।"

कमला फट पड़ी : "हाँ, बाक़ी है। यह बतलाना बाक़ी रह गया के मैंने अपने हाथों से अपने महबूब को जल्लाद के हाथों सुपुर्द कर दिया। और...

पुरुष गुर्राया : "जल्लाद ! जबान सँभालकर बातें करो, कमला ! पार्टी को तुम जल्लाद कह रही हो ! और सो भी उस इम्पीरियलिस्ट एजेण्ट के लिए ! !"

"कौन जानता है के कौन इम्पीरियलिस्ट एजेण्ट है ?"

"और किसी के बारे में नहीं कह सकता। किन्तु तुम्हारे बारे में यदि कोई शुबा बाक़ी था तो तुमने आज दूर कर दिया।"

कमला के सिर पर मानो दण्ड-प्रहार हुआ हो। वह भौंचक्की रहकर पुरुष का मुँह ताकने लगी। फिर वह स्वर को ऊँचा करके बोली : "मैं इम्पीरियलिस्ट एजेण्ट ! मैं !!"

पुरुष ने शान्त स्वर में उत्तर दिया : "हाँ, तुम ! पार्टी का निष्ठावान मेम्बर क्या कभी पार्टी को जल्लाद कह सकता है ? सो भी इसलिए कि पार्टी ने अपने पाँव तले का काँटा निकालने में शशोपंज नहीं की ?"

कमला ने उत्तर नहीं दिया। उसको वे दिन याद आ गए जब हबीब का पार्टी से विकट विवाद हो गया था। पार्टी के लिए बड़ी विभीषिका के दिन थे वे। पार्टी को सरदार पटेल की सरकार से लड़ना पड़ रहा था। पहली झपट में ही पार्टी की पसलियाँ हिल गई थीं। किन्तु कॉमरेड रणदिवे कलकत्ते में बैठे-बैठे फतवा दे रहे थे कि क्रान्ति आया ही चाहती है, पार्टी को कुछ और कुरबानी करनी चाहिए, इत्यादि। हबीब को पहले दिन से ही रणदिवे की पॉलिसी पर विश्वास नहीं था। वह पी० सी० जोशी का समर्थक था। पार्टी में प्रविष्ट हुआ उस दिन से। और वह पी० सी० जोशी का ही समर्थक रहा। उसने पार्टी के कुछ प्राइवेट सरक्युलर पी० सी० जोशी

के पास भेज दिए। और पी० सी० जोशी ने उनको पब्लिक कर दिया। तब...

पुरुष बोला : "तुम्हारा तो महबूब ही गया, कमला! किन्तु बंगाल और आंध्रा की कहानी भी तो तुम जानती हो? वहाँ के कितने कॉमरेड मौत का शिकार बने! वहाँ के बड़े-बड़े कॉमरेड महीनों पार्टी की जेलों में बन्द रहे! छोटे-छोटे लोगों ने अपने उस दिन के लीडरों को अपने हाथों से पीटा!!"

कमला ने कुछ नहीं कहा। वह सब-कुछ जानती थी। उसे सब-कुछ याद था। पी० सी० जोशी को एक सब्ज़ी-फरोश पठान रोज़ पीटता था! उस पी० सी० जोशी को जो निरन्तर तेरह वर्ष तक पार्टी का सर्वेसर्वा रह चुका था!! उस पी० सी० जोशी को जिस ने पार्टी का पोषण करके उसे इतना बड़ा किया था!!! और वह यह भी जानती थी...

पुरुष कहने लगा : "कल्याणी तरफदार को क्या तुम नहीं जानतीं? उसके हस्बैण्ड का क्या हश्र हुआ? और वह खुद तीन महीने तक हमारी बाँकुड़ा की जेल में बन्द रही। वहाँ पर रोज-रोज उसकी मरम्मत की जाती थी। लेकिन वह आज भी पार्टी की वैसी ही फरमाबर्दार मेम्बर है। उसने तो कभी ज़बान खोलकर नहीं कहा के उसके साथ क्या-क्या बीती!"

कमला आपादमस्तक काँप उठी। उसे वह सब सुनना पसन्द नहीं था। वह सब सुनकर उसे अपने जीवन के सब से दुखद प्रसंग का स्मरण हो आता था। उस दिन का स्मरण जब उसने मीठी-मीठी बातें लिखकर हबीब को बरग़लाया था और उसे पार्टी के हाथों...

पुरुष ने एक सिगरेट और सुलगाई। फिर वह सान्त्वना के स्वर में बोला : "उस ज़माने को तुम भूल जाओ, कमला! रणदिवे का ज़माना ही कुछ ऐसा था कि उस ज़माने में जो हो गया सो थोड़ा। उस ज़माने को तुम भूल जाओ, कमला!"

कमला ने कण्टकित होकर कहा : "कैसे भूल जाऊँ, कॉमरेड! भूला भी जाता हो! भूल तो जाती। लेकिन रणदिवे तो अब भी पार्टी का लीडर

बना फिर रहा है। उसको तो कोई सजा नहीं मिली।"

"सजा कैसे नहीं मिली ? सजा तो उसे मिली है।"

"मैंने तो नहीं सुना के उसे क्या सजा मिली है।"

"क्यों ? उसका पतन तुमने नहीं देखा ? उसका पश्चात्ताप तुमने नहीं पढ़ा ?"

"वो तो कोई सज़ा नहीं हुई।"

"उसका कुसूर भी तो इससे ज्यादा नहीं था। उसने क्या अपने दिमाग से सोचकर वह सब किया था ?"

"क्या मतलब !"

"मतलब यही कि वह भी तो ऊपर से आॅर्डर पाकर सब-कुछ कर रहा था।"

"क्रैमलीन का आॅर्डर था ?"

"कम्यूनिस्ट पार्टी को और कौन आॅर्डर दे सकता है ?"

"कॉमरेड स्टालिन का आॅर्डर था ?"

"नहीं, कॉमरेड स्टालिन का दौर उस वक्त तक दोबारा नहीं जम पाया था।"

"तो फिर ?"

"झनोफ की लीडरशिप में हुआ था वह सब। और वह तो अपने किए की सजा पा चुका।"

कमला मौन हो गई। उसका समाधान नहीं हुआ था, तो भी। समाधान होता भी कैसे ? वह जानती थी कम्यूनिस्ट पार्टी की रामकहानी। उसने पार्टी में एक जीवन बिताया था। उसने अपनी आँखों से देखा था कि एक दिन जिस नीति को सम्पूर्ण सत्य कहकर उस नीति के विरोधियों की विकट विगर्हा की जाती है, दूसरे दिन उसी नीति के समर्थकों को साम्राज्यवाद का दलाल बतलाकर दुतकारा जाता है। और किस दिन क्या नीति होगी, यह बात कम्यूनिस्ट पार्टी का कोई बड़े-से-बड़ा नेता भी नहीं कह सकता था। कोई जानता ही नहीं था कि क्रैमलीन कल कौनसी करवट लेगा। कमला

भला क्या कहती ?

पुरुष कमला की ओर देख रहा था। अपनी आँखों में किञ्चित् कारुण्य का भाव भरकर। उसने कमला की चिबुक का स्पर्श करके उसका मुख तनिक ऊपर उठाया। और वह संवेदना से सिक्त स्वर में बोला : "कमला ! तुमने जो कुछ सहा उसके लिए मैं दुःखित हूँ। अगर इस नई बात को लेकर फिर तुम पर कोई मुसीबत आई तो भी मुझे अफसोस होगा। लेकिन चारा कुछ नहीं। हिस्टरी का खेल ही कुछ ऐसा अटपटा है कि उस खेल में व्यक्ति के दुःख-सुख का कोई हिसाब-किताब नहीं रहता।"

कमला कुछ नहीं बोली। उसकी आँखों से आँसुओं की झड़ी लगा चाहती थी। किन्तु आँसुओं को सँभाल कर वह जड़वत् बैठी रही।

पुरुष ने एक क्षण उपरान्त कहा : "अब तुम जाओ, कमला ! सरदी की रात है। देर बहुत हो गई। मुझे अभी एक-दो जगह और भी जाना है।"

कमला ने पूछा : "दिल्ली में और कितने दिन क़याम रहेगा आपका ?"

"कुछ कह नहीं सकता। अभी तो यहीं हूँ।"

"पुलिस की निगरानी अब कैसी है ?"

"दिल्ली की पुलिस की कौन परवाह करता है। उनके खुफिया-से खुफिया महकमे में कोई फैसला होते ही पार्टी को पहले मालूम हो जाता है, और उस फैसले पर अमल पीछे होता है। ऐसी पुलिस को तो हम नाकों-चने चबा सकते हैं।"

"तब तो मैं अपनी मोटर में आ सकती थी ? काँस्टैक्ट प्वाइण्ट तक ?"

"हाँ, आ तो सकती थीं। खतरा तो किसी क़िस्म का नहीं था। इस मुल्क में कम्यूनिस्ट लोग अब इतने रैस्पैक्टेबल हो चुके हैं कि कोई उनका पीछा नहीं करता। फिर तुम तो एम० पी० हो। लेकिन इस क़िस्म की हरकत हमारे निजाम के खिलाफ होती। इसलिए मना कर दिया गया था।"

"यह जगह कौन-सी है ?"

पुरुष हँसने लगा। फिर उसने कहा : "यह तुम्हारा सवाल कौन-सा

है ?"

कमला सँभल गई। वह खिसियानी-सी होकर बोली : "माफ कीजिए ! मुझे ख़याल ही नहीं रहा। मैं सोच रही थी कि इधर टैक्सी मिलेगी या नहीं।"

पुरुष बोला : "सवाल ही नहीं उठता। हम लोग तुमको जहाँ पहुँचाएँगे वहाँ से दो-तीन फर्लांग तक कोई टैक्सी-स्टैण्ड नहीं होगा। कोई चलती-फिरती टैक्सी मिले तो उसमें चढ़ना भी तुम्हारे लिए मना है। समझीं ? हैं ?"

"जी....लेकिन....

कमला ने अपनी बात पूरी नहीं की। उसने अपना सिर झुका लिया। जैसे उसे किसी असुविधा का अनुभव हो रहा हो। पुरुष फिर मुस्कराया, और आँखें चमकाकर बोला : "मोटर की आदत पड़ गई ना, कमला ! यह भी एक मुश्किल है। पार्टी अपनी ज़रूरत समझकर किसी मेम्बर के लिए कोई आशायश का सामान जुटा देती है। किन्तु पार्टी-मेम्बर पार्टी के काम को भूलने लगता है और आशायश को याद रखता है। और इस कारण अमेरिका के दालाल पार्टी में घुस आने का रास्ता निकाल लेते हैं।"

कमला चौंक उठी। उसको ऐसा लगा जैसे उसके ऊपर आक्षेप किया गया हो। आत्ममार्जना के भाव से वह बोली : "लेकिन मैं तो पार्टी का हुक्म मानकर ही अमेरिकन्ज़ के साथ रब्त-ज़ब्त बढ़ा रही हूँ, कॉमरेड ! मुझ पर आप यह कैसा शक कर रहे हैं ?"

पुरुष गम्भीर होकर बोला : "मैं तुम्हारी बात नहीं कह रहा, कमला ! तुम पर अभी तक किसी को कोई शक नहीं। लेकिन पार्टी को तो हरघड़ी चौकस रहना पड़ता है। आख़िर तुम जानती हो कि यहाँ चारों तरफ अमेरिकन जासूसों का जाल बिछा हुआ है।"

"हाँ, अमेरिकन तो इस मुल्क में बहुत आ गए, और बढ़ते ही जा रहे हैं। लेकिन मैंने एक बात देखी है। जितने भी अमेरिकन अभी तक मुझे मिले हैं—और मुझे काफ़ी लोगों से मिलने का मौक़ा पड़ा है—वे सबके-सब प्रॉग्रेसिव ख़यालात के ही लोग हैं।"

"बस यहीं तो तुम भूल करती हो ! अमेरिका के छँटे हुए जासूसों को ट्रेन किया जाता है कि वे कम्यूनिस्ट बनकर सामने आएँ और कम्यूनिस्ट मूवमैंट में घुस जाएँ। ऐसे लोगों की तरफ से तुमको खास तौर से सावधान रहना चाहिए।"

"कम्यूनिस्ट अमेरिकन्ज़ की बात मैं नहीं कहती, कामरेड ! दो-चार ऐसे लोग भी मुझे मिले हैं जो सोवियत् यूनियन के भक्त हैं। और उनसे काम भी निकाला है मैंने। लेकिन ऐसे लोग निस्बतन कम हैं। ज्यादातर अमेरिकन्ज तो नेहरू पर लट्टू हैं। और...और...

कमला ने अपनी बात पूरी नहीं की। मानो पूरी बात कहने में उसको बाधा का बोध हो रहा हो। पुरुष ने एक क्षण अपेक्षा करके पूछ लिया : "और क्या, कमला !"

कमला ने गर्दन झुकाकर कहा : "कुछ नहीं, कॉमरेड !"

"मैं जानता हूँ कि तुम कहना क्या चाहती हो। तुम्हारा खयाल है कि कम्यूनिस्ट पार्टी भी नेहरू पर लट्टू है। नहीं ?"

"दिखलाई तो कुछ ऐसा ही देता है।"

"यह तुम्हारे देखने का दोष है। और अमेरिकन्ज़ के साथ ज्यादा उठने-बैठने का नतीजा भी।"

कमला फिर चौंक उठी। वह कुछ सहम-सी गई थी। यह दूसरी बार उस पर दोषारोपण किया गया था। वह जानती थी कि इस प्रकार के दोषारोपण का क्रमविकास क्या होता है। सहसा पार्टी के भीतर काना-फूसियाँ होने लग जाती हैं कि अमुक-अमुक कॉमरेड वास्तव में अमेरिका का एजेण्ट है। बस फिर...

पुरुष ने एक क्षण रुककर कहा : "तुमको यह याद रखना चाहिए, कमला ! कि पार्टी नेहरू पर लट्टू नहीं, नेहरू ही पार्टी पर लट्टू है।"

कमला को जँची नहीं यह बात। वह संशय का भाव प्रकट करती हुई बोली : "लेकिन, कॉमरेड ! पार्टी को तो वह जब चाहे तब गाली देने लग जाता है ?"

"डैमोक्रैसी जो ठहरी। जनमत का जोर पड़ता है तो नेहरू भी पार्टी को दो जली-कटी सुना देता है। लेकिन पार्टी उसकी कथनी पर कभी ध्यान नहीं देती। पार्टी तो उसकी करनी का मुलाहजा करती रहती है। और उसकी करनी आज की तारीख तक सोलहों आने पार्टी के फेवर में रही है।"

बात कमला की समझ में नहीं आई। अभी उस दिन ही तो पार्लमेंट में वादविवाद होकर चुका था। भारत की विदेश-नीति पर। नेहरू ने फिर कम्यूनिस्ट पार्टी को खरी-खोटी सुनाई थी। उस दिन कमला को बहुत क्रोध आया था। उसका जी किया था कि नेहरू का मुँह नोच ले। और वह क्रोध अभी भी ज्यों-का-त्यों बना हुआ था।

पुरुष ने कमला के मन में भरे हुए अविश्वास को समझ लिया। कमला के मुख का भाव देखकर। वह बोला : "नेहरू तो कोई छुपा रुस्तम नहीं है, कमला! उसकी करनी जैसी भी है, तुम्हारे आगे है। उसकी किताबें, उसके भाषण, उसके ड्राफ्ट किए हुए रैजोल्यूशन—तुम जरा सबका मुलाहजा करके देखो। अगर तुमको कोई भी ऐसा सुबूत मिल जाए कि नेहरू ने भूलकर भी कभी सोवियत् फॉरेन पॉलिसी का विरोध किया है, या कम्यूनिस्ट सिद्धान्त की निन्दा की है तो तुम मेरे पास ले आना वह सुबूत।"

कमला ने कहा : "सो तो मैं जानती हूँ। नेहरू सोवियत् यूनियन का तो भगत रहा है। और अभी भी है। लेकिन इस मुल्क में सोवियत् यूनियन की नुमायन्दगी तो पार्टी कर रही है....

"पार्टी को और क्या चाहिए? जहाँ सोवियत् यूनियन, वहीं पार्टी। पार्टी का तो अपना कोई हित-अहित नहीं।"

"सो तो दुरुस्त है।"

"लेकिन यक़ीन नहीं होता? हैं?"

"सोचकर देखूँगी।"

"यह सोचने का रोग भी अमेरिकन्ज की सोहबत का असर है। पार्टी का मेम्बर सोचता नहीं। वह पार्टी के आदेश का पालन करता है।"

यह तीसरा आक्षेप था। कमला ढेर हो गई। वह विजड़ित-सी बैठी पुरुष का मुँह ताक रही थी। किन्तु उसके मुख से एक शब्द भी नहीं निकला।

पुरुष अब उठकर खड़ा हो गया था। उसने अपनी ऊनी चादर उतारकर खाट पर फेंक दी, और वह खूँटी पर टंगी अचकन उतारकर पहिनने लगा। उसकी देह पहले ही चूड़ीदार पाजामे तथा कुर्ते से ढकी थी। सब खद्दर के बने हुए। अचकन भी मोटे पट्टू की थी। खादी ग्रामोद्योग से खरीदे हुए पट्टू की। अचकन पहिनते-पहिनते वह बोला : "चिन्ता की कोई बात नहीं। नेहरू की कलई भी जल्दी ही खुल जाएगी। अब वह वक्त आया चाहता है कि नेहरू को कोई-न-कोई पक्का फैसला करना ही पड़ेगा।"

कमला भी उठकर खड़ी हो गई थी। उसने पूछा : "क्या मैं जान सकती हूँ के आप कहना क्या चाहते है ?"

"मुल्क अमेरिकन अड्डा बनता जा रहा था। चीन को अपनी चिन्ता हुई। अब चीन किनारे पर आ लगा है। अब नेहरू को बहुत दिन की मोहल्लत नहीं मिल सकती।"

"क्या चीन जल्दी ही कोई कार्रवाई करेगा ?"

"चीन कुछ नहीं करना चाहता। उसको कहाँ फुरसत है ? देश के भीतर सोशलिस्ट रिकन्स्ट्रक्शन चल रहा है। देश के बाहर अमेरिकन इम्पीरियलिज़म का खतरा सिर पर सवार है। चीन नहीं चाहता कि खामखा हिन्दुस्तान से उलझे।"

"लेकिन उलझ तो गया ?"

"सिर्फ उतना ही जितना कि इस वक्त जरूरी था। इतने-से उलझाव में से निकलना कोई मुश्किल काम नहीं।"

"यानी ?"

"अगर हिन्दुस्तान चीन की दिलजमई कर देता है कि हिन्दुस्तान अमेरिकन अड्डा नहीं बनेगा, तो चीन अपना हाथ वापस खींच लेगा।"

"वह दिलजमई कैसे की जा सकती है ?"

पुरुष हँसने लगा। फिर कमला के निकट आकर उसका कंधा थपथपाता हुआ वह बोला : "हमारी कॉमरेड कमला को कैबीनेट मिनिस्टर बनाकर ! समझीं ? अब तो बात समझ में आ गई ?"

कमला ने कहा : "कोलीशन का रैज़ोल्यूशन तो पार्टी ने भी पास किया है। लेकिन नेहरू क्या कभी पार्टी की बात मानेगा ?"

"पार्टी की बात न माने। कॉमरेड क्रुश्चेव की बात तो मानेगा ?"

"क्या कॉमरेड क्रुश्चेव नेहरू को ये सलाह दे रहे हैं ?"

"नहीं तो पार्टी ऐसा रैजोल्यूशन क्यों पास करती ?"

"लेकिन यह तो मुमकिन नहीं। मुल्क में नेहरू के खिलाफ बलवा हो जाएगा।"

"बलवा करेगा कौन ?"

"फौज है। फिर मुल्क में दूसरी पार्टियाँ भी तो हैं।"

"पार्टियों की बात तो तुम भूल जाओ। वे न किसी दिन कुछ कर पाई हैं, न कर पाएँगी। रही फौज की बात। कृष्णा मेनन क्या इतने दिन से घास खोद रहा है ?"

"तो क्या....

"अब तुम ये सब बातें भी भूल जाओ। जैसे तुमने यह सब सुना ही नहीं किसी दिन। किसी के सामने ज़िक्र मत करना इस बातचीत का। नहीं तो मुझे तुमको अमेरिकन एजेन्ट क़रार देना पड़ेगा।"

यह चौथा आक्षेप था। एक प्रकार की धमकी। कमला की बोलती बन्द हो गई। उसकी समझ में नहीं आया कि उससे कही क्यों गईं वे सब बातें। उसका उनसे क्या सरोकार था ?

पुरुष ने फिर कहा : "और यह सब नहीं भी हो। सारी स्कीम ही फेल हो जाए। उसके लिए भी पार्टी तैयार है। पार्टी का पुराना तरीका तो कहीं नहीं गया। चीन में आज़माया जा चुका है वह तरीका।"

कमला के मुँह से निकला : "यानी के सिविल-वार ?"

"सिविल-वार नहीं, कमला ! वार ऑफ़ लिबरेशन कहो। ग़द्दारों के साथ लड़ी जाने वाली वार को कम्यूनिस्ट लोग कभी भी सिविल-वार नहीं कहते।"

"जी ! मुझसे ग़लती हो गई।"

"यह भी अमेरिकन कम्पनी कीप करने का कुपरिणाम है।"

अब की बार कमला को काठ मार गया। वह धम से अपनी कुरसी पर बैठ गई। पुरुष उसके निकट आकर बोला : "बैठने से काम नहीं चलेगा, कमला ! तुम तो कैबीनेट मिनिस्टर बनने की तैयारी करो।"

कमला की कुछ समझ में नहीं आया कि उसके साथ सहानुभूति प्रकट की जा रही है, अथवा उसका परिहास किया जा रहा है। वह एक भी शब्द बोले बिना बैठी रही।

पुरुष ने खाट पर पड़ी गांधी टोपी पहिन ली। फिर वह कोने में रक्खी हुई छड़ी उठाता हुआ बोला : "कमला ! इधर देखो ! बोलो कैसा लग रहा हूँ मैं ? क्या कोई कह सकता है कि मैं एड़ी से चोटी तक कांग्रेस का ब्लैक-मार्केटीअर नहीं हूँ ?"

कमला ने उसकी ओर देखा। पुरुष की बात सच थी। कमला की हँसी छूट पड़ी। बरबस। पुरुष ने उसकी ओर बढ़ते हुए कहा : "तो लाओ ! इसी बात पर मुँह मीठा करवा दो।"

कमला कुछ सोचती अथवा कहती, उसके पूर्व ही पुरुष ने उसका मुख अपने दोनों हाथों में लेकर उसके अधरोष्ठ पर एक चुम्बन अंकित कर दिया। कमला किसी प्रकार का प्रतिवाद नहीं कर पाई।

पुरुष हँसकर बोला : "मेरा तो कोई घरबार नहीं है, कमला ! मैं तो पार्टी की तरफ़ से मिलने वाली मुहब्बत पर ही जीता हूँ।"

कमला सिर झुकाए बैठी रही। पुरुष ने अपनी कलाई पर बँधी हुई घड़ी देखकर कहा : "इस वक्त ठीक एक बजा है। तुम अपनी घड़ी मिला लो। मेरे जाने के ठीक तीस मिनट बाद वे लोग तुम्हें लेने आएँगे। तब तक तुम अपनी जगह से मत हिलना। इस कमरे का कोई खिड़की-दरवाज़ा

खोलकर इधर-उधर झाँकने की भी तुम्हें इजाजत नहीं है। समझीं ?"

कमला ने भीत मृगी के समान खड़ी होकर कह दिया : "जी ! जैसा आपका हुक्म !"

"अच्छा ! अलविदा ! जरूरत हुई तो फिर मिलेंगे ।"

"जी ! लेकिन उस बात का तो कोई खातिरखाह फैसला...

"हबीब का मसला तो तुम्हारा जाती मसला नहीं है। वह पार्टी का मसला है। पार्टी उसके बारे में जो ठीक समझेगी वही ठीक वक्त पर करेगी। तुम हबीब को भूल जाओ, कमला !"

कमला ने सिर झुका लिया। पुरुष एक दरवाजा खोलकर कमरे के बाहर हो गया। उसकी पदचाप अनसुनी होते ही कमला ने मुँह बिचका-कर फर्श पर थूक दिया। बड़े आवेश से। वह चुम्बन उसके अधरों पर अंगार-सा जल रहा था। यदि उसका बस चलता तो वह अपने अधरोष्ठ भी तोड़कर फेंक देती। किन्तु वह विवश थी। सच, पार्लमिन्ट में कम्यू-निस्ट पार्टी की प्रसिद्ध प्रतिनिधि पालतू कुत्ते की नाईं परवश थी !!

कमला की आँखों से आँसुओं की धार बह चली। उसने झट से पोंछ लिए वे आँसू। किसी को दिखलाने नहीं थे वे आँसू। उसके लिए तो रोना भी मना था।

दूसरा परिच्छेद

कई दिन उपरान्त। मजदूर-बस्ती के मैदान में साधु बाबा का धूना जल रहा था। रात का दूसरा पहर अभी आधा ही बीता होगा। कई एक मजदूर लोग धूने के तीन ओर उपासीन होकर, शरीर की सिहरन मिटाने के साथ-साथ, साधु बाबा के सत्संग का लाभ भी उठा रहे थे।

साधु बाबा के शरीर पर इस समय केवल उनकी कोपीन मात्र थी। कुरता भी उन्होंने उतारकर रख दिया था। अग्नि-शिखाओं के शतमुख प्रकाश में उनका शरीर तपे हुए सोने-सा दमक रहा था। और उनके तेजस्वी मुख तथा उन्नत ललाट पर एक दिव्य प्रताप प्रज्वलित था।

एक मजदूर ने विनम्र वाणी में पूछा : "महाराज! हम ने आज तक जिस किसी का भी भाषण सुना, जो भी पत्र अथवा पुस्तक पढ़ी, उसी में यह संदेश मिला—हमारे समाज की व्यवस्था विकृत है, उस व्यवस्था में परिवर्तन किए बिना परित्राण नहीं हो सकता। किन्तु आपकी बातों से तो कुछ अन्य ही निष्कर्ष निकलता है?"

साधु बाबा मुस्कराए। फिर वे शान्त स्वर में बोले : "धनपत! समाज की व्यवस्था तो विकृत है ही। इस विषय में तो विवाद की गुञ्जायश नहीं। किन्तु प्रश्न तो यह है कि इसका सुधार किस दिशा में किया जाए। क्या तुम इस प्रश्न का उत्तर जानते हो?"

धनपत ने उत्तर दिया : "महाराज! मैं जितना ही सोचता हूँ उतना ही उलझता जाता हूँ। समाजवादी एक दिशा की ओर संकेत करते हैं। कम्यूनिस्ट दूसरी दिशा की ओर। सर्वोदयवादियों का सिद्धान्त भी मैंने सुना

है। वह इन दोनों से विभिन्न है। अब ये स्वतन्त्र पार्टी वाले एक अलग राग अलापने लगे।"

"तुम तो हिन्दू हो, धनपत ! हिन्दू-धर्म क्या इस विषय में कोई समाधान प्रस्तुत नहीं करता ?"

"मेरा जन्म तो हिन्दू घर में ही हुआ था, महाराज ! मेरे संस्कार भी हिन्दू हैं। किन्तु ज्यों-ज्यों मेरी आयु बढ़ती जाती है त्यों-त्यों मुझको यह विश्वास होता जाता है कि हिन्दू-धर्म के पास इस समस्या का कोई समाधान नहीं....

एक अन्य मजदूर बीच में ही बोल उठा : "धनपत ! तुमसे हमने कितनी बार कहा है कि यदि तुम अपने हिन्दू संस्कारों को बचा कर रखना चाहते हो तो हमारी शाखा में आया करो। तुम हमारी बात मानते ही नहीं। फिर तुम्हारा विश्वास यदि टूटता है तो आश्चर्य की क्या बात है ?"

धनपत बोला : "तुम्हारी शाखा में तो मैं सौ बार आ जाऊँ, मनसाराम ! किन्तु पहले तुम्हारा सिद्धान्त तो मुझे ज्ञात हो जाए। कितनी बार पूछा है तुमसे कि अपना सिद्धान्त समझा दो। किन्तु तुम प्रत्येक बार मेरी बात टाल गए। बस एक ही बात कहते रहते हो—हिन्दू समाज को संगठन की आवश्यकता है।"

मनसाराम ने पूछा : "तो क्या तुम्हारे मत में हिन्दू समाज को संगठन नहीं चाहिए ?"

धनपत ने उत्तर दिया : "सो बात मैंने कभी नहीं कही। संगठन तो सब समय चाहिए। संगठन के बिना तो संसार में कुछ भी करना सम्भव नहीं। और मैं तुम्हारे संगठन पर हृदय से मुग्ध हूँ। कितना त्याग और कैसी तपस्या है तुम्हारे स्वयंसेवक में। किन्तु सिद्धान्त के अभाव में वह दिशाहारा है। उसके पास विश्वास का बल है, किन्तु विवेक के अभाव में वह समस्त बल व्यर्थ होकर रह जाता है।"

एक तीसरा मजदूर बोला : "वाह ! यह तुम कैसे कहते हो, धनपत ! तुमने कभी हमारा सिद्धान्त समझने की चेष्टा ही नहीं की। कितनी बार कहा कि हमारी पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ा करो। 'पाञ्चजन्य' की कितनी प्रतियाँ

मैंने तुमको अपने हाथ से दी हैं। तुम पढ़ते ही नहीं। जब देखो तब कम्यू-निस्टों की कुराफात में सिर खपाते रहते हो।"

धनपत हँसने लगा। फिर वह बोला : "पूरन ! मैं मौन रहा इसका अर्थ यह नहीं है कि 'पाञ्चजन्य' मैंने पढ़ा नहीं। तुमने जितनी प्रतियाँ मुझे दी हैं वे सब मैंने पढ़ी हैं।' और भी बहुत सी प्रतियाँ पढ़ी हैं। पुस्तकालय में जा-जाकर। अब फिर तुम यदि...

मनसाराम ने पूछा : "तब तो तुम समझ गए होगे कि हमारा सिद्धान्त क्या है ? क्यों, धनपत !"

धनपत मनसाराम की ओर देखकर किञ्चित् गम्भीर हो गया। फिर वह बोला : "हाँ, समझ तो गया।"

पूरन ने पूछा : "तो फिर ?"

धनपत बोला : "मैं यही सोचता हूँ कि मुझे यदि कम्यूनिज़म के सिद्धान्त को ही स्वीकार करना है तो सीधा कम्यूनिस्ट साहित्य ही क्यों न पढ़ूँ ? कम्यूनिस्ट सिद्धान्त की सस्ती नक़ल से मेरा काम नहीं चल सकता।"

पूरन गुर्राया : "क्या मतलब !"

धनपत ने शान्त स्वर में उत्तर दिया : "तुम्हारा 'पाञ्चजन्य' तो कम्यू-निस्ट पत्र-पत्रिकाओं की ही प्रतिलिपि है। केवल उसकी छपाई, बँधाई और भाषा की सफाई इत्यादि उतनी निखरी हुई नहीं है।"

मनसाराम को क्रोध आ गया था। वह बोला : "कम्यूनिस्ट को तो सब स्थान पर कम्यूनिज़म ही दिखाई देता है।"

किन्तु धनपत ने उसकी बात का बुरा नहीं माना। वह उसी प्रकार शान्त रहकर बोला : "यह तुम्हारी भूल है, मनसाराम ! मैं कम्यूनिस्ट साहित्य पढ़ता अवश्य हूँ। किन्तु मैं कम्यूनिस्ट तो नहीं हूँ। हाँ, कम्यूनिज़म के सिद्धान्त को पूरी तरह पहचानता हूँ। वह सिद्धान्त मुझको जहाँ भी, जिस भी भाषा में, जिस भी आवरण में मिलेगा, मैं तुरन्त उसको पहचान लूँगा।"

पूरन ने अपना स्वर ऊँचा करके पूछा : "तो क्या तुम्हारे सिवाय कोई

दूसरा आदमी कम्युनिज़म को पहचानता ही नहीं ?"

धनपत ने उत्तर दिया : "बहुत-से लोग हैं जो मुझसे भी अच्छा पहचानते हैं। किन्तु मैं तो तुम्हारे संगठन की बात कह रहा हूँ। तुम्हारे विषय में मैं यह निस्सन्देह कह सकता हूँ कि तुम उस सिद्धान्त को बिल्कुल नहीं समझते।"

मनसाराम ने पूरन का कन्धा छूकर कहा : "जाने भी दो, पूरन ! इससे क्यों उलझते हो ? जिसका दिमाग़ ही खराब हो उसके साथ बातें करने से कोई फायदा नहीं।"

पूरन मौन हो गया। धनपत ने भी कुछ नहीं कहा। वहाँ का वातावरण सहमा एक मनोमालिन्य से छलछला उठा। साधु बाबा अपने नेत्र निमीलित किए ध्यानस्थ-से बैठे थे। उनका ध्यान भंग करते हुए एक चौथे मज़दूर ने पूछा : "महाराज ! इन लोगों का यह विवाद तो बहुत पुराना है। इसका फैसला तो कभी होगा ही नहीं। आप ही बतलाइए कि इन सब मत-मतान्तरों में से आपको कौनसा मान्य है ?"

साधु बाबा ने आँखें खोलकर पूछा : "कौन से मत-मतान्तर, करनसिंह !"

करनसिंह ने उत्तर दिया : "कांग्रेस और सोशलिस्ट पार्टियों का समाजवाद। कम्यूनिस्ट पार्टी का सोवियतवाद। गांधीवादियों का सर्वोदयवाद। और स्वतन्त्र पार्टी का पूंजीवाद। आजकल तो हमारे सम्मुख ये ही चार मत हैं। जनसंघ इत्यादि तथाकथित हिन्दू संगठन तो इन्हीं मतों में से कुछ-कुछ उधार लेकर अपनी डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग पका लेते हैं। उनकी बात मैं नहीं कहता।"

पूरन फिर उत्तेजित हो गया। वह कुछ कहा ही चाहता था कि साधु बाबा ने अपना हाथ उठाकर निषेध कर दिया। फिर वे मधुर स्वर में बोले : "करनसिंह के कटाक्ष पर ध्यान मत दो, पूरन ! जनसंघ का सिद्धान्त मैं इन लोगों से नहीं, तुमसे ही समझूँगा। इनको अपनी बात कह लेने दो।"

तब उन्होंने करनसिंह को सम्बोधित किया : "करनसिंह ! पहले तुम

मुझको इतना समझा दो कि इन चारों दलों के सिद्धान्तों में अन्तर क्या है ?"

करनसिंह साधु बाबा का मुँह देखने लगा। इस प्रकार का प्रश्न उसने आज पहिले-पहल सुना था। अदभुत प्रश्न था ! ये चारों दल एक-दूसरे को गाली देते हुए नहीं अघाते थे ! और साधु बाबा को अभी तक यही समझ में नहीं आया था कि इन दलों के बीच अन्तर क्या है ! ! करनसिंह कुछ भी नहीं कह पाया।

तब साधु बाबा ही बोले : "गौण प्रसंगों को भूल जाओ, करनसिंह ! पहले प्रमुख प्रसंग पर ही ध्यान दो। प्रमुख प्रसंग पर ये सब क्या कहते हैं ?"

करनसिंह असमञ्जस में पड़ गया। यह प्रश्न भी उसकी समझ में नहीं आया। एक क्षण विचार करके उसने उत्तर दिया : "मैंने तो कभी इस प्रकार से सोचा ही नहीं, महाराज ! मैंने क्या, शायद किसी ने भी नहीं सोचा। किसी ने सोचा हो तो उसे मैं जानता नहीं। अब आप ही प्रमाण हैं। आप ही बतलाइए कि प्रमुख प्रसंग क्या है ?"

साधु बाबा मुस्कराने लगे। उन्होंने करनसिंह को करुण दृष्टि से निहारा। फिर वे बोले : "प्रमुख प्रसंग है समस्याओं के सारभूत समाधान का। समस्याओं की उत्पत्ति किस स्तर पर होती है, और उनका सुलझाव किस स्तर पर खोजा जाए—यह है प्रमुख प्रसंग। और इस प्रकार देखने पर मुझे तो इन सब मत-मतान्तरों में कोई अन्तर नहीं दिखाई देता। इसके विपरीत ये सब मत-मतान्तर एक ही बक्से के चट्टे-बट्टे जान पड़ते हैं।"

करनसिंह ने कहा : "महाराज ! मैं तो आपकी बात नहीं समझा।"

"बात बहुत गूढ़ नहीं है, करनसिंह। सीधी-सी बात है। आहार, निद्रा, भय तथा मैथुन के प्रसंग में तो मनुष्य और पशु में अन्तर नहीं। मनुष्य का मनुष्यत्व है उसका आत्मनियन्त्रण। पशु को बाहर से नियन्त्रित करना पड़ता है। इसलिए जो भी सिद्धान्त केवल बाह्य व्यवस्था के परिवर्तन को ही पर्याप्त मानता हो वह अन्ततः मनुष्य और पशु को भिन्न प्रकार के प्राणी नहीं मानता। इस दृष्टि से देखने पर ये सारे सिद्धान्त एक समान हैं। ये सब-

के-सब यही तो कहते हैं कि समाज की व्यवस्था ऐसी बना लो, वैसी बना लो, मनुष्य का कल्याण हो जाएगा। मनुष्य को आत्मनियन्त्रण के विषय में तो ये सब कुछ नहीं कहते। इन सब की मौलिक मान्यता यही है कि मनुष्य को बाहर से ही नियन्त्रित किया जा सकता है। इनमें यदि किसी बात पर मतभेद है तो नियन्त्रण की मात्रा पर, नियन्त्रण की पद्धति पर। किन्तु वह तो गौण प्रसंग है।"

साधु बाबा मौन हो गए। उनके सम्मुख बैठे सब लोग उनके कथन का मनन कर रहे थे। सहसा किसी ने मुख नहीं खोला। विभिन्न दलों के सिद्धान्तों को समझने के लिए यह एक नया दृष्टिकोण था।

कुछ क्षण उपरान्त एक पाँचवाँ मजदूर बोला : "महाराज! समाजवाद, कम्यूनिजम तथा पूँजीवाद के विषय में तो आपकी बात सत्य है। वे सब-के-सब मनुष्य को बाह्य परिस्थितियों का पुतला मानते हैं। इसलिए वे बाह्य परिस्थितियों में ही परिवर्तन करने के लिए उद्योगरत रहते हैं। किन्तु सर्वोदयवाद के सम्बन्ध में यह बात सत्य नहीं। सर्वोदयवाद तो आत्म-नियन्त्रण के सिद्धान्त को ही मानता है।"

साधु बाबा मुस्कराने लगे। कुछ बोले नहीं। तब एक छठे मज़दूर ने कहा : "यह बात तो सत्य है, महाराज! सर्वोदयवाद का सिद्धान्त है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओं को जितना ही कम करेगा और अपने जीवन को जितना ही सरल तथा सीधा-सादा बनाएगा, उतना ही वह सुखी होता जाएगा।"

साधु बाबा ने पाँचवें मजदूर से कहा : "और सरल तथा सीधा-सादा जीवन केवल छोटे छोटे एवं आत्मनिर्भर गाँवों में ही सम्भव है। अतएव नगरों को नष्ट होने देकर यदि हम ग्राम-ही-ग्राम बना डालें तो मनुष्य का कल्याण हो जाएगा। सर्वोदयवाद यही तो कहता है ना, मनसुख!"

फूलचन्द बोला : "हाँ, महाराज!"

"यह तो वही बात हुई। समाजवाद, कम्यूनिजम तथा पूँजीवाद के सिद्धान्त कहते हैं कि गाँव को नष्ट होने देकर अथवा नष्ट करके नगरों का

निर्माण करने से तथा मनुष्य की आवश्यकताओं में अभूतपूर्व वृद्धि करने से मनुष्य कल्याण को प्राप्त होगा। सर्वोदयवादी इससे उलटी बात कहते हैं। किन्तु दोनों पक्षों के लिए बाह्य परिस्थिति ही प्रधान तत्त्व है। अन्तर की आत्मप्रेरणा तो नहीं ना ?"

"नहीं, महाराज ! सर्वोदयवाद के किसी भी सेवक की जीवनप्रणाली देख लेने से ही यह ज्ञात हो जाएगा कि उस सिद्धान्त में आत्मनियन्त्रण का कितना महत्व है।"

"किन्तु वह आत्मनियन्त्रण तो अन्तःसार-शून्य है, मनसुख ! कपड़ा पहिनने के विषय में आत्मनियन्त्रण ! नमक-मिर्च खाने के विषय में आत्म-नियन्त्रण ! बस ! ! मनुष्य का जीवन रस से रीता हो जाए, सौन्दर्य का स्रोत सूख जाए, शरीरयात्रा के परे मनुष्य के जीवन में कुछ रहे ही नहीं ! ! यह जीवन तो पशु के जीवन से भी हीन होगा। पाषाण के लिए ही विहित है यह जीवन। पशु भी अपने जीवन में किंचित्मात्र रस और सौन्दर्य तो जुटाता ही है।"

मनसुख की समझ में नहीं आया कि वह क्या कहे। कई-एक सर्वोदय-वादियों को उसने देखा था। उनके जीवन में उसने खाने-पहिनने के विषय में एक विकट वितण्डावाद के अतिरिक्त कभी कुछ नहीं पाया था। न साहित्य में रुचि, न संगीत का सेवन, न कल्पना की कतरब्योंत, न भावना का विलास। उसको वे सब के सब ऐसे लगे थे जैसे किसी जराजीर्ण बरगद के रसविहीन ठूँठ हों।

साधू बाबा ने आगे कहा : "समाजवाद, कम्यूनिज़म और पूँजीवाद-इत्यादि जड़वादी सिद्धान्त आत्मनियन्त्रण का प्रयोजन अस्वीकार करते हैं। किन्तु उनकी इस अस्वीकृति के पीछे एक विश्वदर्शन है। इसलिए वे अपने सिद्धान्त का मण्डन कर सकते हैं। विपरीत सिद्धान्तों का खण्डन भी। सर्वो-दयवाद के आत्मनियन्त्रण के पीछे तो कोई विश्वदर्शन नहीं। वे तो केवल समाज-कल्याण की ही दुहाई देकर अपनी बात मनवाना चाहते हैं।"

मनसुख बोला : "महाराज ! सर्वोदयवाद का विश्वदर्शन वही है जो

महात्मा गांधी का था।"

"महात्मा गांधी तो हिन्दू थे। वे आजीवन अपने-आपको निष्ठावान सनातनी हिन्दू कहते रहे। किन्तु किसी सर्वोदयवादी को एक बार हिन्दू कहकर देखो तो। वह क्रोध के मारे पागल हो उठेगा। सर्वोदयवादी को तुम चाहो तो नरक का कीड़ा कह सकते हो। उसको हिन्दू कहने की भूल तुम कभी मत कर बैठना, मनमुख !"

मनमुख फिर मौन हो गया। यह बात भी सत्य थी। उसने स्वयं अनुभव किया था कि हिन्दुधर्म का नाम लेते ही सर्वोदयवादी भड़क उठते है।

पूरन बोला : "महाराज ! आप महात्मा गांधी को हिन्दू मानते है तो माने। किन्तु हम उसको हिन्दू नहीं मान सकते। उसके द्वारा हिन्दुराष्ट्र का बहुत बड़ा अहित हुआ है। वह हिन्दुराष्ट्र का तो शत्रु था। और मुस्लिम लीग का परम मित्र।"

साधु बाबा बोले : "मैं मानता हूँ कि गांधीजी के हाथों हिन्दुराष्ट्र का अहित ही हुआ है। किन्तु मैं यह नहीं मानता कि वे हिन्दू नहीं थे, अथवा हिन्दु-समाज के प्रति विद्वेष का पोषण करते थे। उनके हृदय मे तो हिन्दु-समाज के कल्याण की भावना ही सर्वोपरि थी।"

मनसाराम ने पूछा : "तो फिर उनके हाथों यह अनर्थ हुआ कैसे ? उनके कारण देश का विभाजन हुआ। और उनका उत्तराधिकार पाया उन लोगों ने जो सब प्रकार से अहिन्दु अथवा म्लेच्छ है।"

साधु बाबा ने कहा : "राष्ट्र का विभाजन तो गांधीजी नहीं होते तो भी होता। वह अन्य बात है। हिन्दुसमाज का हाजमा ही बहुत दिन से खराब है। उसके लिए मैं गांधीजी को दोषी नहीं मानता। किन्तु अपने उत्तराधिकारियों के लिए वे अवश्य उत्तरदायी हैं। नेहरू उन्ही का पोष्य-पुत्र है।"

"यही सही। यह क्यों हुआ ?"

"हिन्दुधर्म का नाम सनातन धर्म है, मनसाराम ! वह किसी एक महापुरुष का प्रवचन नहीं, वह किसी एक पुस्तक में निबद्ध नहीं, वह किसी

एक मीमांसा अथवा सम्प्रदाय की सम्पत्ति नहीं। हिन्दु धर्म की पुरातनतम परम्परा ही हिन्दुधर्म के लिए प्रमाण है। उस परम्परा का परित्याग करके जिसने भी अपने बुद्धि-बल से हिन्दुधर्म की व्याख्या करना चाहा है, उसीके हाथों अनर्थ हुआ है। गांधीजी अकेले ही अथवा पहले ही अनर्थकारी नहीं थे। इस अनर्थ का सूत्रपात बहुत पहले ही हो चुका था। डेढ़ हजार वर्ष पूर्व। आचार्यों के युग में। और सब आचार्यों के उत्तराधिकारी ही एक समान निकम्मे निकले। हिन्दुधर्म के सम्पूर्ण सिद्धान्त को स्वीकार किये बिना जो कोई भी हिन्दुधर्म की व्याख्या करेगा, वही अनर्थ का दोषी होगा।"

पूरन ने पूछा : "हिन्दुधर्म का सम्पूर्ण सिद्धान्त क्या है, महाराज !"

साधु बाबा हँसने लगे। फिर उन्होंने कहा : "यह प्रश्न तो मुझे तुमसे पूछना है, पूरन !"

"मुझसे ! मैं इस प्रश्न का क्या उत्तर दूँगा, महाराज !"

"कुछ देर पहले जब तुम धनपत पर क्रुद्ध हो रहे थे तब मुझे ऐसा आभास हुआ था कि तुम हिन्दुधर्म का सम्पूर्ण सिद्धान्त जानते हो। क्या मुझसे भूल हुई ?"

पूरन ने सिर झुका लिया। साधु बाबा के स्वर में व्यंग्य था। किन्तु स्नेह भी। पूरन कुछ नहीं कह पाया। तब मनसाराम बोला : "महाराज ! हिन्दूधर्म कहकर तो कोई एक सिद्धान्त नहीं। हिन्दू कहलाने वाले अनेक सम्प्रदाय हैं। धर्म के नाम पर उनमें एकमत सम्भव नहीं। किन्तु हिन्दु-समाज तो एक है, हिन्दुराष्ट्र के नाम पर तो एकमत का संग्रह सम्भव है ?"

साधु बाबा ने पूछा : "यह हिन्दुसमाज अथवा हिन्दुराष्ट्र क्या है ?"

"वह समाज जो अनादिकाल से इस भूमि पर वास करता आया है। वह समाज जिसके लिए यह भूमि माता के समान पावन है।"

"तो क्या वे लोग जो दूसरे देशों में वास करने लगे, हिन्दुसमाज में परिभुक्त नहीं रहे ? और क्या वे लोग जो इस भूमि के बाहर रहकर भी इस भूमि को पावन मानते हैं, हिन्दुसमाज के अन्तर्गत हैं ? जैसे जापान, ब्रह्मदेश, सिंहल इत्यादि के बौद्ध ?"

मनसाराम मौन हो गया। तब धनपत बोला : "महाराज ! मैं भी इन लोगों से बारबार यह कहता रहता हूँ कि हिन्दुत्व का कोई सिद्धान्तात्मक आधार होना चाहिए, कोई विश्वदर्शन होना चाहिए। तीज-त्यौहार, मेले-ठेले, तीरथ-मन्दिर को लेकर ही हिन्दुत्व पूरा नहीं हो जाता। हिन्दु इतिहास के महापुरुषों को मिलाकर भी नहीं। हिन्दुत्व का सार तो कुछ और ही है। उसको पाए बिना, उसको हृदयंगम किए बिना कोई भी अपने-आपको हिन्दू नहीं कह सकता।"

धनपत की बात सुनकर पूरन फिर उत्तेजित हो उठा। वह धनपत से बोला : "तुम हिन्दुत्व की चिन्ता में क्यों मरे जा रहे हो, धनपत ! तुमको तो तुम्हारा कम्यूनिज़म ही मुबारक हो। हिन्दुत्व की चिन्ता हिन्दू लोग अपने-आप कर लेंगे।"

धनपत ने पूरन का कटाक्ष अनसुना कर दिया। वह साधु बाबा से बोला : "महाराज ! कम्यूनिज़म का सिद्धान्त अपने आधार में अत्यन्त कच्चा है। किन्तु तदनन्तर वह सम्पूर्ण है। उसकी व्याख्या में कुछ भी बाद नहीं दिया गया। सृष्टिक्रम के विषय में कम्यूनिज़म का सिद्धान्त सुनिश्चित है। इतिहास-क्रम के विषय में भी। समाज रचना तथा राजनैतिक व्यवस्था के विषय में कम्यूनिज़म निश्चयपूर्वक बोलता है। साहित्य, शिल्प तथा अन्यान्य प्रसंगों पर भी। इसलिए कम्यूनिज़म के अनुयाइयों में एक निष्ठा पाई जाती है, एक दृष्टि देखी जाती है, एक विवेक का परिचय मिलता है। वे अपने शत्रु-मित्र की पहचान तुरन्त कर लेते हैं। किन्तु....

मनसाराम बीच में ही बोल उठा : "इतनी पहिचान तो हमको भी हो गई कि तुम हिन्दुराष्ट्र के शत्रु हो !"

धनपत ने दुःखित होकर कहा : "नहीं, मनसाराम ! इतना-भर भी तुम नहीं जानते। यदि तुम इतना-भर जान लेते तो मुझको तुम से कोई शिकायत नहीं रह जाती।"

मनसारम कुछ कहना ही चाहता था कि बस्ती के एक छोर से किसी पुरुष के उच्चकण्ठ गान ने वातावरण को विद्ध कर दिया। कोई अपने फटे

हुए, भोंडे स्वर में रेंक रहा था :

मैंने पीणा सीख लिया है !!!
मिरी जान सुणो ! मैंने पीणा...

सब ने एक साथ उस ओर देखा। एक उच्चाकाय पुरुष, बार-बार लड़खड़ाता हुआ, अपनी भारी-भरकम देह के भार को बस्ती के पूर्व से पश्चिम की ओर ले जाने के प्रयास में, मैदान पार कर रहा था।

पूरन ने कहा : "अरे ! यह तो जोरावर है !"

मनसाराम ने कहा : "पीकर आया है।"

पाँचवा मजदूर बोला : "उस गुँड के पास जा रहा होगा। कम्युनिस्ट यूनियन के लीडर की लीला देख लो, भाई !"

धनपत ने कहा : "आज कोई नई बात तो है नहीं, फूलचन्द ! यह तो रोज का किस्सा है। छोड़ो इसकी बात।"

जोरावरसिंह का जयगान अभी भी चल रहा था :

मैंने पीणा सीख लिया है...

साधु बाबा ने सहसा अपना चिमटा उठा लिया। और दूसरे क्षण उनका गान भी वातावरण में व्याप्त हो गया :

राम-रस मीठा रे ! कोई पीवै साधु सुजाण !
जो रस पीवै प्रेमसूँ, सो अबिनासी प्राण !!
राम-रस मीठा रे...

जोरावरसिंह चलता-चलता रुक गया। उसने एक आँख उठाकर साधू बाबा तथा उनके सत्संगियों की ओर देखा। साधु बाबा का चिमटा बज रहा था। किन्तु उनका कण्ठ भजन की टेक गाकर मूक हो चुका था। जोरावरसिंह ने पाँव पटककर और भी औद्धत्य के साथ गाया :

मैंने पीणा सीख लिया है...

साधु बाबा ने भी प्रत्युत्तर दिया :

इहि रस मुनि लागे सबै, ब्रह्मा बिसुन महेस !
सुर नर साधू संत जन, सो रस पीवै सेस !!

राम-रस मीठा रे...

जोरावरसिंह धूने की ओर बढ़ आया। उसकी चाल में भी औद्धत्य था। मनसाराम ने कहा : "यह तो झगड़ा करेगा।"

फूलचन्द बोला : "महाराज ने इसकी मीटिंग तोड़ी उसी दिन से यह इन पर बहुत बिगड़ा हुआ है।"

पूरन ने कहा : "जरा आँख तो उठा दे इनकी ओर ! फिर देखूं यह कैसे अपनी हड्डी-पसली सलामत ले जाता है।"

जोरावरसिंह धूने की ओर आ रहा था। धीरे-धीरे। और साधु बाबा गा रहे थे :

सिध-साधक जोगी-जती, सती सबै सुखदेव !
पीवत अन्त न आवई, ऐसा अलख अभेव ।।

जोरावरसिंह धूने से दस कदम दूर आकर रुक गया। उसकी आँखें क्रोध से जल रही थीं। उन्हीं आँखों से उसने साधु बाबा तथा सत्संगियों को निहारा। मानो सबको जलाकर भस्म कर देगा। सत्संगी एकटक उसकी ओर देख रहे थे। किन्तु साधु बाबा ने आँखें नहीं खोलीं। वे भजन गाने में लीन थे :

इहि रस राते नामदे, पीपा अरु रैदास !
पिवत कबीरा ना थक्या, अजहूँ प्रेम-पियास !!
राम रस मीठा रे...

जोरावरसिंह तड़प उठा। और उसने कड़ककर कहा : "बे बन्द कर ! साला...."

गाली सुनते ही पूरन उठकर खड़ा हो गया। और गाली का प्रथम पद ही जोरावरसिंह की जबान से निकल पाया। वह पूरन को देखता हुआ मौन हो गया। पूरन बहुत हट्टा-कट्टा आदमी था। नित्यप्रति के व्यायाम से सधे हुए शरीर वाला।

साधु बाबा अभी भी गा रहे थे :

यह रस मीठा जिन पिया, सो रस माहि समाँहि !
मीठा मीठे मिल रह्या, दादू अनत न जाँहि !!
राम रस मीठा रे....
राम रस मीठा रे ! कोई पीवत साधु सुजाण !

भजन समाप्त हुआ। साधु बाबा ने आँखे खोलीं। जोरावरसिंह आगे बढ़कर धूने के पास आ पहुँचा। फिर वह बड़े तपाक से बोला : "पूरण ! भैया ! बस्ती में तुम लोगों ने ये मुस्टण्डा क्यूँ पाल लिया ?"

पूरन ने उत्तर नहीं दिया। जोरावर सिंह का साहस फिर बढ़ गया। वह साधु बाबा को सम्बोधित करके बोला : "बोल बे मोडे ! बोल तुझे अमरीकण अम्बासी से कित्ते डालर मिले है ?"

साधु बाबा ने उत्तर नहीं दिया। धनपत ने जोरावरसिंह से कहा : "जोरावरसिंह ! तुम इस वक्त यहाँ से चले जाओ ! तुम नशे में हो, भैया ! तुमको ज्ञान नहीं रहा है कि तुम किससे क्या कह रहे हो।"

जोरावरसिंह हँसने लगा। फिर वह बोला : "धनपत ! तू क्या जाने ग्याण क्या होता है ? तू ने तो कभी पीई नहीं। एक बूँद भी नहीं पीई। एक बार पीकर देख ले। फिर कहियो के ग्याण क्या होता है।"

धनपत ने कोई उत्तर नहीं दिया। और कोई भी कुछ नहीं बोला। जोरावरसिंह ने फिर साधु बाबा को सम्बोधित किया : "बे बोल ! राजी-खुशी यहाँ से जाएगा या...

पूरन ने बीच में ही कहा : "जोरावरसिंह ! तुम हमसे बात करो। साधु बाबा को हम लोगों ने ही यहाँ ठहराया है।"

"तो क्या तुम लोग भी डालर के फेर में आ गए ?"

"डालर-फालर मैं कुछ नहीं जानता। ये भगवान् के भक्त हैं। हमें इनका सत्संग अच्छा लगता है। अच्छी-अच्छी बातें कहते हैं ये।"

"बे जाणे दे ! जाणता हूँ कैसा सतसंग होता है। तुम सब तो अभी चले जाओगे। और बस्ती की बहू-बेटियाँ...

पूरन ने चीत्कार किया : "ज़बान सँभालकर बोलो, जोरावरसिंह !"

जोरावरसिंह दब गया। उसने दबी ज़बान में कहा : "सच्ची बात सबको बुरी लगती है, पूरण! लेकिन मैं तो तुम्हारी तरह बेपरवा नहीं हो सकता। बस्ती के भले-बुरे की जिम्मेवारी मुझ पर है। मुझ को...

धनपत ने कहा : "और हम सब क्या मिट्टी के माधो हैं, जोरावर-सिंह!"

जोरावरसिंह बोला : "दिखाई तो ऐसा ही देता है।"

"तो ठीक है। तुम अपना काम देखो। हम अपना काम कर रहे हैं।"

"तो मुझे अपना काम करने दो।"

जोरावरसिंह साधु बाबा की ओर बढ़ा। कमीज़ की बाँहें ऊपर चढ़ाता हुआ। पूरन ने उसका रास्ता रोक लिया। उन दोनों में हाथा-पाई हुआ ही चाहती थी कि साधु बाबा लपककर बीच में आ पड़े। वे पूरन से बोले : "पूरन! तुम लोग एक कारखाने में काम करते हो। एक बस्ती में बास है तुम्हारा। फकीर में के लिए आपस झगड़ा मत करो।"

जोरावर सिंह ने अपना बाँया हाथ घुमाकर एक भरपूर तमाचा साधु बाबा के गाल पर जड़ दिया। दूसरे क्षण पूरन की आँखों में खून उतर आया। वह जोरावर सिंह पर पिल पड़ना चाहता था कि साधु बाबा ने उसको अपने आलिङ्गन में बाँध लिया। वे शान्त स्वर में बोले : "पूरन! तुम्हें भगवान् की सौगन्ध जो तुम झगड़ा करो। यदि तुमने झगड़ा किया तो मैं इसी समय यहाँ से चला जाऊँगा।"

धनपत ने उठकर जोरावरसिंह को पकड़ लिया। और उसको पीछे की ओर धकेलता हुआ वह बोला : "जोरावरसिंह! बस्ती की जिम्मेदारी तुम अकेले पर नहीं है। कल चारों यूनियन मिलकर जो फैसला करेंगी वह हमको स्वीकार होगा। इस समय तुम यहाँ से चले जाओ, भैया!"

जोरावर सिंह बड़बड़ाता हुआ लौट चला। वह अपनी भाषा में चुनी हुई गालियों की बौछार कर रहा था।

साधु बाबा अपने स्थान पर आ बैठे। और एक बार फिर वे अपना चिमटा बजा-बजाकर गाने लगे :

साधो ! निन्दक मीत हमारा !

निन्दक को निकटै ही राखौं, होन न देउँ नियारा !!

साधो ! निन्दक मीत...

उनकी आँखों से आँसू बह रहे थे। सत्संगियों की आँखें भी गीली हुए बिना नहीं रह सकीं।

: २ :

परमानन्द की कार मथुरा रोड पर दौड़ रही थी। पास की सीट पर बैठी थी रोजा। हाथ पर हाथ धरे। मौन, गम्भीर। किञ्चित् चिन्तित-सी।

परमानन्द ने पूछा : "यह तुझे अचानक क्या धुन सवार हो गई, रोज़ी !"

रोजा ने जैसे चमककर कहा : "कौन-सी धुन ?"

"बिंदरावन जाने की।"

"वृन्दावन में तो मुझे कोई खास काम नहीं है। कहीं और चला चल।"

"और कहाँ ? आगे तो मथुरा है। और फिर आगरा।"

"तो फिर आगरा चला चल।"

"लेकिन आजकल तो अँधेरी है।"

"तो क्या हुआ ?"

"ताजमहल देखने का मज़ा नहीं रहेगा।"

"लेकिन ताजमहल कौन देखना चाहता है ? तेरा जी करता है क्या ?"

परमानन्द ने कार को एक किनारे से रोक लिया। फिर वह मुख पर पड़ी धूल को रुमाल से पोंछता हुआ बोला : "रोज़ी ! बतला तो, बात क्या है ?"

रोजा ने सूखी हँसी हँसकर उत्तर दिया : "क्या बतलाऊँ ? कोई बात हो तो बतलाऊँ ?"

"कुछ बात तो जरूर है। तू मुझसे छिपाना चाहती है तो छिपा ले। लेकिन कुछ बात है जरूर।"

"तू ही बतला दे के क्या बात है ?"

"मैं जानता तो तुझसे क्यों पूछता ?"

रोज़ा ने कुछ नहीं कहा। सहसा उसका मुख रूँआँसा हो उठा था। अभी तक मानो वह अपने आँसू संभाले हुए थी। वे आँसू उससे और नहीं सँभाले गए। और उनको छुपाने के लिए रोज़ा ने अपना मुख फेर लिया।

परमानन्द की समझ में कुछ नहीं आया। वह विवश-सा बैठा रहा। विण्ड-शील्ड पर टंके हुए दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब निहारता हुआ।

साँझ होने में अधिक देर नहीं थी। सड़क के दोनों ओर हरे-भरे खेतों में सरसों फूल रही थी। बड़ा ही मनोहारी दृश्य था वह। किन्तु उस ओर न रोज़ा ने आँख उठाई, न परमानन्द ने। वे दोनों न जाने कैसे एक विषाद के गर्त में जा गिरे थे।

दो घण्टे पहिले रोज़ा ने परमानन्द को टेलीफोन किया था। उस समय वह खाना खा रहा था। अपने डैडी के साथ। रोज़ा ने उससे कहा था कि वह तुरन्त ही अपनी कार लेकर एम्बैसडर होटल के सामने आ जाए। रोज़ा के स्वर में विषाद भरा था। परमानन्द से खाना भी नहीं खाया गया था। और वह अपनी कार लेकर दौड़ पड़ा था। रोज़ा होटल के गेट पर खड़ी उसकी राह देख रही थी। वह बिना कुछ बोले ही उसके बराबर में आ बैठी थी। और उसने कहा था : "पम्मी! चल वृन्दावन ले चल मुझे। इसी वक्त। तेरी कार में पैट्रोल कम हो तो और भरवा ले।"

परमानन्द बिना कुछ पूछे दिल्ली को पार करके चला आया था। दिल्ली से साठ मील दूर। उसने एक बार रोज़ा से पूछा था कि बात क्या है, वह ऐसी अनमनी क्यों है। रोज़ा ने सूखी हँसी हँसकर कह दिया था : "आज मैंने अपना मेकप ठीक से नहीं किया, पम्मी! इसीलिए कुछ अनमनी सी लग रही हूँगी।"

फिर रोज़ा उसको इधर-उधर की बातें सुनाने लगी थी। परमानन्द कुछ पूछना चाहता था तो वह उसको वैसा अवसर न देकर कुछ और बात कहने लग जाती थी। परमानन्द का मन गवाही दे रहा था कि रोज़ा अत्यन्त अस्थिर है। और उस अस्थिरता को छुपाने के लिए ही वह इतस्ततः कर

रही है।

एक बार फिर अवसर पाकर परमानन्द ने पूछा था : "बिंदरावन में क्या काम है, रोज़ी !"

रोज़ा ने कहा था : "मन्दिर देखूँगी। साधुओं के दर्शन करूँगी। जमुना में नहाऊँगी। और कृष्णजी की मूरत ले कर लौटूँगी।"

परमानंद अवाक् रह गया था। रोज़ा तो एकबारगी बहकी-बहकी बातें करने लगी थी। उस जैसी कट्टर कम्यूनिस्ट का इन सब बातों से क्या सरोकार ? किन्तु परमानन्द के मुख पर अविश्वास का भाव देख कर रोज़ा ने कहा था : "ताज्जुब होता है ना ? ताज्जुब तो होगा ही। मुझे भी अपने ऊपर ताज्जुब हुआ था। पहले-पहले मेरे मन में ऐसा खयाल आया तब। लेकिन....

रोज़ा ने अपनी बात पूरी नहीं की थी। वह एक सूनी-सूनी दृष्टि से अन्तरिक्ष को देखने लगी थी। परमानन्द ने पूछा था : "लेकिन क्या, रोज़ी !"

रोज़ा ने उत्तर नहीं दिया था। और एक क्षण उपरान्त वह फिर इधर-उधर की बातें करने लगी थी।

अब तीसरी बार परमानन्द ने जिज्ञासा जताई थी। और अबकी बार रोज़ा के संयम का बाँध टूट गया था।

कुछ क्षण उपरान्त रोज़ा पुनरेण प्रकृतिस्थ हो गई। उसने अपनी साड़ी के आँचल से अपने आँसू पोंछ लिए। फिर वह मुस्कराने का उपक्रम करती हुई बोली : "रुक क्यों गया, पम्मी ! आगे चल ना।"

परमानन्द ने कहा : "आगे नहीं जाऊँगा।"

"क्यों ?"

"तेरी तबियत ठीक नहीं है, रोज़ी ! तुझे जने क्या हो गया है। चल, तुझे वापिस तेरे घर ले चलता हूँ।"

"तो तू लौट जा। मुझको यहीं छोड़ दे। मैं पैदल ही चली जाऊँगी। आगे की ओर।"

"पागल हुई है!!"

"हाँ, पागल ही हो गई हूँ।"

रोज़ा निर्निमेष नयनों से परमानन्द की ओर देख रही थी। उस देखने में न जाने कैसा एक कारुण्य-सा भरा था। परमानन्द का हृदय विह्वल हो गया। वह रोज़ा के दोनों हाथों को अपने हाथों में लेकर बोला: "रोज़ी! मुझसे तू कुछ मत छुपा। मुझको तू सब-कुछ बतला दे। मैं तो तेरा अपना हूँ। तेरा पम्मी। मुझसे तू क्यों परदा कर रही है?"

रोज़ा ने सिर झुका लिया। एक क्षण मौन रहकर वह बोली: "पम्मी! किसी को अगर इतना मालूम हो जाए कि वह अपने बाप की बेटी नहीं है, तो जानते हो कैसा लगता है? नहीं जानते ना? लेकिन मैं जानती हूँ।"

परमानन्द बौखला गया। रोज़ा क्या सचमुच पागल हो गई थी! वह धैर्य धारण करके बोला: "अपने बाप की बेटी कौन नहीं है! तू किस की बात कह रही है, रोज़ी!"

रोज़ा ने सिर झुकाए हुए ही कहा: "मैं अपनी ही बात कह रही हूँ। मैं ही अपने बाप की बेटी नहीं हूँ।"

परमानन्द को हँसी आ गई। रोज़ा के विषाद के मध्य में भी उसको विनोद सूझा। वह बोला: "तो क्या तुझे लैबोरेटरी में बनाया गया था?"

रोज़ा ने सिर उठाकर परमानन्द की ओर देखा। उसके मुख पर व्यक्त भाव कह रहा था: "मज़ाक मत कर, पम्मी! यह मज़ाक का वक्त नहीं है!"

परमानन्द को अपनी बात पर पश्चात्ताप होने लगा। वह बोला: "माफ़ी माँगता हूँ, रोज़ी! लेकिन तू अपनी कहानी तो कह।"

रोज़ा ने फिर सिर झुका लिया। और वह कहने लगी: "मैं तो होश सँभालने से लेकर आज तक यही मानती आई थी कि कॉमरेड शर्मा मेरे पिता हैं। लेकिन यह मेरी भूल थी। वे तो मेरे पिता नहीं हैं। वे तो मेरे कोई भी नहीं हैं। वे तो....

परमानन्द ने स्तम्भित रहकर पूछा: "और मिसेज़ शर्मा? क्या वे

भी तेरी ममी नहीं है ?"

"वे मेरी माँ हैं।"

"तो फिर ?"

"माँ जब कॉलिज में पढ़ती थीं तब नाना का ट्रांसफर एक बार कानपुर में हो गया था। वहीं पर माँ की मेरे पिताजी से भेंट हुई थी। वे भी कॉलिज में पढ़ते थे। माँ से एक-दो साल आगे। उनके असर में आकर ही माँ कम्यूनिस्ट बनी थीं। फिर पार्टी की होलटाइमर भी हो गई थीं।"

रोज़ा मौन हो गई। परमानन्द ने पूछा : "फिर ? फिर क्या हुआ, रोज़ी !"

"नाना का ट्रान्सफर होता रहा। लेकिन माँ कानपुर में जम गईं। एम० ए० पास करके वे पार्टी का काम करने लगीं। मेरे पिताजी भी पार्टी के होलटाइमर थे। और उन दोनों में प्रेम हो गया। यह सन् पैंतीस-छत्तीस का वाक़या है। वे दोनों विवाह करना चाहते थे। लेकिन पार्टी ने इजाज़त नहीं दी।"

रोज़ा ने परमानन्द की ओर देखा। परमानन्द ने पूछा : "क्यों ? इजाज़त क्यों नहीं दी ?"

"मेरे पिताजी मुसलमान थे।"

"तो क्या हुआ ? पार्टी तो जात-पाँत मानती नहीं।"

"पार्टी ने कहा कि एक मुसलमान आदमी का ब्याह अगर एक हिन्दू औरत से हुआ तो पार्टी की बदनामी होगी। हिन्दू लोग पार्टी के ख़िलाफ हो जाएँगे।"

"यह तो आज ही सुना !"

"तू क्या नहीं जानता कि पार्टी के लिए अपनी बहबूदी के सिवाय और कोई क्राइटीरियन ही कभी नहीं रहा ? उस क्राइटीरियन की बिना पर यह बात बिल्कुल ठीक थी।"

"फिर क्या हुआ ?"

"माँ को ब्याह तो करना ही पड़ा।"

"क्यों ?"

"मैं कम्बख्त पेट में जो थी। ब्याह नहीं करने में भी पार्टी की बदनामी होती। बूर्जुआ सोसाइटी में पैदा होने के लिए मुझे एक बाप की ज़रूरत तो थी ही।"

"माफ करना, रोजी! मेरा मतलब कुछ और मत समझ लेना। तू दुनिया में आई इसीलिए मेरी दुनिया आबाद है। लेकिन मेरे मन में एक सवाल उठता है। ऐसी सिच्वेशन में पार्टी अबॉरशन भी तो करवा देती है। पार्टी ने वह रास्ता क्यों नहीं अख्त्यार किया ?"

"नामुमकिन था। पार्टी को बात का पता चला उसके पहले ही मैं पूरे पाँच महीने माँ के पेट में बिता चुकी थी। डॉक्टर ने अबॉरशन करवाने से इन्कार कर दिया। माँ की जान को खतरा था। हंड्रेड परसेंट। मेरे पिताजी भी नहीं माने।"

"वे दोनों पार्टी छोड़ सकते थे ?"

"पार्टी से उन दोनों को बहुत प्यार था। वे दोनों पार्टी के लिए जान देने को तैयार थे। उन दोनों ने एक साथ उस सुनहरी दिन के सपने देखे थे जब के इन्सान आजाद होकर धरती पर स्वर्ग क़ायम करेगा। उस दिन को लाने के लिए वे दोनों जान हथेली पर लिए फिरते थे, और किसी भी कुर्बानी के लिए तैयार थे।"

"मैं समझ गया। ऐसे लोगों को मैंने देखा है। वे समाज की भलाई के लिए अपने दुख-सुख की परवाह नहीं करते। फिर क्या हुआ ?"

"माँ को पार्टी ने दिल्ली लौटा दिया। और यहाँ उनकी शादी कॉमरेड शर्मा से हो गई। इसलिए जब मेरा जन्म हुआ तो दुनिया यही समझी कि मैं कॉमरेड शर्मा की सन्तान हूँ। कामरेड शर्मा पार्टी के काम से कानपुर जाते रहते थे। लोगों ने समझा वहीं पर रोमांस हो गई होगी।"

रोजा चुप हो गई। परमानन्द ने भी कुछ नहीं कहा। उसको ऐसा लग रहा था जैसे किसी सपने की कहानी सुन रहा हो।

रोज़ा कहने लगी : "दिन बीतते गए। पार्टी की ताकत बढ़ती रही।

और फिर एक दिन यह मुल्क आजाद हो गया। लेकिन उन दोनों की मुहब्बत में फर्क नहीं आया। पिताजी कानपुर में बने रहे। माँ दिल्ली में। पार्टी की कोई कॉन्फ्रेन्स होती थी तो उन दोनों को कभी-कभार मिलने का मौका मिल जाता था। एक-दूसरे को खत लिख लेते थे वे दोनों। तब एक दिन पार्टी ने कॉमरेड रणदिवे की कमाण्ड में नेहरू सरकार के खिलाफ जहाद बोल दिया। मैं उन दिनों छोटी ही थी। मुझे ज्यादा याद नहीं। लेकिन जिन लोगों से सुना है वे बतलाते हैं कि बड़ा ही टैरीबल टाइम था वह।"

परमानन्द ने कहा : "हाँ, पार्टी पर बहुत जोर जुल्म हुआ था। मैंने भी सुना है के सरदार पटेल पार्टी का बहुत बड़ा दुश्मन था।"

"नहीं, वह बात मैं नहीं कहती। ज्यादती सरकार की तरफ से थी या पार्टी की तरफ से, इस बात के बारे में मुझे अब शक है। लेकिन एक बात तय है। पार्टी के भीतर उन दिनों काफी जोर-जुल्म हुआ था। खुद मेरे पिताजी उस जुल्म का शिकार हो गए थे।"

परमानन्द ने विस्मित-सा होकर रोजा की ओर देखा। इस प्रकार की कहानी के लिए वह प्रस्तुत नहीं था। रोजा ने कहानी सुनाई : "एक दिन पार्टी का एक लीडर माँ के पास दिल्ली जा पहुँचा। बातों बातों में उसने बतलाया कि मेरे पिताजी अमेरिका की खुफिया पुलिस के आदमी हैं। बहुत दिन से। वे पार्टी में दाखिल हुए तभी से। और उनकी वजह से पार्टी को बहुत बड़ा नुकसान उठाना पड़ा है। माँ को यकीन नहीं हुआ। तब उसी दिन रात के वक्त माँ को अमेरिकन एम्बैसी के एक ऑफीसर से मिलाया गया। उसने पिताजी का पूरा एहवाल देकर शहादत दे दी कि वे बहुत दिन से अमेरिकन सरकार की पे में रहे हैं। माँ के पाँव तले से जमीन निकल गई। वे पार्टी पर जान देती थीं। उनके दिल में पिताजी के लिए नफ़रत का आतशफ़शाँ फट पड़ा। वे अब समझीं कि पिताजी ने उनके साथ ब्याह न कर के उनको पार्टी में ही रहने की सलाह क्यों दी थी। पिताजी की ही पढ़ाई हुई पट्टी पिताजी के ही खिलाफ पड़ गई। पार्टी

के लिए कम्यूनिस्ट को अपना सब-कुछ कुरबान कर देना चाहिए और...

रोज़ा आगे नहीं कह पाई। उसकी आँखों में आँसू उमड़ आए थे। वह अपना मुख दोनों हाथों से ढककर सिसकने लगी। परमानन्द उसके सिर पर हाथ रक्खे बैठा रहा।

कुछ क्षण उपरान्त रोजा ने कहा : "पार्टी के लीडर की बात मानकर माँ ने पिताजी के नाम एक ख़त लिख दिया। पिताजी अण्डरग्राउण्ड थे। पुलिस उनकी तलाश कर रही थी। लीडर ने माँ को बतलाया कि वे पार्टी की हाई-कमाण्ड के बुलाने पर भी बाहर नहीं निकल रहे। हाई-कमाण्ड उनको सामने बैठाकर उनके मुँह से सब कुछ सुनना चाहती है। माँ के सिवाय और कोई भी उनको इस इम्तिहान के लिए तैयार नहीं कर सकता। माँ ने लिखा दिया—'तुम अगर सचमुच मुझसे मुहब्बत करते हो तो फौरन पार्टी की हाई-कमाण्ड के सामने हाज़िर हो जाओ।' ख़त ने अपना काम किया। और फिर...

रोज़ा अपनी बात पूरी किए बिना ही फिर रोने लगी। परमानन्द ने आतुर होकर पूछा : "फिर क्या हुआ, रोज़ी!"

रोज़ा ने सुबकियाँ लेते हुए कहा : "पार्टी की हाई-कमाण्ड तो उनके ख़ून की प्यासी थी। उनके आते ही उनको पार्टी के हैंगमैन के हाथों में सौंप दिया गया।"

"तो क्या उनको लिक्वीडेट कर दिया गया?"

"पार्टी की तरफ से तो उनको लिक्वीडेट ही कर दिया गया था। लेकिन वे बच गए।"

"सो कैसे?"

"वह सब मैं नहीं जानती। पिताजी के सिवाय शायद और कोई भी नहीं जानता।"

"उनका कुछ पता-निशान है?"

"वे इस वक्त दिल्ली में मौजूद हैं।"

"दिल्ली में! कहाँ पर?"

"तुम्हारे मिल की मज़दूर-बस्ती है ना ? उसीके मैदान में ।"

"वहाँ वे क्या कर रहे हैं ?"

"धूना लगाए बैठे हैं ।"

परमानन्द को विश्वास नहीं हुआ । उसके मुख पर अविश्वास का भाव देखकर रोज़ा ने कहा : "वे साधु क्यों और किस तरह बने, सो मैं नहीं जानती, पम्मी ! लेकिन उनको मैं अपनी आँखों से देखकर आई हूँ । आज ही सुबह के वक़्त । तुझको टेलीफोन किया तब मैं वहीं से लौटी थी ।"

परमानन्द ने पूछा : "तूने उनसे पूछकर पता किया के वे वही हैं ?"

"नहीं, उनसे तो मैंने कुछ नहीं पूछा । लेकिन घर लौटकर माँ से पूछा था ।"

"वे क्या बोलीं ?"

"पहले तो वे बहुत नाराज हो गईं । कहने लगीं कि मेरा दिमाग़ खराब हो गया है । लेकिन मैं अपनी ज़िद पर अड़ी रही । तब माँ ने अपना मुँह फेर लिया । और वे सिसकने लगीं । मुझको पक्का यक़ीन हो गया ।"

"लेकिन तुझको यह सब क़िस्सा कहाँ से मालूम हुआ ?"

"पार्टी के एक पुराने होलटाइमर से ।"

परमानन्द ने और कुछ नहीं पूछा । वह कुछ चिन्तित-सा हो गया था । उसने अपने डैडी से सुना था कि साधु के वेश में आकर कोई अमेरिकन एजेन्ट उनकी मिल में गड़बड़ फैला रहा है । और अमेरिकन एजेन्ट के साथ किसी प्रकार की सहानुभूति अनुभव करना अथवा प्रकट करना परमानन्द के लिए असम्भव था । इस अर्थ में वह हैरल्ड लास्की का सच्चा शिष्य था ।

रोज़ा बोली : "माँ को भी मालूम है कि उनके साथ धोखा हुआ था । पिताजी के खिलाफ वह इल्जाम सरासर झूठा था । बात दरअसल यह थी कि पिताजी रणदिवे की पॉलिसी का विरोध कर रहे थे । इसीलिए उन पर वह झूठा इल्जाम लगाकर उनको लिक्वीडेट करने का फैसला किया गया था ।"

परमानन्द फिर उलझ गया। उसने पूछा : "तो अमेरिकन एम्बैसी के ऑफीसर ने क्या झूठ कहा था ?"

"सरासर ! वह अमेरिकन तो खुद मास्को का एजेण्ट था।"

"अमेरिकन एम्बैसी में मास्को का एजेण्ट !"

"अमेरिका का हरेक दफ्तर मास्को के आदमियों से पटा पड़ा है।"

परमानन्द ने अविश्वास के भाव से रोजा की ओर देखा। रोजा बोली : "मैं अपने तजुरबे से कह रही हूँ, पम्मी ! मुझको रोज ही तो अमेरिकन्ज़ के साथ वास्ता पड़ता है। माँ का लञ्च या डिनर रोज़ ही किसी न किसी अमेरिकन के साथ होता है। कभी हमारे घर, कभी उनके घर, और अक्सर मैं भी शामिल होती रहती हूँ। मुझको शायद ही कोई ऐसा अमेरिकन मिला हो जो ख़यालात की रू से कम्यूनिस्ट नहीं हो।"

परमानन्द ने कुछ नहीं कहा। ये सब बातें उसके लिए तनिक पेचीदा बातें थी। अमेरिकन, और कम्यूनिस्ट !! यह तो कुछ ऐसी-सी बात थी कि बरफ में आग लग गई !! किन्तु रोजा के कथन को अस्वीकार करने के लिए भी उसके पास कोई प्रमाण नहीं था। वह अमेरिकन लोगों को जानता ही नहीं था। उसके डैडी खूब मिलते थे अमेरिकन लोगों से। किन्तु उसको उन लोगों से नफ़रत थी। वह सदा उन लोगों से दूर-दूर भागता आया था। जब भी दो-चार बार किसी अमेरिकन से उसका साक्षात्कार हुआ था तभी उसको अनुभव हुआ था कि अपने खाने-पहिनने के परे उनको किसी अन्य बात में रस ही नहीं आता।

रोज़ा कहने लगी : "मैं जब वहाँ पहुँची तो पिताजी कई-एक मजदूरों के साथ बातें कर रहे थे। मैंने वहाँ बैठ कर वे सब बातें सुनी। और कम्यूनिज़म के बारे में जितने भी शक और शुबे मैंने अपने दिमाग़ में दबा रखे थे, वे सब अचानक मचल पड़े। इसलिए मैं भाग खड़ी हुई।"

परमानन्द ने पूछा : "क्या कह रहे थे वे ?"

"मुझे तो ऐसा लगा जैसे वे अपनी ही कहानी कह रहे हों। कहने लगे कि कम्यूनिस्ट पार्टी के भीतर रोज़मर्रा बेइन्साफियाँ और बेईमानियाँ होती

रहती है। उनके खिलाफ कोई कम्यूनिस्ट जब जबान को खोलता है तो पार्टी उसको बर्बाद करने पर तुल जाती है। लेकिन फिर भी पार्टी के सताए हुए लोग यह मानते रहते हैं कि इन्टरनैशनल कम्यूनिस्ट मूवमेंट ठीक है, सोवियत यूनियन भी ठीक है, और कम्यूनिज़म का सिद्धान्त भी ठीक है, सिर्फ लोकल पार्टी ही रास्ता भूल गई। अगर किसी को इन्टरनैशनल मूवमेंट की गन्दगी भी मालूम हो जाती है तो वह भी सोवियत यूनियन और कम्यूनिस्ट सिद्धान्त पर शक नहीं कर पाता। सोवियत यूनियन एक ऐसा सपना है जो किसी भी कम्यूनिस्ट को कभी भी बेदार नहीं होने देता।"

रोज़ा ने एक क्षण साँस लिया। फिर वह बोली : "पिताजी कह रहे थे कि सोवियत यूनियन तो धरती पर नरक का नज़ारा पेश करता है। कम्यूनिस्टों के पास ताकत आने के बाद उन लोगों ने वहाँ की जनता के साथ जो-जो ज्यादतियाँ की हैं, जिस तरह किसानों और मज़दूरों को दाने-दाने के लिए मोहताज किया है, जिस तरह वहाँ की इन्टैलीजैन्सिया को कठपुतली बना डाला है, और बेगुनाहों का जितना खून बहाया है, उसकी मिसाल सारी तारीख में नहीं मिलती।"

परमानन्द ने असहिष्णु होकर कहा : "यह सब अमेरिकन प्रोपैगैण्डा है। इसकी कोई बुनियाद नहीं।"

"लेकिन मेरा मन कहता है कि यह सच है। मैंने तो सोवियत् यूनियन अपनी आँखों से देखा है। और मैंने योरप के दूसरे मुल्क भी देखे हैं। मुझको तो क़दम-क़दम पर ऐसा लगा कि सोवियत् यूनियन बहुत ही पिछड़ा हुआ मुल्क है। मुझे तो हर घड़ी यही खयाल आता रहता था। और मैं इसको दबाती रहती थी। वहाँ के मज़दूरों और किसानों की हालत देखकर तो मुझे रोना आता था।"

परमानन्द सिर खुजलाने लगा। फिर वह बोला : "मेरी तो कुछ समझ में नहीं आता। मैंने तो इस नज़रिए से कभी सोचा ही नहीं। मैं तो हमेशा यही मानता आया हूँ कि सोवियत यूनियन पर ही इन्सानियत की उम्मीद कायम है।"

रोजा ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह विवाद करना नहीं चाहती थी। परमानन्द अब फिर उसकी ओर इस प्रकार देख रहा था जैसे वह पागल हो गई हो। वह, जो हमेशा उसके अपने संशय और भ्रम का निवारण किया करती थी!! रोजा के सहवास से ही वह कम्यूनिस्ट बना था। अब रोजा मुख मोड़ रही थी। तो क्या वह भी...

रोजा ने कहा : "तूने कुश्चेव की वह स्पीच नहीं पढ़ी, पम्मी! वही जो उसने १९५६ में दी थी। मैंने पढ़ी है। पिताजी की बातें सुनकर वह स्पीच फिर मेरे दिमाग़ में फिर गई। और मेरे मन में एक तूफान उठ खड़ा हुआ। यकायक मुझको यक़ीन होने लगा कि सोवियत यूनियन वाकई नरक का नज़ारा पेश करता है। वरना स्टालिन-शाही का साथ देने वाले आज भी वहाँ हुक्मरानी नहीं करते होते।"

परमानन्द इस प्रसंग को बदलना चाहता था। उसके मस्तिष्क में सोवियत यूनियन का नहीं, पूँजीवाद का दुराचार ही मूर्त हो पाता था। और उस दुराचार की तुलना में वह और किसी भी दुराचार को तुच्छ मानता था। फिर इस समय, उसके मत में, रोजा का मन ठीक नहीं था। अपने विषय में एक अश्रुतपूर्व रहस्य का उद्घाटन सुनकर वह कुछ उखड़-सी गई थी। परमानन्द उस उद्घाटन की पुष्टि के प्रति ही अधिक उत्सुक था। उसने पूछा : "रोज़ी! क्या तेरे पिताजी ने तुझको पहचान लिया?"

रोज़ा ने उत्तर दिया : "मेरा मन कहता है कि जरूर पहचान लिया होगा। मज़दूरों में से एक ने उनको बतलाया था कि मैं कौन हूँ। और उन्होंने जिस नज़र से मेरी तरफ देखा था उससे मुहब्बत टपक रही थी। वे कुछ बोले नहीं। खाली खुशामदीद कहकर ही रह गए। लेकिन मैं सब समझ गई।"

"तूने भी उनसे कोई सवाल पूछा?"

"हाँ, पूछा था। मैंने कहा था कि सोवियत यूनियन के खिलाफ होकर भी कुछ लोग मार्क्स और लेनिन पर लट्टू रहते हैं। वे कहते हैं कि मार्क्स और लेनिन के सिद्धान्त ठीक हैं, लेकिन सोवियत यूनियन ने उन पर ठीक-

ठीक अमल नहीं किया। यह नज़रिया क्या दुरुस्त है ?"

"उन्होंने क्या जवाब दिया ?"

"पहले तो वे हँसने लगे। फिर बोले— यही तो रोग की जड़ है। मार्क्स और लेनिन को समझते ही इस बात में कोई शक नहीं रह जाता कि सोवियत यूनियन उन्हीं के सिद्धान्त पर सैन्ट-पर-सैन्ट अमल कर रहा है। लेकिन आज का पढ़ा-लिखा आदमी मार्क्स और लेनिन पर शक नहीं कर सकता। यह शक करते ही उसे मॉडर्न योरप की सारी तहज़ीब पर शक करना पड़ेगा।"

"यह तो अजीब बात है। मुझे नहीं जँची। योरप के ग़ैर-कम्यूनिस्ट मुल्कों को ही ले लो। वे मार्क्स और लेनिन को नहीं मानते। लेकिन मॉडर्न तहज़ीब के तो वे भी हिमायती हैं।"

"मैने भी उनसे यही कहा था। वे बोले—कौन कहता है कि योरप के ग़ैर-कम्यूनिस्ट मुल्क मार्क्स और लेनिन को नहीं मानते ? दरअसल तो वे और कुछ मानते ही नहीं। हाँ, उनमें अपने यक़ीन पर अमल करने की हिम्मत नहीं, सो दूसरी बात है। लेकिन इतना तो साफ है कि जब भी वे मुल्क किसी को मार्क्स और लेनिन की फिलॉसफी पर अमल करते देखते हैं तो वे उस पर लट्टू हो जाते हैं। और मार्क्स और लेनिन की मुख़ालफत करने वालों की मुख़ालफत ग़ैर-कम्यूनिस्ट योरप में उतनी ही होती है जितनी कि कम्यूनिस्ट मूवमेंट के भीतर।"

"यह तो और भी ऊलजलूल बात है।"

"मुझको भी पहले-पहल ऐसी ही लगी थी यह बात। लेकिन वे बोले—नेहरू को देख लो। सरापा कम्यूनिस्ट है। और ग़ैर-कम्यूनिस्ट वैस्ट उस पर बुरी तरह लट्टू हैं। अमेरिका के हुक्मरानों को तो इस बात में कोई शक ही नहीं के नेहरू इस धरती पर उतरा हुआ पैग़म्बर है।"

परमान्द चौंक उठा। बात तो ठीक थी। रोज़ा बोली : "पम्मी ! मैं तो भइ उनकी बात का जवाब नहीं दे पाई। तू दे सकता है जवाब ? उन्होंने और भी एक बात कही। कहने लगे—च्यांगकाई शेक, सिंगमैन री वग़ैरह

ने कम्यूनिजम की मुखालफत की थी। आज गैर-कम्यूनिस्ट योरप और अमेरिका के सारे सियासतदान और स्कॉलर उन पर थूकते हैं। भला क्यों? उनका क्या कुसूर था?"

परमानन्द ने कुछ नहीं कहा। उसके भीतर सब कुछ उलझ-पुलझ गया था। रोज़ा बोली : "अचानक मेरी समझ में आने लगा कि मैं जिस अमेरिकन से भी मिलती हूँ वही क्यों कम्यूनिस्टों जैसी बातें करता है।"

परमानन्द ने पूछा : "लेकिन यह सब हुआ कैसे? कम्यूजिज़म और कैपीटलीज़म, बुर्जुआ डैमोक्रैमी और पीपुल्स डैमोक्रैमी—इन दोनों में क्या कोई मुखाल्फत नहीं? ये दोनों क्या एक ही चीज़ हैं? तो फिर इनका ये झगड़ा कैसा है? क्या यह झूठ-मूठ का मज़ाक हो रहा है? इतना महँगा मज़ाक?"

रोज़ा ने उत्तर दिया : "मैंने भी उनसे यही सवाल किए थे।"

"वे क्या बोले?"

"उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। बोले—फिर कभी बातें करेंगे। फुरसत में। फिर कभी आना।"

"उनके पास जवाब था ही नहीं। उन्होंने तुझको बुद्धू समझकर पहेलियाँ बुझाई थी। लेकिन तू जब बहकाई में नहीं आई तो वे बात टाल गए।"

"मैं ऐसा नहीं मानती। उनकी तरफ देखने से ही ऐसा लगता है कि वे संसार के सारे सवालों के जवाब जानते हैं।"

"आखिर वे तेरे पिता जो हैं। तू तो ऐसा मानेगी ही।"

"तुझे यक़ीन नहीं होता हो तो तू मेरे साथ चलकर देख ले। किसी दिन भी। तू खुद ही सारे सवाल पूछ लीजो। फिर देखियो वे जवाब देते हैं या नहीं।"

"देखा जाएगा। अभी तो अपने राम की यक़ीन बहाल है। अभी तो मैं उनके पास नहीं जाऊँगा।"

"डर लगता है?"

"डर काहे का? साधु से क्या डर लगेगा?"

"यक़ीन खो जाने का। आदमी सब-कुछ खोने को तैयार हो जाता है। लेकिन जब यक़ीन खोने की नौबत आती...

"अच्छा, रोजी ! छोड़ ये बातें। मैं डरपोक ही सही। तू तो सूरमा है। अब तू यह बता कि तेरा प्रोग्राम क्या है ? दिल्ली लौटें या बिंदराबन चलें ?"

"वृन्दावन जाने को जी तो चाहता है।"

"क्या है वहाँ ?"

"मैं पिताजी के पास से आने लगी तो वे बोले—बेटी ! एक भजन सुनती जाओ। और वे चिमटा उठाकर गाने लगे :

नंद नंदन के ऐसे नैन !
नंद नंदन के.............."

रोजा गाने लगी। परमानन्द को हँसी आ गई। वह बोला : "यह क्या, रोज़ी ! तू भजनों की शौक़ीन कब से हो गई !"

रोज़ा ने कहा : "हमेशा ही रही हूँ। लेकिन अपना शौक़ मैंने कभी किसी पर ज़ाहिर नहीं किया। किसको बतलाती ? सब मेरा मज़ाक उड़ाते। लेकिन मन-ही-मन मैं भजन सुनकर मस्त हो जाती हूँ। योरप में थी तो मुझे चर्च-म्यूज़िक भी बहुत अच्छा लगता था।"

"तू तो निरी बूर्जुआ निकली, रोज़ी !"

'बूर्जुआ नहीं, फ़्यूडल। बूर्जुआ तो भजनों से चिढ़ता है। स्नॉबरी में आकर एकाध सिम्फ़नी सुन लेता है सो दूसरी बात है। उसका अपना म्यूज़िक तो जाज है, या फिर रॉक 'न रौल !"

"मेरे सवाल का जवाब नहीं दिया ?"

"जहाँ तेरी मरज़ी हो, वहाँ चल। लेकिन एक बात याद रख। दिल्ली में मैं अपने घर नहीं जाऊँगी, कभी भी नहीं जाऊँगी।"

"तो और कहाँ रहेगी ?"

"क्यूँ ? तू क्या मेरा कोई भी इन्तजाम नहीं कर सकता ? तू तो कहता था कि तू मुझसे मोहब्बत करता है ?"

"इन्तज़ाम तो मैं हज़ार कर दूँ। लेकिन बात डैडी के पास पहुँचेगी। तेरी ममी तो चुप रहने वाली नहीं। वो सीधी डैडी के पास पहुँचेगी।"

"तो पहुँचने दे।"

"वाह! डैडी मुझे घर से निकाल देंगे।"

"तो निकाल दें।"

"फिर तुझे सपोर्ट कैसे कर पाऊँगा? और अपने-आपको भी?"

"तब हम दोनों वृन्दावन चले जाएँगे।"

"वहाँ भी गुज़र कैसे होगी?"

"सुना है वहाँ पर बहुत से सदाबरत हैं। खाने-पहनने को तो जुट ही जाएगा।"

"तू तो बैरागन बनी जा रही है, रोज़ी!"

"क्या करूँ, पम्मी! दुनिया की तरफ़ अब मेरा दिल ही नहीं जाता।"

"दिल टूट गया तेरा?"

"हाँ, पम्मी! मेरा दिल टूट गया।"

"किसी की मुहब्बत क्या उसको नहीं जोड़ सकती?"

"मुहब्बत पर भी मेरा यक़ीन नहीं रहा।"

"क्यों?"

"माँ की भी तो पिताजी से मुहब्बत थी?"

परमानन्द चुप हो गया। वह यही सोच रहा था कि रोज़ा की बात का क्या जवाब दे?

रोज़ा गाने लगी:

चंचल चपल मनोहर कारे,
खंजन-मान-लजावन हारे,
'नारायन' सुन्दर मतवारे,
अनियारे दुःख दैन!
नन्द नन्दन के ऐसे नैन...
नन्द नन्दन के.......।

: ३ :

अशोका होटल का डाइनिंग-रूम। शनिवार की रात को डिनर के साथ फ्लोर-शो का आयोजन है। इजिप्ट की कोई सुन्दरी अपनी देह का सौष्ठव थिरकाती हुई, अपने मोती-से दाँतों को चमकाती हुई, अपने कल-कण्ठ के चमत्कार से लोगों के मन मोहेगी। बैंड बजना शुरू हो चुका है। सुन्दरी आया ही चाहती है।

मिस्टर पी० एम० गुप्ता ने भी एक टेबल। रिज़र्व करवा रक्खी है। आज वे शैम्पेन पीकर, फिश कटलैट और फ्रूट-सैलेड का सेवन करके, अपनी हफ्ते-भर की थकान उतारेंगे। बेहद थक गए हैं बेचारे। कारखाने को चलाना, माल बेचना, इनकम-टैक्स वालों से सुलटना—ये सब वैसे ही बहुत बेढब काम थे। अबकी बार मजदूरों ने भी उनका नाक में दम कर दिया था।

वे हफ्तों प्रयास करते रहे कि किसी प्रकार समझौता हो जाए। वे कुछ दूर तक झुकने के लिए भी तत्पर थे। किन्तु उसके आगे नहीं। मजदूरों ने उनकी एक नहीं सुनी थी। और आज प्रातःकाल ही चारों यूनियनों ने एक साथ उनको स्ट्राइक-नोटिस भेज दिया था। दस दिन के भीतर यदि उन्होंने मज़दूरों की माँगें स्वीकार नहीं कीं तो मिल बन्द हो जाएगी।

मिल बन्द हो जाएगी! मिस्टर गुप्ता का कलेजा धक्-धक् कर उठा। उनको अपने हानि-लाभ का कच्चा-चिट्ठा कण्ठस्थ था। मिल की तीनों शिफ्ट चलें तो उनको अपने हिस्सों के आधार पर ही दो हज़ार रुपया रोज़ की आय होती थी। और मिल के मैनेजिंग डायरेक्टर होने के नाते वे अपने घर का सारा खर्च भी मिल के माथे मढ़ सकते थे।

उनकी रहने की कोठी उनकी अपनी सम्पत्ति थी। किन्तु उसका किराया मिल से मिलता था। मैनेजिंग डायरेक्टर को रहने का मकान तो मिलना ही चाहिए। उनके घर के दर्जनों नौकर-चाकर चौबीसों घण्टे उनकी हाज़री में रहते थे। किन्तु उन सबका वेतन मिल के बजट से निकला था। मैनेजिंग डायरेक्टर को नौकर-चाकर भी तो चाहिएँ। उनकी आधी दर्जन कारें उनके अपने काम से दौड़ती रहती थीं। किन्तु उनकी कीमत मिल ने

चुकाई थी, उनमे पैट्रोल मिल का जलता था, उनके ड्राइवरों को मिल से तनख्वाह मिलती थी, और सर्विस-स्टेशन वाले उनकी मरम्मत के बिल भी मिल के दफ्तर मे ही भेजते थे।

मिस्टर गुप्ता के चूल्हे-चौके का भार भी मिल के ऊपर था। उनके लॉन मे काम करने वाला माली भी मिल का ही वेतनभोगी भृत्य था। यहाँ तक कि विदेशी मर्ज का जो बहुमूल्य सूट मिस्टर गुप्ता इस समय पहिने बैठे थे उसके कपड़े तथा सिलाई के दाम भी मिल ने ही चुकाए थे। मैनेजिंग डायरेक्टर बेचारा इतनी माथा-पच्ची करे! और मिल से यह भी न हो कि उनको ठीक प्रकार के कपड़े तो पहिना दे—यह कैसे हो सकता था!!

मिल के बन्द होने की सोचते ही मिस्टर गुप्ता सूप पीना भूल गए। इसी क्षण इजिप्ट की सुन्दरी फ्लोर पर उतरी थी। मिस्टर गुप्ता उसकी आरम्भिक अदाओं को देखना भी भूल गए। उनकी आँखों के आगे अन्धकार-सा छाने लगा। उनका रोम-रोम चीत्कार कर रहा था—नहीं, नहीं, मिल बन्द नही होनी चाहिए।

किन्तु मिल को चलते रखने का एक ही रास्ता था। मजदूरों की माँगें मान ली जाएँ। पर वह भी तो कोई रास्ता नहीं था। उनकी माँगें मानी जाने योग्य होती तो वे तुरन्त मान जाते। कितने वर्ष तक मानते नहीं आए थे वे उनकी माँगे? मानते ही नहीं आए थे, माँगों के मसविदे उन्होंने स्वयं प्रस्तुत किये थे। मजदूरों में तनिक-सा असन्तोष फैलते ही वे गुपचुप कमला को बुलाकर तय कर लेते थे कि यूनियन यह-यह माँगेगी और वे यह-यह मान जाएँगे। इस प्रकार सदा ही समझौता हो जाता था।

अब की बार ही समझौता नहीं हो पाया। न जाने कमला को क्या हो गया था अचानक! वह सीधे मुँह बात ही नहीं करती थी। इतने दिन की पुरानी दोस्त! घर-जैसी बातें!! किन्तु कमला ने धोखा दे दिया। इतनी दूर तक उनके साथ आकर। कमला के लिए यह उचित नहीं था।

और कमला ने यह क्या कह डाला? यही बात कि वे स्वतन्त्र पार्टी में जाना चाहते है, इसलिए उनकी मिल के इञ्जिन रोककर ही उनको भी

रोकना पड़ेगा ! ! वे कब स्वतन्त्र पार्टी में जाना चाहते थे ? वे तो स्वतन्त्र पार्टी पर पेशाब भी करने को तैयार नहीं थे। उनकी तो कांग्रेस से खूब पटती थी। फिर वे क्यों बैठ-बिठाए मुसीबत मोल लेते ? न जाने किसने उनके बारे में वैसी अफवाह उड़ा दी थी।

उन्होंने अफवाह का खण्डन क्यों नहीं किया ? ठीक समय पर ? इस विषय में वे कुछ भूल कर बैठे। सोच बैठे कि चीन की कार्रवाई के कारण कम्यूनिस्ट पार्टी कुछ कमजोर है, और वे धमकी देंगे तो पार्टी पतली पड़ जाएगी। किन्तु हुआ तो सर्वथा विपरीत। पार्टी तो और भी अकड़ गई। और हारकर उन्हें मिस्टर मसानी से बातें करनी पड़ी। वह भी तो उनकी भूल थी। मसानी से बातें करके उन्हें क्या मिला ? कांग्रेस के लोग और उनके विरुद्ध हो गए।

सहसा उनको स्वतन्त्र पार्टी पर बड़ा क्रोध चढ़ आया। न यह साली स्वतन्त्र पार्टी बनती, न उनको यह दिन देखने पड़ते। स्वतन्त्र पार्टी ही सब मुसीबतों की जड़ है। नेहरू के नीचे मुल्क में अच्छा रामराज्य आया हुआ था। उन्हीं को कोई देख लो। देश आजाद हुआ तब उनके पास कुल पाँच-सात लाख रुपये थे। किन्तु अब ? अब वे करोड़पति थे। कई करोड़ के मालिक ! क्या कमी थी नेहरू के राज में ? यों ही कुछ लोगों का दिमाग फिर गया और यह कुराफात कर डाली। स्वतन्त्र पार्टी ! धत् ! !

मिस्टर गुप्ता ने पाँव पटक मारा। पीठ पीछे खड़ा बैरा तुरन्त सामने आ खड़ा हुआ, और झुककर पूछने लगा : "यस, सर !"

मिस्टर गुप्ता को बैरे की यह धृष्टता पसन्द नहीं आई। वे एक हाथ झटकाकर बोले, "यू शट अप !"

बैरा खिसियाना होकर फिर उनकी पीठ पीछे जा छिपा। और वे सूप पीने लगे। सूप तो ठण्डा हो चुका था। उनका पारा सौ डिग्री पर चढ़ गया। वे बैरे की ओर मुख मोड़कर बोले : "सूप क्या रैफ्रीजरेटर में रक्खा था ?"

बैरा समझ नहीं पाया उनकी बात। वह तो गरमागरम सूप लाया था। भाँप निकल रही थी। साहब ने समय पर पीया ही नहीं। साहब न

जाने किस खयाल में खोए हुए थे। बैरा मुँह बाए साहब की ओर देखता खड़ा रहा।

मिस्टर गुप्ता गुर्राए : "उल्लू की माफिक क्या देख रहा है! यू सन ऑफ ए बिच!! ले जाओ!!!

मिस्टर गुप्ता का हाथ ज़ोर से हिला। मानो वे सूप की प्लेट को नीचे गिरा देंगे। किन्तु प्लेट यथास्थान ही रह गई। इजिप्ट की सुन्दरी अपने दाएँ हाथ को अन्तरिक्ष में उत्तोलित करके गा उठी थी।

कम बंस, कम अगेन
फॉर, आई पाइन फॉर यू
फॉर यू....ऊ, फॉर यू....ऊ....ऊ....ऊ....

मिस्टर गुप्ता अपनी सारी विभीषिका भूल गए। किसी ने उनके कर्ण-रन्ध्रों में सुधा ढाल दी थी। वे निर्निमेष नयनों से सुन्दरी को निहारने लगे। वाह! क्या रूप है! क्या जवानी!! क्या अदाएँ! क्या नाज़!! क्या नखरा! और क्या आवाज़ पाई है ज़ालिम ने! हाय! हाय!! दिल छलनी हो गया! हुस्न ने क़यामत बरपा कर दी! आँखें मुँद-मुँद जा रही हैं........

किसी ने पीछे से आकर मिस्टर गुप्ता के कन्धे पर हाथ रख दिया। उन्होंने चमककर उस ओर देखा। एक अमेरिकन खड़ा मुस्करा रहा था। छः फीट से भी दो-चार इंच ऊँचा। उसका वज़न दो-ढाई मन से क्या कम होगा! दर्ज़ी और नाई वग़ैरा ने खूब मेहनत करके उसको सँवारा था। और उसने स्वयं भी महीनों तक दर्पण के सामने खड़े होकर मुस्कराने का अभ्यास किया था। एक विशेष मुद्रा में मुस्कराने का अभ्यास। गैरी कूपर मुस्कराता है इस प्रकार। उस समय जब कि उसके सामने कोई गम्भीर समस्या प्रस्तुत होती है।

मिस्टर गुप्ता को उस अमेरिकन का उस समय वहाँ आना अच्छा नहीं लगा। वे तो एकाकी बैठकर इजिप्ट की सुन्दरी की रूपसुधा का पान करना चाहते थे। वही तो एक मार्ग था अपना दुख भुलाने का। अब यह अमे-

रिकन आ मरा ! सो भी अमेरिकन एम्बैसी का लेबर-अटैचे ! ! कोई काम का अमेरिकन होता तो कोई बात भी बनती । इससे कोई क्या काम निकाल सकता था ? यह तो घूम-फिरकर उनकी मिल की बात चलाएगा। पूछेगा कि मिल में स्ट्राइक क्यों होने वाली है। और उनका सारा सन्ताप फिर हरा हो जाएगा । इस वक्त कोई रूसी आ जाता तो उसके साथ कोई बात भी होती । वे उसके सामने अपना दुख रो देते । और रूस की एम्बैसी फौरन कम्यूनिस्ट पार्टी के कल-पुरजे कस देती ।

अमेरिकन ने पूछा : "मैंने क्या आपके एकान्त को भंग कर दिया, मिस्टर गुप्ता !"

मिस्टर गुप्ता शिष्टाचार के नाते कह गए : "नहीं, नहीं, बिल्कुल नहीं, मिस्टर चाइल्ड !"

"मैं आपके साथ बैठ सकता हूँ ?"

"जरूर, जरूर ! यू आर वैरी वैल्कम !"

चाइल्ड ने बैरे की ओर देखा। बैरे ने दूसरी कुरसी को कुछ पीछे की ओर सरका लिया। चाइल्ड कुरसी और मेज़ के बीच में खड़ा हो गया। मेज़ से सटकर। बैरे ने कुरसी को फिर आगे की ओर खिसका दिया। और अन्ततः चाइल्ड ने अपनी भारी-भरकम देह कुरसी पर न्यस्त कर दी। वह अभी भी उसी प्रकार मुस्करा रहा था। मानो वह मुस्कान उसके मुख की गठन के साथ गुँथ गई हो। इस प्रकार कि वह उसे नोंचकर उतारना चाहे तो भी वह न उतरे !

मिस्टर गुप्ता को अपनी भूल पर पश्चात्ताप होने लगा। उन्होंने क्यों नहीं कह दिया कि वे कुछ और लोगों की राह देख रहे हैं, और उनकी मेज़ पर जगह खाली नहीं है ? चाइल्ड चला जाता। उसी प्रकार मुस्कराता हुआ। उसके सिर पर कोई सौ जूते मार देता तो भी वह उसी प्रकार मुस्काता रहता। यदि उसको कोई अपना स्वार्थ साधना होता, तो। नहीं तो वह मुस्कान एक क्षण में विलीन हो जाती। और उसका स्थान एक रोष की मुद्रा ले लेती।

चाइल्ड चला तो जाता। किन्तु वह फिर आ जाता। वह देखता रहता कि मिस्टर गुप्ता के पास कोई आया है या नहीं। उनके पास तो किसी को आना नहीं था। चाइल्ड ही फिर चला आता। चन्द मिनट के। बाद वह आया है तो अवश्य उसको उनसे कोई काम है। अन्यथा वह नहीं आता। और इस प्रकार मुस्कराता तो कभी भी नहीं।

मिस्टर गुप्ता ने पूछा : "डिनर खाएँगे ना, मिस्टर चाइल्ड !"

चाइल्ड ने अपनी मुस्कान को और भी विकसित करके उत्तर दिया : "थैंक्स, मिस्टर गुप्ता ! नो ! मैं सपर खाकर आया हूँ। आप तो जानते हैं कि हम अमेरिकन छ:-सात बजे साँझ का खाना खा लेते हैं।"

"आप पीएँगे क्या ?"

"आप तो जानते हैं। अमेरिकन का पेय तो एक ही है—स्कॉच ! दो पैग और एक सोडा !!"

मिस्टर गुप्ता ने बैरे को डबल स्कॉच लाने का ऑर्डर दे दिया। और वे फिर फ्लोर-शो देखने लगे। वे चाइल्ड की अवहेलना करना चाहते थे। प्रथम शिष्टाचार के परे। शायद वह कम्बख्त उसी कारण से चला जाए।

किन्तु चाइल्ड ने उनकी अवहेलना को भी अस्वीकार कर दिया। तब मिस्टर गुप्ता ने पूछा : "यह लड़की कैसी लग रही है ?"

चाइल्ड ने उत्तर दिया : "देखने में तो बहुत अच्छी है। लेकिन......

बात को पूरी किए बिना ही चाइल्ड ने अपनी अँगुली मिस्टर गुप्ता की तोंद में चुभो दी। चुभन ज़रा ज़ोर की थी। मिस्टर गुप्ता को अच्छी नहीं लगी वह चुभन। किन्तु उससे भी बुरा लगा चाइल्ड का मनोभाव। वह उस सुन्दरी को लेकर अश्लील इंगित कर रहा था। साला स्काउण्ड्रल ! उसका क्या अधिकार था उस अप्सरा पर ? वह तो उनकी हो चुकी थी। उन्होंने उसको देखा, तब से। मिस्टर गुप्ता के लिए अपनी असहिष्णुता छुपाना कठिन हो गया।

चाइल्ड बोला : "लड़कियों की बात छोड़िए, मिस्टर गुप्ता ! मैं अमेरिकन हूँ। ओरिएण्टल ब्यूटी का एडमायरर। और ओरिएण्ट की

ड्यूटी भी अमेरिकन को ही एडमायर करनी है। इसलिए मैडीट्रेनियन पार करते ही हमारा इनसे पाला पड़ता है। और हम भी....

चाइल्ड ने होंठ चाटकर चटखारा लिया। फिर वह बोला : "आज तो मैं आपके पास एक गम्भीर विषय पर परामर्श करने आया हूँ।"

मिस्टर गुप्ता सतर्क हो गए। अमेरिकन और गम्भीर बात !! यह तो उन्होंने अपने जीवन में पहली बार सुना था। और चाइल्ड ने भी पहली बार ऐसी बात कही थी। वे तो उसको एक जमाने से जानते थे। कई वर्ष पूर्व वह दिल्ली में आया, तब से। उसने तो कभी उनको यह अनुमान लगाने का अवसर नहीं दिया था कि वह भी गम्भीर बात कर सकता है। खैर। देखते हैं वह क्या कहता है। मिस्टर गुप्ता कुछ भी न कहकर चाइल्ड की ओर देखने लगे।

चाइल्ड ने वह मुस्कान अपने मुख पर से उतार ली। यह उसके गम्भीर होने का लक्षण था। फिर वह बोला : "मैंने सुना है कि आपकी मिल में स्ट्राइक होने वाली है ?"

वही हुआ जिससे मिस्टर गुप्ता घबरा रहे थे ! चाइल्ड के बच्चे ने उनका घाव फिर हरा कर दिया !! इजिप्ट की सुन्दरी ने दवा लगाई थी उनके घाव पर। अमेरिका के इस बेहूदा आदमी ने एकबारगी सब बेकार कर दिया। वे भ्रूकुञ्चित करके रह गए। कुछ बोले नहीं।

चाइल्ड ने कहा : "मुझे बहुत खेद है, मिस्टर गुप्ता ! मैंने सोचा कि शायद मैं आपको कुछ सहायता कर सकूँ।"

मिस्टर गुप्ता का चेहरा खिल गया। सहायता करने वाला यह पहला बन्दा मिला था उनको। और वे तो सहायता पाने के लिए तरस गए थे। वे पिघलकर बोले : "आप मेरी क्या सहायता कर सकते हैं ?"

चाइल्ड ने अपना स्वर नीचा करके उत्तर दिया : "आप जानते हैं कि कमला मेरी दोस्त है। गहरी दोस्त।"

"किन्तु वह तो जाती दोस्ती है, मिस्टर चाइल्ड ! वैसी दोस्ती तो उसके साथ मेरी भी है। आपसे भी बहुत पुरानी। पर इस मामले में तो

कमला की पार्टी ने टाँग अड़ा रखी है।"

"कम्यूनिस्ट पार्टी से भी मेरे ताल्लुकात बहुत अच्छे हैं।"

मिस्टर गुप्ता चकित रह गए। उनको चाइल्ड के कथन पर विश्वास करना कठिन हो गया। या फिर उन्होंने चाइल्ड के विषय में भूल की थी? शायद वह अमेरिकन नहीं था? और अमेरिकन था तो एम्बैसी का कर्म-चारी नहीं? उन्होंने अपना संशय मिटाने के लिए पूछा: "आप तो अमेरिकन एम्बैसी के लेबर-अटैचे हैं ना, मिस्टर चाइल्ड!"

चाइल्ड ने उत्तर दिया: "हाँ। आप और क्या समझे बैठे थे?"

"मैं तो यही समझता था। लेकिन आपने....

"मैं समझ गया। अमेरिकन एम्बैसी का कर्मचारी और कम्यूनिस्ट पार्टी से अच्छे ताल्लुक़ात! आप यही सोच रहे है ना?"

"ताज्जुब तो होता है।"

"झूठे प्रोपैगेण्डा के कारण। हमको लोग किसान-मजदूरों का दुश्मन मानते हैं। लेकिन यह तो सच नहीं। हम तो किसान-मजदूरों के दोस्त हैं। वैसे ही दोस्त जैसी की कम्यूनिस्ट पार्टी। हम दुश्मन हैं तो पोंगापंथी के दुश्मन है। जहालत के दुश्मन हैं हम लोग। उन सब बातों के जिनके कारण आपका यह महान् देश दुर्दशा में फँसा पड़ा है। कम्यूनिज़म से हमारी कोई दुश्मनी नहीं। एशिया के देशों में तो हम कम्यूनिज़म को प्रगति की प्रेरणा ही मानते हैं...

चाइल्ड की वाग्धारा बह निकली। प्रत्येक शब्द के साथ उसका स्वर कुछ ऊँचा होता जा रहा था। और उसकी आँखों में कुछ नशा-सा व्यक्त होने लगा था। वह ह्विस्की का नशा था, अथवा अपने वाग्वैभव का—मिस्टर गुप्ता निश्चय नहीं कर पाए। उनके पास यह सब सुनने का अथवा निश्चय करने का समय भी कहाँ था। वे तो काम की बातें करना चाहते थे। अमे-रिका के विषय में उनका मत भ्रान्त हो सकता था। किन्तु उससे क्या? काम की बात तो यह थी कि कल से ही उनके कारखाने में स्लो-डाउन स्ट्राइक शुरू होने वाली थी। अमेरिका वाले उसको रोक सकते थे क्या?

मिस्टर गुप्ता ने बीच में ही पूछ लिया : "आप मेरी क्या सहायता कर सकते हैं, मिस्टर चाइल्ड !"

चाइल्ड ने उत्तर दिया : "आप चाहें तो समझौता सम्भव है।"

"कमला ने कोई शर्तें रक्खी हैं क्या ?"

"कमला से तो मेरी बातें नहीं हुई। मैं तो अपने-आप ही...

"लेकिन समझौता करना तो कमला के हाथ में है। मैं तो समझौता चाहता ही हूँ। कारखाने को बन्द करना मैं बिल्कुल नहीं चाहता।"

"आप के देश जैसे अनुन्नत देश में एक सैकण्ड के लिए भी कोई कार-खाना बन्द करना महापाप है। आप तो जानते हैं अपनी जनता की हालत। पेट में रोटी नहीं, तन ढकने को कपड़ा नहीं, रुग्ण होने पर...

मिस्टर गुप्ता ने यह सब सुन रक्खा था। वे इस विवरण के विरोधी नहीं थे। उनके निकट सत्य का सार ही था यह विवरण। किन्तु उसको इस समय दोहराने से क्या लाभ ? इस प्रकार की बातें तो उस समय कही जाती थीं जब किसी को कोई वक्तृता देनी हो। इस समय तो वे काम की बातें कर रहे थे। और फिर उनको भी तो अपनी फिलॉसफी चाइल्ड को समझानी थी। वे बीच में ही बोल उठे : "देखिए, मिस्टर चाइल्ड ! मैं मजदूरों का दुश्मन नहीं हूँ। मैं उनको अपनी सन्तान के समान मानता हूँ। मेरे लिए जैसा परमानन्द, वैसे ही मेरी मिल में काम करने वाले मज़-दूर। आखिर मैं भी तो मार्क्स को महापुरुष मानता हूँ। मैंने भी तो दास कैपीटल पढ़ा है। मैं भी तो सोवियत यूनियन की यात्रा कर आया हूँ। मैं तो समझता हूँ कि मजदूर की सही माँग क्या है। लेकिन मैं मजबूर हूँ। बाज़ार में पक्के माल के भाव वही पुराने हैं। माल के दाम मैं बढ़ाऊँ तो कम्पीटीशन में पिट जाऊँगा। और ज्यादा मजदूरी अपनी जेब से दे नहीं सकता। जेब में कुछ होता तो मुझे उज्र नहीं था। मैं तो दाल-रोटी खाकर गुजर करने वाला हूँ। मैं क्या यह मिल अपने लिए चलाता हूँ ? मैंने तो इसीलिए यह मुसीबत सिर पर ले रक्खी है कि पाँच-छः हज़ार मजदूरों का पेट पल जाता है। लेकिन सरकार ने मेरी मुसीबत कर रक्खी है।

टैक्सों के मारे नाक में दम आ गया। फिर आए दिन के चन्दे। अब बात मेरे बस की नहीं रही। मेरी जेब बिल्कुल खाली है। घर का खरच भी बैंक के ओवरड्राफ्ट से चल रहा है।"

चाइल्ड ने अपनी मुस्कान फिर अपने मुख पर पहिन ली। वह बोला : "कमला बाहर लाउन्ज में बैठी है। मैंने यहाँ आते हुए उसको देखा था। मेरी बातें नहीं हुई हैं उसके साथ। उसने मुझको नहीं देखा। लेकिन उसको देखकर मुझे आपकी मुसीबत याद आ गई। फिर जब आपको यहाँ देखा तो मैंने सोचा कि जब आप दोनों यहाँ मौजूद हैं तो मैं एक कोशिश क्यों न कर देखूँ ?"

मिस्टर गुप्ता समझ गए कि कमला चाइल्ड के साथ आई है। समझौता करने के लिए। और चाइल्ड उनको झूठमूठ बना रहा है। उनको बनाना क्या आसान काम था ? वे सत्तर घाट का पानी पी चुके थे। उन्होंने सारी ज़िन्दगी औरों को बनाया था। फिर भी उनकी बाछें खिल गईं। अब कमला उनके काबू में थी। उसकी पोज़ीशन में ज़रूर कोई कमज़ोरी थी। अन्यथा वह स्वयं समझौते की बात चलाने नहीं आती। मिस्टर गुप्ता तुरन्त उठकर चाइल्ड के साथ हो लिए। बैरा कहता ही रह गया, "योर डिनर, सर !" मिस्टर गुप्ता ने उसकी ओर देखा तक नहीं।

लाउन्ज में कमला बैठी थी। ह्विस्की की चुस्कियाँ लेती हुई। उन दोनों को आते देखकर भी वह बैठी ही रही। बस, एक बार उन लोगों की ओर देखकर मुस्करा-भर दी। चाइल्ड ने अपना हाथ उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा : "हलो, कमला ! तुम यहाँ क्या कर रही हो ?"

कमला ने बैठे-बैठे ही अपना हाथ चाइल्ड के हाथ में देकर कहा : "और तुम ही यहाँ क्या कर रहे हो ?"

"मैं तो फ्लोर-शो देखने आया था। यहाँ ये मिस्टर गुप्ता मिल गए। सोचा लाउन्ज में बैठकर कुछ बातें ही करेंगे।"

तब कमला ने मिस्टर गुप्ता की ओर देखा। वह दो दाँतों से मुस्कराकर बोली : "हलो ! गुप्ताजी !"

मिस्टर गुप्ता को आश्चर्य हो रहा था कि क्या यही उनकी जानी-पहिचानी कमला है ! वही पुरानी कमला !! वह तो कभी इस प्रकार निस्तेज नहीं दिखाई देती थी। अभी कुछ दिन पहिले ही तो उन्होंने देखा था उसको। तब तो यह ऐसी निढाल नहीं थी। तो क्या हो गया कमला को ?

मिस्टर गुप्ता को मौन देखकर कमला ने कहा : "बहुत नाराज हैं ना, गुप्ताजी ! मुझसे ऐसा क्या कुसूर हो गया ?"

मिस्टर गुप्ता ने सावधान होकर कहा : "नहीं, कमलाजी ! ये आप कैसी बातें कर रही हैं ! मैं तो आपको देखकर सहम-सा गया। यह आपका क्या हाल हो गया है ? क्या आप बीमार हैं ?"

"नहीं तो।"

"तो क्या दौड़-धूप बहुत करनी पड़ रही है ?"

"कम्यूनिस्ट पार्टी की मेम्बर हूँ मैं। आपकी तरह कैपीटलिस्ट नहीं हूँ। मुझे काम तो करना ही पड़ता है। कभी कम, कभी बहुत ज्यादा।"

मिस्टर गुप्ता ने उत्तर नहीं दिया। चाइल्ड खड़ा देख रहा था। उन दोनों के बीच हिन्दी में बातें हो रही थीं। और वह कुछ भी नहीं समझ पा रहा था। अब उन दोनों को मौन देखकर उसने अपने मुख पर मुस्कान चढ़ाई और वह कमला से बोला : "हम लोग यहाँ बैठ जाएँ ?"

कमला ने कहा : "कोई प्राइवेट बातें नहीं करनी हों तो बैठ जाइए। मुझे कोई एतराज़ नहीं।"

"प्राइवेट कुछ नहीं है। यूँ ही गप-शप करना चाहते हैं।"

"आप लोग ठहरे बड़े आदमी। एक कैपीटलिस्ट। दूसरा इम्पीरियलिस्ट सरकार का लेबर-अटैचे। मैंने सोचा...

चाइल्ड कमला के बराबर में बैठ गया। कमला से सट कर। मिस्टर गुप्ता कमला की दूसरी बगल में टिक गए। कमला ने बैरे को बुलाकर उन लोगों के लिए भी व्हिस्की मँगवा दी।

मिस्टर गुप्ता चाहते थे कि काम की बात पहले कमला चलाए और वे

ऐसा भाव कारण कर लें जैसे उनको कोई विशेष दिलचस्पी नहीं हो। किन्तु कमला ने तो कुछ कहा ही नहीं। वह चाइल्ड के साथ इधर-उधर की बातें करती रही। इस प्रकार आध घण्टा बीत गया।

तब अधीर होकर मिस्टर गुप्ता ने ही कमला को सम्बोधित किया : "आज आप मिल ही गई तो एक बात पूछ लेता हूँ, कमलाजी ! मेरी मिल बन्द करवाए बिना क्या आपका काम नहीं चल सकता ?"

कमला ने शान्त स्वर में उत्तर दिया : "कौन बन्द करवाना चाहता है आपकी मिल ? मैं तो मजदूरों की हमदर्द हूँ। मजदूर भूखों मरेंगे तो क्या मुझको अच्छा लगेगा ? लेकिन आपने कोई रास्ता ही नहीं छोड़ा।"

"मैंने तो पूरी कोशिश की थी कि समझौता हो जाए। पीछे क्या सम-झौते नहीं होते आए ? लेकिन अबकी बार तो आपने मुझको मुश्किल में डाल दिया।"

"मसानी से अपील कीजिए। वह आपको मुश्किल से निकाल लेगा।"

"मसानी की ऐसी-की-तैसी ! उससे मुझे क्या लेना-देना ? मैं तो उसका मुँह भी नहीं देखना चाहता।"

"तो यह कपूर सारे शहर में जो कहता फिर रहा है वह क्या झूठ बात है ?"

"क्या कहता फिर रहा है ?"

"यही के आप सुतन्तर पार्टी में नाम लिखवा रहे हैं।"

"वैसे तो मुझे आजादी है के मैं किसी भी पार्टी में नाम लिखवा लूँ। लेकिन सुतन्तर पार्टी की तरफ तो मैंने अभी तक ताका भी नहीं।"

"ऐसी क्या बुरी बात है उस पार्टी में ? आखिर आप ही लोगों की तो पार्टी है ? मेरा मतलब कैपीटलिस्ट लोगों की।"

"निकम्मे और निखट्टू लोगों की पार्टी कहिए, कमलाजी ! राजाजी को जॉब नहीं मिला। मुन्शी और रंगा को भी नहीं। और बस पार्टी बना बैठे। किसी कारखानेदार का उस पार्टी से क्या मतलब।"

कमला मौन हो गई। वह जानती थी कि मिस्टर गुप्ता को किसी भी

पार्टी-फार्टी से कोई लगाव नहीं है। फिर भी वह उनके मुख में सुनना चाहती थी कि उनके विषय में वह अफवाह झूठी है।

चाइल्ड अभी तक चुप बैठा था। उन दोनों में बातें होने लगी थीं तो उसने अपने मुख पर से वह मुस्कान उतार ली थी। अब उसको दोबारा अपने मुख पर चढ़ाकर वह बोला : "स्वतन्त्र पार्टी जहन्नुम में जाए! आप दोनों तो देश-भक्त हैं। मसानी की तरह अमेरिकन एजेन्ट तो नहीं हैं आप लोग? आप लोग फिजूल की बातों पर क्यों झगड़ रहे हैं? आप लोगों को तो अपने प्राइम मिनिस्टर की अपील पर ध्यान देना चाहिए। इस अनुन्नत देश में एक सैकण्ड के लिए भी कारखाना बन्द करना....

कमला भी चाइल्ड की इस रटी-रटाई स्पीच से परिचित थी। स्वयं उसकी पार्टी भी तो देती थी ऐसी ही स्पीच। किन्तु पार्टी के तो कुछ सिद्धांत थे। पार्टी को यह स्वीकार नहीं था कि मजदूरों की मींगी बन जाए और कारखाने चलते रहें। इसलिए चाइल्ड को चुप करने के लिए कमला बीच में ही बोल उठी : "देखिए, मिस्टर गुप्ता! अगर आपको यह वहम है के चीन और हिन्दोस्तान के झगड़े और सुतन्तर पार्टी की फॉरमेशन से फ़ायदा उठाकर आप हमारी यूनियन तोड़ देंगे तो दूसरी बात है। फिर तो ताकत आजमाना जरूरी हो जाता है। देखना पड़ेगा के आप टूटते हैं या हमारी यूनियन टूटती है। लेकिन आपको अगर उस किस्म की खामखयाली नहीं है तो...

मिस्टर गुप्ता नेत्र विस्फारित करके बोल उठ : "लाहौल विला कुव्वत, कमलाजी! यह सब आप क्या कह रही हैं? मैं, और आपकी यूनियन तोड़ना चाहूँ!! आपको क्या याद नहीं के मैंने कितनी मेहनत से आपकी यूनियन को खड़ा किया है...

'यूनियन तो मजदूरों की मेहनत से खड़ी हुई है। या फिर कम्यूनिस्ट पार्टी की कोशिश से। वह बात आप जाने दीजिए।"

"मेरा मतलब, मैं आपकी यूनियन का दुश्मन कब से हो गया?"

"मैंने तो ऐसा ही सुना है। और इस बात का सुबूत भी मेरे पास है।"

"सुबूत ! कौन-सा सुबूत है आपके पास ?"

"मजदूर-बस्ती के मैदान में पड़ा हुआ वह मुस्टण्डा। उसको आपने ही तो भेजा है। मजदूरों में फूट डलवाने के लिए। लेकिन उसकी तो एक भी नहीं चली। चारों यूनियनों ने स्ट्राइक का रैजोल्यूशन पास कर लिया। आपके पास चारों का ज्वॉइण्ट नोटिस आया है ना ?"

मिस्टर गुप्ता कमला की ओर इस प्रकार देख रहे थे जैसे वह पागल हो गई हो। उनका भाव देखकर कमला ने पूछा : "क्या बात है, मिस्टर गुप्ता !"

मिस्टर गुप्ता बोले : "या तो मैं ख्वाब देख रहा हूँ, या आप !"

"मैं समझी नहीं आपकी बात ?"

"वह मुस्टण्डा चार-पाँच दिन पहले मेरे पास आया था। जनसंघ वालों की वो यूनियन है ना, उसीके लीडरों के साथ। पहले तो मैंने उसको अपने आफिस में घुसने देने से इनकार कर दिया। लेकिन यूनियन के लीडर हठ करने लगे तो मुझे उसकी बकवास सुननी पड़ी। उसकी एक भी बात मंजूर नहीं की मैंने। उल्टा उसको धमकाकर ही आफिस का दरवाजा दिखा दिया। ऐसे अहम मामलों में मुफ्तखोरों का क्या काम ! और आप कह रही हैं के वो मेरा एजेण्ट है !!"

कमला का तीर निशाने पर लगा था। उसने जान-बूझकर मिस्टर गुप्ता पर झूठा दोष लगाया था। और मिस्टर गुप्ता ने बौखलाकर बात बतलाना आरम्भ कर दिया था। और किसी प्रकार भी वह नहीं जान पाई थी उस बात को। कमला ने पूछा : "वह मुस्टण्डा कह क्या रहा था, गुप्ताजी !"

मिस्टर गुप्ता ने अपने मुख पर जुगुप्सा जगाकर उत्तर दिया : "उसने कुछ कहा होता तो मैं बतलाता, कमलाजी ! वह तो ऐसे ही बे-सिर पैर की हाँक रहा था।"

"फिर भी ?"

"पहली बात तो उसने यह कही के मैं मिल के मजदूरों से एक अपील करूँ—अगर मजदूर लोग कम्यूनिस्ट यूनियन को छोड़कर दूसरी यूनियनों

में आ जाएँ तो मैं उनकी सारी माँगें मन्जूर कर लूँगा। मैंने कहा—नामुमकिन ! कम्यूनिस्ट यूनियन मेरी अपनी यूनियन है। दूसरी बात उसने यह कही के मैं मजदूर-बस्ती में मंदिर बनवा दूँ जिससे मजदूरों का मन धर्म की ओर जाए। मैंने कहा—धर्म तो झगड़े की जड़ है। हमारे प्रधान मन्त्री कहते हैं के धर्म ने ही इस देश का सत्यानाश किया है। मैं अपनी मिल की बस्ती में ऐसी खुराफात नहीं होने दूँगा। तीसरी बात उसने यह कही के बस्ती में से शराब की दूकानें और रण्डीखाने उठवा दूँ। मैंने कहा—ये बेचारे मजदूर मेहनत-मशक्क़त करते है। दिन-रात। इनको अपने मन-बहलाव का कुछ साधन तो चाहिए। दो-चार प्याले शराब पीकर और चहकती लौण्डियों से चार घड़ी चुहल करके ये बेचारे अपना दुख भूल जाते हैं, और तरो-ताजा हो जाते हैं। मजदूरों का मनबहलाव छीनकर मैं कसाई नहीं बनना चाहता। चौथी बात उसने यह कही के मैं बस्ती में बिजली-पानी का इन्तजाम कर दूँ, नालियाँ निकलवा दूँ, स्कूल और हस्पताल खुलवा दूँ, सस्ते दामों पर रोजमर्रा का सामान मोहिया करने वाली दूकानें खुलवा दूँ, वगैरा-वगैरा। मैंने कहा—ये काम कॉरपोरेशन को करने चाहिएँ। या फिर कॉपरेटिव डिपार्टमेण्ट को। मैंने कोई यतीमखाना तो खोला नहीं। मैं तो मिल चलाता हूँ। मजदूरों को रोजी मिल जाती है, और मेरे बच्चों का पेट पल जाता है। फिर सोशलिस्ट मुल्क के मजदूरों को मुफ़्तखोरी की आदतें डालना मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं। हमारे प्रधान मन्त्री ने कहा है के आराम हराम है।''

मिस्टर गुप्ता के स्वर में आवेश उमड़ रहा था। वे अपनी बात कहते कहते हाँफने लगे थे। बात पूरी करके उन्होंने एक लम्बी साँस ली। इसी समय चाइल्ड उठकर खड़ा हो गया। वह बिना कुछ बोले ही हाँफने लगा था। अपनी कलाई पर बँधी हुई घड़ी को देखकर वह बोला : "मैं चलता हूँ।''

कमला ने पूछा : "इतनी जल्दी क्यों ? क्या कुछ काम है ? मेरा मतलब, बहुत जरूरी काम ?''

"एक फर्स्ट क्लास स्कूप मिल गया। मुझे इसी वक़्त जाकर उसके साथ

बातें करनी पड़ेंगी।"

"किसके साथ ?"

"उस स्याडू के साथ। तुम यह बात तो कभी मुझको बतलाई ही नहीं ?"

"वाह ! यह भी कोई बात है ?"

"इससे बढ़कर और क्या बात होगी ? टाइम के सम्वाददाता को मैंने कहा और वह अपना कैमरा लेकर दौड़ा। इण्डिया की ट्रेड यूनियन मूवमैंट में यह एक नया मोड़ है।"

"नॉनसैन्स !!"

"लेकिन मैं तो जाऊँगा। इस स्कूप को मैं हाथ से नहीं निकालने दे सकता।"

चाइल्ड बार-बार अपनी घड़ी को देख रहा था। कमला कुछ नहीं बोली। मिस्टर गुप्ता भी मौन रहे। अमेरिकन की यह हरकत उन दोनों को पसन्द नहीं आ रही थी। उनकी जान मुसीबत में थी, और अमेरिकन के लिए वह बात एक स्कूप बन गई !!

लेकिन वे चाइल्ड को रोक नहीं सके। वह उसी समय वहाँ से भाग खड़ा हुआ। और वे दोनों फिर बातें करने लगे।

(४)

उसी रात को, लगभग उसी समय, साधु बाबा का धूना धधक रहा था। और धूने के चारों ओर बैठे थे उनके पुराने सत्संगी। पूरन, मनसाराम, धनपत, करनसिंह, फूलचन्द तथा उनके साथी अन्य पाँच-छः मजदूर। आज वहाँ एक ही व्यक्ति नया था। अटलप्रसाद पाण्डे। कई दिन से वह बराबर साधु बाबा के पास आ बैठता था। इसी समय। वह बोलता कुछ नहीं था। किन्तु सुनता था सब कुछ। बड़े ध्यान से। किसी ने अभी तक उससे पूछा भी नहीं था कि वह है कौन, और क्यों वहाँ आता है।

साधु बाबा ने कहा : "तुम ने भूल की है, पूरन ! कम्युनिस्टों के साथ मिलकर तुम को कभी भी कोई काम नहीं करना चाहिए। उनके साथ

मिलकर हड़ताल तो बिल्कुल नहीं करनी चाहिए थी।"

पूरन बोला : "महाराज ! हम विवश हो गए। कांग्रेस तथा सोश-लिस्ट पार्टी की यूनियनों ने भी जब वैसा ही निश्चय कर लिया तो हमारे लिए अपनी यूनियन के मज़दूरों को सँभालना कठिन हो गया।"

"क्यों ? तुम तो यूनियन के नेता हो। अपने अनुयाइयों को ठीक मार्ग पर ले जाना तुम्हारा दायित्व था। तुम्हारा अधिकार भी।"

पूरन ने सिर झुका लिया। साधु बाबा के स्वर में भर्त्सना का संकेत था।

तब मनसाराम ने कहा : "महाराज ! मिल के मज़दूर लोग मालिक पर बहुत बिगड़े हुए हैं। हमारी यूनियन में तो और भी अधिक आवेश है। वे लोग इस समय उसी नेता की बात सुनेंगे जो उन लोगों को संघर्ष की ओर ले जाएगा। इस समय हम यदि संघर्ष का विरोध करते हैं तो हमारी यूनियन ही संकट में पड़ जाएगी।"

साधु बाबा ने पूछा : "यूनियन तुमने किसलिए बनाई है ?"

"मज़दूरों में भारतीयता का प्रचार करने के लिए, महाराज !"

"तो क्या बहुमत के सामने भीरुता का आचरण करना भारतीयता का प्रचार है ?"

मनसाराम ने भी सिर झुका लिया। तब करनसिंह बोला : "महाराज ! जिस सवाल को लेकर मालिक से संघर्ष होने जा रहा है उसमें भूल भले ही हो, किन्तु भारतीय मज़दूर संघ मालिक का साथ कभी नहीं दे सकता। और ये लोग यदि इस समय संघर्ष में नहीं उतरे तो मज़दूर लोग यही समझेंगे कि ये मालिक का साथ दे रहे हैं।"

साधु बाबा मौन रहे। उनको विचार करने की यह पद्धति पसन्द नहीं थी। सब बातों का निश्चय एक ही बात से होता था—कौन-कौन क्या-क्या कहेगा ! यह तो कोई पद्धति नहीं थी।

पूरन ने सिर ऊपर उठाकर कहा : "हमारी यूनियन के लोग मालिक के प्रति विशेष विक्षुब्ध हैं, महाराज ! हम लोग भारतीय मज़दूर संघ बनाने

लगे थे तो मालिक ने हमारे पाँव हीं नहीं जमने दिए थे। हमने उनको बहुत समझाया था कि मिल में कम्युनिस्टों का एकाधिकार नहीं रहना चाहिए। कम्युनिस्टों की इतनी शक्ति न उनके कारखाने के लिए शुभ है, न देश के लिए शुभ। किन्तु उन्होंने हमारी एक नहीं सुनी थी। वे यही कहते रहे थे कि हम मजदूरों के भीतर फूट डालकर फसाद करवाना चाहते हैं। यह तो हम में शक्ति थी, अन्यथा....

मनसाराम बीच में ही बोल उठा : "महाराज ! मालिक की करतूतें आप सुनें तो आप स्वयं कह देंगे कि हमारे साथियों का विक्षोभ वाजिब है। बरसों से कम्यूनिस्ट यूनियन और मालिक के बीच गहरी साठ-गाँठ रही है। मालिक ने कभी किसी दूसरी यूनियन की बात पर ध्यान नहीं दिया। अब वे अपनी ही करनी का फल भोग रहे हैं। साँप को दूध पिलाया था उन्होंने, अब ज़रा साँप के काटे का मज़ा भी ले लें।"

साधु बाबा ने धनपत को सम्बोन्धित किया : "तुम क्या कहते हो, धनपत !"

धनपत बोला : " यह बहुत पुराना किस्सा है, महाराज ! यह मिल बनकर खड़ी हुई तब का। जहाँ पर आज मिल की बिल्डिंग खड़ी है वहाँ उस वक्त चमारों की एक बस्ती थी। अच्छे खाते-पीते लोग थे वे। अपना धन्धा करके दो पैसे कमा लेते थे। मालिक ने जमीन खरीदनी चाही। चमार किसी भी भाव पर जमीन बेचने के लिए तैयार नहीं हुए। तब मालिक ने कमलाजी की शरण ली। ये उस समय म्यूनिस्पिल कमिशनर थीं। इन्होंने सारे मैम्बरों से गुपचुप करके म्युनिस्पैलिटी में प्रस्ताव पास करवा लिया कि चमारों की बस्ती वहाँ से उठ जानी चाहिए। और एक दिन पुलिस ने आकर उन ग़रीबों की झोंपड़ियाँ उखाड़ फैंकीं। तब से...

"कमला की पार्टी ने विरोध नहीं किया ?"

"विरोध तो खूब किया था। पार्टी के चुने हुए कामरेडों ने हफ्तों तक चमारों की सभाएँ जोड़कर वक्तृताएँ दी थीं। चमारों के बड़े-बूढ़े तो चाहते थे कि मालिक से मोल-भाव करके अच्छे-से दाम ले लें। सरकार के सामने

अड़ने के लिए तैयार नहीं थे वे। किन्तु कम्यूनिस्ट पार्टी ने लड़कों को भड़का दिया। वे मरने-मारने को तैयार हो गए। और पुलिस ने दो-चार लड़कों के सिर खोलकर, बाक़ी को भगा दिया।"

"कम्यूनिस्ट पार्टी उस समय कहाँ गई थी ?"

"कम्पनी बाग में मीटिंग करके सरकार के ज़ोर-जुल्म की निन्दा कर रही थी।"

"चमारों को क्या अपनी धरती के दाम नहीं मिले ?"

"दाम तो मिले। लेकिन सरकारी रेट से। बाज़ार का भाव तो चौगुना-पँचगुना था। हज़ार रुपए की धरती के उनको दो सौ मिले होंगे।"

"कम्यूनिस्ट पार्टी ने भला ऐसा क्यों किया ?"

उत्तर दिया पूरन ने : "सुना है कि कम्यूनिस्ट पार्टी ने मालिक से एक लाख रुपया लिया था। एक लाख रुपए की टिकट लगाकर तो यह नाटक बुरा नहीं था, महाराज !"

धनपत बोला : "जिन दिनों यह काण्ड हुआ उन दिनों मैं भी पार्टी का होल-टाइमर था। इस काण्ड को लेकर पार्टी में भीतर-ही-भीतर बहुत विवाद हुआ था। मैंने तो इसी बात पर पार्टी छोड़ी थी।"

मनसाराम बोला : "यह तो नई बात सुनी ! तुमने यह किस्सा तो कभी सुनाया ही नहीं, धनपत !"

धनपत ने कहा : "सिद्धान्त का किस्सा है यह, मनसाराम ! ऐसे किस्से सुनने की तुम्हें फ़ुरसत कहाँ ? तुम तो वह एक लाख रुपए वाली बात सुन-कर ही सन्तुष्ट हो गए।"

"तो क्या कम्यूनिस्ट पार्टी ने रुपया नहीं लिया था ?"

"रुपया तो लिया था। लिया क्यों नहीं था ? शायद एक लाख से भी ज़्यादा लिया हो।"

"तो फिर ?"

"किन्तु वह तो गौण बात है। रुपया लेने के कारण मैं पार्टी नहीं छोड़ता। वह तो भूल हो सकती थी। और भूल में सुधार भी हो सकता

था। किन्तु मैंने जब यह देखा कि वह भूल नहीं, कम्यूनिस्ट सिद्धान्त के अनुकूल आचरण ही है तो मेरा मन पार्टी से फिर गया।"

फूलचन्द ने पूछा : "धनपत ! भैया, वह बात तो तुम हमें बतला दो। हमें तो सिद्धान्त की बातों में बहुत रस आता है।"

धनपत कहने लगा : "मेरे जैसे कुछ पार्टी कामरेड कह रहे थे कि कम्यूनिस्ट पार्टी को ग़रीब चमारों के विरुद्ध एक सरमाएदार का साथ नहीं देना चाहिए। तब कुछ पुराने कॉमरेड बोले कि हम लोग सरमाएदार की परिभाषा से ही परिचित नहीं हैं। हमने उनसे परिभाषा पूछी। वे बोले कि असली सरमाएदार ये बड़े-बड़े कारखाने बनाने वाले नहीं हैं। ये तो समाजवाद के अग्रदूत हैं। ये कारखाने बना रहे हैं, समाजवादी सरकार उनका राष्ट्रीयकरण कर देगी। बस, बना-बनाया समाजवादी समाज मिल जाएगा। और...

फूलचन्द बीच में ही बोल उठा : "समाजवादी समाज ! यह कैसा समाजवाद है ? तुम तो गप्प मारने पर उतर आए, धनपत !"

धनपत ने कहा : "कोई आदमी जब गप्प को सत्य मान लेता है तो सत्य उसको गप्प के समान मिथ्या लगता है। तुम यदि यह जानते होते कि कम्यूनिस्ट पार्टी समाजवाद का क्या अर्थ लगाती है तो तुम ऐसी बात नहीं कहते।"

"वाह ! जानता कैसे नहीं ? मैंने विनोबाजी की पुस्तकें पढ़ी हैं। उन्होंने स्वयं बतलाया है कि कम्यूनिस्ट जिस समाजवाद की कल्पना करते हैं, उसमें सब लोग एक समान होंगे, सबको सुख-पूर्वक जीवन-यापन के साधन सुलभ होंगे। सर्वोदयवाद इसीलिए ध्येय की बात पर कम्यूनिस्टों का विरोध नहीं करता। उस ध्येय की सिद्धि के साधनों को लेकर ही दोनों में मतभेद है।"

धनपत की भौंहें तन गईं। मानो वह कोई कठोर बात कहना चाहता हो। किन्तु उसने अपना मुख नहीं खोला। मानो वह संयम बरतना चाहता हो।

फूलचन्द ने फिर उसको छेड़ दिया : "अब दो ना जवाब ! चले थे समाजवाद की परिभाषा करने ! !"

धनपत ने प्रखर स्वर में कहा : "फूलचन्द ! इस देश का दुर्दिन तो इसी-लिए निकट आ गया कि विनोबा जैसे अनपढ़ और अहंकार-विमूढ़ लोगों की बकवाद यहाँ बे रोक-टोक चल जाती है। उस आदमी ने पाँव-पाँव चलकर सारे भारतवर्ष की धूल फाँक ली। किन्तु उससे यह नहीं बन पड़ा कि कुछ दिन एक स्थान पर शान्ति से बैठकर कम्यूनिस्टों की दो-चार पुस्तकें पढ़ ले। दरिद्र किसानों को भावाविष्ट करके उनके सर्वस्व का अपहरण करने-वाला कब से सिद्ध पुरुष हो गया ? विनोबा का नाम तुम मत लो। नहीं तो और भी...

फूलचन्द भीगी बिल्ली बन गया। वह मन्द स्वर में बोला : "बाबा ने हमको अहिंसा का आचरण करने का आदेश दिया है। मन, वचन और कर्म से। हम बाबा का आदेश मानते हैं। नहीं तो...

"रहने दो यह ढोंग ! बहुत देखी है तुम्हारी अहिंसा ! कोई दुर्बल होता है तो तुम लोग उसके सिर पर सवार हो जाते हो। और आततायी के तुम पाँव धो-धोकर पीते हो। यही है न तुम्हारी अहिंसा ?"

"अब तुम व्यर्थ की बातें करने लगो तो कोई क्या उत्तर दे !"

"व्यर्थ की बातें कर रहा हूँ मैं ! ! याद है कम्यूनिस्टों ने विनोबा को क्या क्या गालियाँ दी थीं ? तीन-चार साल तक। और जानते हो उन गाली देने वालों में सबसे प्रमुख कौन था ? केरल का नम्बूद्रीपाद। पर विनोबा का सबसे बड़ा चेला जयप्रकाश जब केरल पहुँचा तो भरी सभा में नम्बूद्रीपाद से लिपटकर अश्रुमोचन करने लगा ! यही है न तुम्हारी अहिंसा ?"

"अहिंसा तो क्षमा का सिद्धान्त है। हम पापी से द्रोह नहीं करते, उसके पाप से ही द्रोह करते हैं।"

"तो तनिक इन जनसंघ वालों को भी क्षमा कर दो।"

"इनको कैसे क्षमा किया जा सकता है ? इन्होंने तो राष्ट्रपिता की हत्या की है।"

"तो अहिंसा का एक असूल यह भी है कि उसको मानने वाला प्रतिपल मिथ्याभाषण करे ?"

"यह मिथ्याभाषण है ? सारा देश जानता है। एक तुम ही न जाने कहाँ रहते हो !"

"मैं तो धरती पर ही रहता हूँ। मैंने उस समय के सारे अखबार पढ़े थे। मुकदमे की कार्रवाई का पूरा हाल भी। नेहरू की सरकार सारा जोर लगाकर भी सिद्ध नहीं कर पाई कि दो-चार लौण्डों को छोड़कर गांधीजी की हत्या में किसी और का भी हाथ था। और जनसंघ तो उस वक्त बना भी नहीं था।"

"राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ तो था ? वही तो जनसंघ का जन्मदाता है।"

"हाँ, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ तो था। भगवान् की असीम कृपा से। और भगवान की कृपा बनी रही तो राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ उस समय तक बना रहेगा जबकि नेहरू तथा कम्यूनिस्टों के साथ तुम्हारे विनोबा और जयप्रकाश का मुँह काला करके सबकी सवारी गधों पर निकाली जाएगी।"

"तुम तो गाली-गलौज पर उतर आए !'

"और तुम्हारे साथ सुलझने का कोई उपाय भी हो ? गांधीवादी को पहले गाली नहीं दी जाए तो वह स्वयं गाली देने लगता है।"

फूलचन्द मौन हो गया। मनसाराम ने कहा : "धनपत! इस धाँधली में तुम अपनी असली बात तो भूल ही गए। तुम तो हमें समाजवाद की परि-भाषा समझा रहे थे।"

धनपत ने उत्तर दिया : "बहुत दिन तक पार्टी में रहकर मैं भी समाज-वाद के वही अर्थ समझता था जो कि ये विनोबा के चेले समझते हैं। मैं भी इन्हीं की नाईं अनपढ़ था। पार्टी के अखबार बेच लेता था। गलाबाजी कर लेता था। बस। तब वह चमारों को निकाल भगाने का प्रसंग प्रस्तुत हुआ। और एक दिन कमलाजी ने मार्क्स, लेनिन तथा स्टालिन की पुस्तकें खोलकर रख दीं मेरे सामने। सबने साफ-साफ लिखा था कि समाजवाद के शत्रु बड़े-बड़े सरमाएदार नहीं, प्रत्युत् छोटे किसान, छोटे दूकानदार, छोटे कारखाने-

दार, खोंचेवाले, मिस्तरी, दस्तकार लोग, नाई, धोबी और दर्जी वगैरा है। इन लोगों को व्यक्तिगत सम्पत्ति के मोह से निकालकर समाजवाद की व्यवस्था में बाँधना बहुत ही कठिन है।

पूरन बोला : "यह तो बहुत अजीब बात सुनी आज !"

धनपत ने कहा : "अजीब नहीं है, पूरन ! पूरा सिद्धान्त जान लेने पर अजीब नहीं लगेगी। कम्यूनिस्ट सिद्धान्त में समाजवाद का एक ही अर्थ है—ऐसी व्यवस्था जिसमें सारे काम बड़े पैमाने पर और मशीनों के द्वारा सम्पन्न हों। ऐसी व्यवस्था में छोटे-छोटे गाँव, छोटे-छोटे खेत, छोटे-छोटे उद्योग, छोटे-छोटे व्यवसाय का कोई स्थान नहीं। और ये बड़े-बड़े सरमाएदार समाज को ऐसी ही व्यवस्था की ओर अग्रसर कर रहे हैं। इसीलिए छोटे-छोटे लोगों से सामना पड़ने पर कम्यूनिस्ट पार्टी इनको अपना मित्र मानती है।"

"तो क्या यह मिथ्या बात है कि समाजवाद समता, स्वतन्त्रता तथा भ्रातृत्व का सिद्धान्त है ?"

"समाजवाद के कई-एक सिद्धान्त ऐसे भी हैं जो इन आदर्शों की दुहाई देते हैं। किन्तु वे सिद्धान्त तो आजकल कहीं भी मान्य नहीं। आजकल के समाजवादी तो घूम-फिरकर मार्क्स और लेनिन के ही चेले हैं। और लेनिन ने स्पष्ट शब्दों में समता, स्वतन्त्रता तथा भ्रातृत्व का तिरस्कार किया है।"

"क्या कहता है लेनिन ?"

"समता बूर्जुआ वर्ग का दुराग्रह है। स्वतन्त्रता बुर्जुआ वर्ग की स्वप्नशीलता है। और भ्रातृत्व बूर्जुआ वर्ग का भाव-विलास है। लेनिन की भाषा किसी को संशय में नहीं रखती। वे बड़े ही स्पष्टवादी थे।"

उस छोटी-सी सभा में कुछ क्षण के लिए सन्नाटा छा गया। तब धनपत ने साधु बाबा की ओर देखा। वे मुस्करा रहे थे। धनपत को निहार-निहार कर। धनपत का उत्साह दुगुना हो गया। वह कहने लगा :

"महाराज ! दिल्ली के दस-बीस होलटाइमर एक मीटिंग में बैठे। मैं भी उस मीटिंग में था। कमलाजी ने हमको पार्टी के हथकण्डों से अवगत किया। वे बोलीं—'सिद्धान्त की दृष्टि से हम इस संघर्ष में चमारों का पक्ष

नहीं ले सकते। चमार पिछले युग के प्रतीक हैं। उनकी तुलना में गुप्ताजी जैसे सरमाएदार प्रगति के अग्रदूत हैं। कूटनीति की दृष्टि से भी चमारों का समर्थन करने से पार्टी का कोई अर्थ सिद्ध नहीं होता। वे पार्टी के सदस्य बनना नहीं चाहते, पार्टी को चन्दा नहीं देते, पार्टी का अनुगमन नहीं करते। उनके ऊपर तो उनकी पुरानी पंचायत का ही प्रभुत्व है। मिल बनेगी तो मजदूर लोग कम्यूनिस्टों की यूनियन में सम्मिलित होंगे, पार्टी को चन्दा देंगे, पार्टी की शक्ति बढ़ाएँगे।'

"तब एक कॉमरेड ने उठकर पूछा—'तो फिर यह सब बात पार्टी को प्रकाशरूप से कहनी चाहिए। जनता के सामने तो पार्टी चमारों का ही पक्ष ले रही है।'

"कमलाजी हँसने लगीं। फिर वे बोलीं—'तुम कम्यूनिस्ट होलटाइमर होकर भी प्रोपैगैण्डा और एजीटेशन के बीच का अन्तर नहीं जानते। जने तुमको होलटाइमर किसने बना दिया ? प्रोपैगैण्डा का अर्थ है पूर्ण सिद्धान्त जो केवल पार्टी के अन्तरंग लोगों को ही समझाया जाता है। एजीटेशन का अर्थ है जनता में विक्षोभ उपजाने का कूटकौशल। सिद्धान्त के आधार पर हम चमारों का नहीं, गुप्ताजी का समर्थन करेंगे। किन्तु जनता को तो यही समझाना चाहिए कि हम दीन-हीनों के साथी हैं। कम्यूनिस्ट पार्टी अभी इस स्थिति में नहीं है कि वह अपना पूरा सिद्धान्त जनता के समक्ष प्रकट कर सके। ऐसा समय तब आएगा जब कि पार्टी एकछत्र प्रभुता प्राप्त कर लेगी। तब तक....

मनसाराम बीच में ही बोल उठा : "अर्थात् हाथी के दाँत खाने के और, दिखलाने के और !"

धनपत ने हँसकर कहा : "यह कहावत बहुत पुरानी है, मनसाराम ! किन्तु इसको पहलेपहल और पूर्णतया चरितार्थ किया है कम्यूनिस्ट पार्टी ने। कम्यूनिस्टों के विषय में जो देश अथवा जो पार्टी यह महामन्त्र प्रतिपल याद नहीं रखती, वह कम्युनिस्टों का खाद्यान्न है। इसी महामन्त्र को न समझ पाने के कारण आज इस देश के सारे दल कम्यूनिस्टों की चक्की के

बैल बने हुए हैं....

पूरन बोला : "वह बात छोड़ो, धनपत ! तुम पहले वह किस्सा सुनाओ।"

धनपत बोला : "किस्सा और क्या होगा ? कमलाजी की बातें सुनकर एक अन्य होलटाइमर ने पूछा—'सिद्धान्त की बात हम मानते हैं। कूटकौशल की बात भी। किन्तु इस बात का क्या निश्चय है कि मिल बन जाने पर मिस्टर गुप्ता हमारी पार्टी को ही यूनियन बनाने देंगे ? अपना काम निकाल लेने पर वे आँखें भी तो बदल सकते हैं।'

"कमलाजी ने उत्तर दिया—'इस विषय में मैं गुप्ताजी के वायदे पर नहीं जाती। मैं गुप्ताजी के विचार देखती हूँ। विचार के नाते वे सोलहों आने सोशलिस्ट हैं। हमारी सोशलिजम के समर्थक। फिर अपनी शक्ति का भी सवाल है। गुप्ताजी ने हमारा समर्थन भी किया और हमने यूनियन भी बना ली तो भी शक्ति के अभाव में वह हमारे हाथ से निकल जाएगी। और गुप्ताजी बदल भी गए तथा उन्होंने हमारा विरोध भी किया, तो भी शक्ति हाथ में होने पर सफलता हम को ही मिलेगी। हमको ध्यान इस बात का रखना चाहिए कि मिल बनते ही हम उसमें भर्ती होने वाले मजदूरों की ओर विशेष ध्यान दें।'

"मुझको बहुत क्रोध आ गया था। मैंने खड़े होकर कह दिया—'मैं कामरेड शर्मा की बात से पूरी तरह सहमत हूँ। आखिर पार्टी को गुप्ताजी ने एक लाख रुपया दिया है। ज्यादा भी दिया हो। उस रुपए से हम सैंकड़ों होलटाइमर मिल के मजदूरों में तैनात कर सकते हैं।'

"बस क्या था ! कमलाजी की आँखों से अंगार बरसने लगे। वे बोलीं—'धनपत ! पार्टी को गुप्ताजी ने कितना रुपया दिया है, यह बात तुम पार्टी पर छोड़ो। इस समय तो तुम इतनी बात बतला दो कि ब्रिटिश सरकार की खुफिया पुलिस का काम करने के लिए तुमको कितने रुपए महीना मिलता है ? पार्टी को पूरी कैफियत मालूम है। तुम अपने-आप सब सच-सच बतला दो तो तुमको सच बोलने की दाद तो मिलेगी।'

"मेरे सिर पर मानों पहाड़ टूट पड़ा। मेरा जी चाहता था कि कमला-जी का मुँह नोंच लूँ। किन्तु उस सभा के सारे सदस्य सशंक आँखों से मेरी ओर देख रहे थे। मैं उसी समय वहाँ से उठकर चला आया। अगले दिन पार्टी के प्रत्येक सदस्य तथा सहयात्री को मेरे बारे में तीन बातें मालूम थीं—धनपत ब्रिटिश पुलिस के टुकड़ों पर पलने वाला देशद्रोही कुत्ता है! धनपत ने पार्टी के काम से उसको दिया गया रुपया शराब और रण्डीबाजी पर खराब कर दिया!! धनपत पार्टी की लड़कियों के साथ लुच्चापन करना चाहता था!!!

'मैंने पार्टी से त्यागपत्र देना चाहा। कमला जी ने कहला भेजा कि कम्यूनिस्ट पार्टी में त्यागपत्र देने और स्वीकार करने का बुर्जुआ रिवाज नहीं है। कम्यूनिस्ट पार्टी तो अपने पथभ्रष्ट सदस्यों को पार्टी से निकालकर जनता को जतला देती है कि जनता उन पागल जानवरों के प्रति सावधान रहे।

"और मुझे पार्टी से निकाल दिया गया।"

धनपत मौन हो गया। उसकी आँखों से अग्निस्फुलिंग झर रहे थे। किन्तु साथ-ही-साथ वे आँखें आर्द्र भी थीं।

फूलचन्द को अवसर मिल गया। वह पूछ बैठा: "इस बात का क्या प्रमाण है कि जो आरोप कमलाजी ने तुम पर लगाए थे वे मिथ्या थे?"

उत्तर दिया पूरन ने। वह बोला: "फूलचन्द! इस बात का क्या प्रमाण है कि तुम्हारा विनोबा मास्को का वेतनभोगी भृत्य नहीं है?"

फूलचन्द ने कहा: "तुम्हारे कहने से हो गया!"

"नहीं, तुम्हीं झूठ-सच के ठेकेदार हो!! तुम्हारी क्या आँखें फूट गई हैं, फूलचन्द! तुमने धनपत को देखा नहीं अपनी आँखों से? बीस बरस से तो तुम जानते होगे उसे? धनपत को धोखेबाज़, देशद्रोही, शराबी और लुच्चा वही व्यक्ति कह सकता है जिसमें स्वयं ये सब गुण विद्यमान हों। धनपत और मुझमें अनेक मतभेद रहे हैं। और रहेंगे भी। किन्तु इतना मैं जानता हूँ कि वह सन्त आदमी है। देश और समाज के कल्याण के अतिरिक्त उसने

कभी किसी अन्य बात पर ध्यान नहीं दिया।"

फूलचन्द ने और कुछ नहीं कहा। साधु बाबा ने धनपत से पूछा: "धनपत ! फिर क्या हुआ ?"

धनपत ने कहा: "उसके बाद की कहानी तो मेरे व्यक्तिगत जीवन की कहानी है, महाराज ! उसके सुनाने का मैं कोई प्रयोजन नहीं देखता। किन्तु यदि आप का आदेश हो तो....

"नहीं, नहीं, मैं इस मिल के बनने की तथा इस पर कम्यूनिस्टों का कब्जा होने की कहानी सुनना चाहता हूँ।"

"ओ ! वह कहानी, महाराज ! मिल बनकर खड़ी हुई तब तक हिट-लर ने रूस पर हल्ला बोल दिया था। मालिक को सरकारी आर्डर मिले। कम्यूनिस्ट पार्टी को मुँह-माँगा सरकारी रुपया। मालिक ने कम्यूनिस्ट पार्टी की पूरी सहायता की और मजदूर लोग पार्टी के पंजे में आ गए। १६४२ का वह विप्लव हुआ तब भी यह कारखाना तीनों शिफ्ट चलता रहा। फिर युद्ध बन्द हुआ। कांग्रेस-सोशलिस्ट लोग बाहर आए। कम्यूनिस्ट देश में बदनाम हो चुके थे। एक झपट में उनकी यूनियन टूट गई। १६५१ तक कम्यूनिस्ट फिर से यूनियन पर कब्जा नहीं कर सके। तब एक बार फिर मालिक ने कम्यूनिस्टों की सहायता की। और सोशलिस्ट यूनियन टूट कर फिर से कम्यूनिस्टों की यूनियन बन गई। तब से लेकर आज तक मालिक और कम्यूनिस्टों का एक गुट बना रहा है।"

मनसाराम ने कहा: "महाराज ! इस कहानी का उत्तरार्ध हमारे साथियों को भी ज्ञात है। इसीलिए वे मालिक को क्षमा करना नहीं चाहते।"

साधु बाबा बोले: "बात यह नहीं है कि मालिक को क्षमा किया जाए या नहीं। वह एक अन्य प्रश्न है। इस समय तुमको यह देखना है कि क्या तुम्हारी यूनियन कम्यूनिस्टों का साथ देकर उचित काम कर रही है ?"

"हमारी यूनियन ने ही नहीं, महाराज ! कांग्रेस और सोशलिस्ट यूनि-यनों ने भी तो हड़ताल का फ़ैसला किया है।"

धनपत बोला: "कांग्रेस की यनियन तो नाम-मात्र की है। कांग्रेस के

एक बेकार और बदनाम नेता को नौकरी दिलवाने के लिए कागजी कार्रवाई मात्र का गई है। और वह व्यक्ति कम्युनिस्टों के सारे फ्रन्टों का सदस्य है। उनके साथ रूस और चीन भी घूम आया है। रही सोशलिस्ट यूनियन। उसका तो कोई सिद्धान्त ही नहीं। जिधर की हवा बह रही हो उधर ही वे भी भाग उठते हैं।"

साधु बाबा ने कहा : "तो फिर यही समझना चाहिए कि मजदूर लोग पूरी तरह कम्यूनिस्टों के हाथों में है ?"

उत्तर दिया पूरन ने : "नहीं, महाराज ! हमारा भारतीय मजदूर-संघ कम्यूनिस्ट यूनियन से कुछ ही पीछे है। दस मजदूर कम्यूनिस्ट यूनियन में हैं तो सात हमारे संघ में। हमारी शक्ति उनसे कुछ ही कम है।"

"शक्ति से तुम्हारा क्या आशय है ?"

"संगठन, महाराज ! संगठन ही शक्ति का जन्मदाता है।"

"और सिद्धान्त ?"

"हमारे पास सिद्धान्त भी हैं। बड़ा पक्का सिद्धान्त है, महाराज !"

"क्या है वह सिद्धान्त ?"

"भारतीयता का प्रचार, शुद्ध राष्ट्रवाद का पोषण। अभारतीय और राष्ट्रविरोधी तत्त्वों का विरोध।"

"अभारतीय तथा राष्ट्र-विरोधी तत्त्व कौन-से हैं ?"

"मुसलमान और ईसाई। वे लोग भारत से द्रोह करते रहे हैं, और करते रहेंगे।"

"और कम्यूनिस्ट तथा सोशलिस्ट ? वे क्या अभारतीय और राष्ट्र-द्रोही नहीं है ?"

"वे अभारतीय तो हैं, महाराज ! किन्तु उनमें अधिकतर लोग हिन्दू हैं। इसलिए उनको राष्ट्रद्रोही नहीं माना जा सकता।"

"हिन्दू की परिभाषा क्या है ?"

पूरन ने मनसाराम की ओर देखा। जैसे वे दोनों परस्पर परामर्श करना चाहते हों। धनपत इसी बीच बोल उठा : "हिन्दू की परिभाषा मैं बतलाता

हूँ, महाराज ! वह परिभाषा जो ये लोग मानते हैं। किसी आदमी का नाम यदि हिन्दू नाम हो तो ये उसको हिन्दू मानते हैं। चाहे वह कैसा ही म्लेच्छाचार करता फिरे, चाहे वह हिन्दुओं के देवी-देवताओं, हिन्दुओं के धर्मग्रन्थों और हिन्दुओं की आचार-परम्पराओं की निन्दा करने में दिन-रात एक कर दे। इसीलिए ये लोग नेहरू, डाँगे, जयप्रकाश नारायण और विनोबा को हिन्दू मानते हैं।"

साधु बाबा ने पूरन से पूछा : "पूरन ! इस मिल में मुसलमान और ईसाई कितने हैं ?"

पूरन ने उत्तर दिया : "मुसलमान तो हैं दस-पाँच। ईसाई शायद एक भी नहीं।"

"वे मुसलमान क्या कोई षड्यन्त्र रच रहे हैं यहाँ ?"

"नहीं, महाराज ! उनको तो अपने काम-से-काम। वे तो किसी यूनियन के मेम्बर भी नहीं बने।"

"तब इतना तो स्पष्ट है कि कम-से-कम इस कारख़ाने में तुम्हारे सिद्धान्त का कोई उपयोग नहीं ?"

पूरन मौन हो गया। मनसाराम से भी कोई उत्तर नहीं बन पड़ा। तब साधु बाबा ने मुस्कराकर कहा : "और सिद्धान्त का उपयोग नहीं तो संगठन भी निष्प्रयोजनीय है। तुम अपना संगठन विसर्जित कर दो, पूरन ! सिद्धान्त-विहीन संगठन का भारवाहन करना समय और शक्ति का दुरुपयोग है।"

साधु बाबा की बातें सुनकर पूरन का साथी एक अन्य मजदूर भड़क उठा। वह अभी तक मौन बैठा था। अब वह बोला : "देखिए, महाराज ! आपको यदि मालिक की वकालत करनी है तो आप सीधी-सीधी बात कहिए। इस प्रकार गोल-मोल और घुमा-फिराकर कहने से कोई आपकी बहकाई में नहीं आएगा।"

साधु बाबा को बुरा लगा वह आक्षेप। फिर भी वे शान्त रहकर बोले : "मालिक के समर्थन में मैंने एक शब्द भी कहा है, मौजीराम !"

"भारतीय मज़दूर संघ को तोड़ देने का परामर्श देना मालिक का सम-

र्थन करना नहीं तो और क्या है, महाराज !"

"मैं किसी का समर्थन नहीं कर रहा, भैया ! मैं तो केवल यही कह रहा हूँ कि तुम लोगों को जो कुछ करना है वह किसी सुनिश्चित सिद्धान्त के आधार पर करो। बहुमत के आधार पर नहीं। सिद्धान्त के बिना एक पद भी आगे-पीछे रखना बेपतवार की नौका के समान बहना है।"

"किन्तु हमारे पास तो बहुत ही सुनिश्चित सिद्धान्त है। इस मिल की बात जाने दीजिए आप। हमारी आँखें तो सारे देश पर हैं। हम देश-भर के हिन्दु-समाज को संगठित करना चाहते हैं। संगठन के बिना ही हिन्दु-समाज इस दुर्दशा को प्राप्त हुआ है। संगठन होते ही वह पुनरेण शक्तिशाली हो उठगा।"

"हिन्दु-समाज में किसी समय संगठन था अथवा नहीं ?"

"था क्यों नहीं ? बहुत विशाल और दृढ़ संगठन था।"

"तो वह संगठन टूटा क्यों ?"

मौजीराम से कोई उत्तर नहीं बन पड़ा। वह प्रश्नसूचक दृष्टि से पूरन की ओर देखने लगा। मानो वह चाहता हो कि पूरन ही साधु बाबा के प्रश्न का उत्तर दे। पूरन ही तो उनके संगठन का नेता था। इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर देना उसीका दायित्व था। अन्य लोग तो अपना दायित्व इतना ही मानते थे कि कोई उनके संगठन पर शंका प्रकट करे तो वे उससे लड़ मरें।

किन्तु अबकी बार पूरन ने अपना दायित्व नहीं निभाया। वह मौन बैठा रहा। सिर झुकाए। एक क्षण उपरान्त साधु बाबा ने कहा : "पूरन ! इतना तो स्पष्ट है कि इस मिल का मालिक एक क्षुद्र कोटि का स्वार्थान्ध मनुष्य है। अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए वह कोई भी पाप कर सकता है। इसलिए उसको दण्ड तो मिलना ही चाहिए। किन्तु प्रश्न तो यह है कि उसे दण्ड देता कौन है। यदि कम्यूनिस्ट लोग उसे दण्ड देते हैं तो उसके फलस्वरूप कम्यूनिस्टों की शक्ति ही बढ़ेगी।"

पूरन बोला : "यही तो धर्मसंकट है, महाराज ! हम जानते हैं कि कम्यू-निस्ट पार्टी हम लोगों को बलात् इस संघर्ष की ओर खींच रही है। हम यह

भी जानते हैं कि इस संघर्ष में जीत किसी की भी हो, हमारी तो हानि ही होगी। किन्तु हमको तो दूसरी राह नहीं सूझती। अपने साथी मजदूरों को हम कैसे मनाएँ? वे लोग तो अधिकतर हमारे स्वयंसेवक हैं नहीं। उनमें हिन्दुधर्म के नाम पर कुछ भावना का उद्रेक होता है, इसीलिए वे हमारी यूनियन में आ भी गए हैं। यदि हमने तनिक भी उनको नियन्त्रित करने का यत्न किया तो वे हमको दुत्कार देंगे।"

पूरन ने अपनी बात कहकर इधर-उधर देखा। यह भेद की बात थी। उनके संगठन की दुर्बलता का रहस्य। फूलचन्द तो जा चुका था। करनसिंह भी। धनपत से कोई बात छिपी नहीं थी, न पूरन छिपाना चाहता था। शेष सब लोग पूरन के ही साथी थे।

तब सहसा पूरन की दृष्टि अटल पर जा पड़ी। उसको पूरन ने देखा ही नहीं था। अब पूरन को पश्चात्ताप होने लगा कि उसने भेद की बात एक अज्ञात व्यक्ति के सम्मुख क्यों प्रकट कर डाली। उसने सतर्क होकर अटल से पूछा: "आपका परिचय?"

अटल ने बहुत ही विनम्र वाणी में उत्तर दिया: "जी! मैं भी आपके समान ही एक हिन्दू हूँ। आपके ही संघ का एक स्वयं-सेवक।"

"पहिले तो आपको कभी नहीं देखा?"

"जी! मैं बाहर से आया हूँ। कानपुर से। वहाँ इन साधु बाबा का बहुत नाम सुना था। आज प्रातःकाल मैंने सुना कि ये यहाँ विराज रहे हैं। इनके दर्शन करने चला आया।"

अटल ने 'कानपुर' शब्द पर विशेष जोर डाला था। फिर वह ध्यान से साधु बाबा की ओर देखने लगा। मानो उनके मुख पर किसी प्रतिक्रिया का भाव पकड़ना चाहता हो। किन्तु साधु बाबा की मुखमुद्रा ने कोई संकेत नहीं दिया। वे यथापूर्व शान्त रहे, और एक क्षण उपरान्त पूरन से बोले: पूरन! मैं यह नहीं कहता कि इस समय तुम अपनी बात वापिस ले लो। संघर्ष यदि हुआ तो तुम्हारे अनुयायी मजदूर उसमें कूदेंगे ही। चाहे तुम उनके नेता रहो या न रहो। अब हठात् तुम उनको कोई सिद्धान्त की बात

नहीं समझा सकते। किन्तु यदि तुम पहिले से ही उनको किसी सिद्धान्त में शिक्षित किए रहते तो तुमको आज इस विवशता का बोध नहीं होता।"

पूरन ने कुछ नहीं कहा। वह साधु बाबा की बात से सहमत था। इस प्रकार विवशता का बोध उसे पहिली बार नहीं हुआ था। इसके पूर्व भी इसी प्रकार के प्रसंग उपस्थित हुए थे। और पहिले भी वह अपनी यूनियन का पथप्रदर्शक न रहकर अनुयायी-मात्र रह गया था।

तब धनपत ने कुछ कहने के लिए मुख खोला। किन्तु वह कुछ कहता उसके पूर्व ही मैदान के उस कोने पर एक कार का उग्र प्रकाश प्रस्फुटित हुआ। कार उसी ओर आ रही थी। सब उसकी प्रतीक्षा में मुँह बाए उस ओर देखने लगे।

कार धूनी से दस गज पर आकर रुक गई। धूल का एक बादल बरसाती हुई। बहुत बड़ी कार थी। अमेरिकन कार। उसके रुकते ही दो अमेरिकन कूद कर बाहर निकले और उस मण्डली की ओर दौड़ आए। एक के गले में एक बड़ा-सा कैमरा लटक रहा था। फ्लैश बल्ब समेत। कुछ पास आ कर वह अमेरिकन ऊँचा-नीचा होता हुआ कैमरा साधने लगा। दूसरे क्षण वह फोटो उतारने वाला था।

साधु बाबा ने मौजीराम से कहा: "मौजीराम! इस मूर्ख का कैमरा छीनकर मेरे पास ले आओ।"

मौजीराम ने एक झपट में कैमरा उस अमेरिकन के गले से निकाल लिया। फ्लैश बल्ब अपने स्थान से भ्रष्ट होकर धरती पर गिर पड़ा, और उस घबराए हुए अमेरिकन के पाँव तले आकर चकनाचूर हो गया। तब वे दोनों अमेरिकन सकपकाकर एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे। उनमें से किसी ने भी एक शब्द नहीं कहा।

साधु बाबा ने अंग्रेजी में उनसे पूछा: "क्या चाहते हो तुम लोग?"

उनका उच्चारण शुद्ध था। एक अमेरिकन आगे बढ़ आया। यह वही चाइल्ड था। अमेरिकन एम्बैसी का लेबर-अटैचे। उसने अपने साथी की ओर संकेत करते हुए शिकायत के स्वर में कहा: "ही स्याडू! टाइम मैगजीन

का यह सम्वाददाता आपके ऊपर एक स्टोरी केबल करना चाहता है। इसी क्षण। यह बेचारा लाओस के भूतपूर्व प्रधान मन्त्री की प्रैस-कॉन्फ्रेन्स में जा रहा था। मैंने इसको आपका समाचार दिया। और यह बेचारा प्रैस-कॉन्फ्रेंस में जाना छोड़कर इधर दौड़ा आया है।"

साधु बाबा ने कहा : "तो आप लोग प्रैस-कॉन्फ्रेन्स में चले जाइए। वहाँ तो बहुत महत्व की बातें सुनने को मिलेंगी। केबल करने के लिए स्टोरी का मसाला भी। अन्ततः लाओस की स्थिति तो बहुत शोचनीय है।"

टाइम मैगज़ीन का सम्वाददाता बोला : "सो तो संसार में किसी-न-किसी देश की स्थिति सदा ही शोचनीय रहती है। तो क्या अमेरिकन संवाद-पत्र-पाठक इसीलिए अपना जीवन विषाक्त कर ले ? साधारण पाठक तो जीवन से विनोद के दो क्षण माँगता है। और टाइम मैगज़ीन अपने साधारण पाठक की अवहेलना नहीं कर सकता।"

साधु बाबा हँसने लगे। धनपत अंग्रेज़ी जानता था। वह बोला : "तो आप यों कीजिए कि भारतवर्ष में रहने वाले किसी भी अमेरिकन के विषय में कोई भी स्टोरी केबल कर दीजिए। विनोद की वैसी मात्रा अन्यत्र अप्राप्य है।"

सम्वाददाता ने पूछा : "क्या मतलब ?"

धनपत ने उत्तर दिया : "मेरा आशय है कि भारत में रहने वाले अमेरिकन से बढ़कर हास्यास्पद जन्तु तो संसार में और कोई नहीं। फिर आप लोग क्यों इतस्ततः भटक रहे हैं ?"

टाइम का संवाददाता मुँह चढ़ाकर मौन हो गया। बात उसको बहुत बुरी लगी थी। किन्तु उसने डेल कारनेगी भी पूरा पढ़ रखा था। वह कोई ऐसी-वैसी बात कहकर स्टोरी पाने का अवसर हाथ से गँवा देना नहीं चाहता था। उसने चुप रहना ही श्रेयस्कर समझा।

तब चाइल्ड बोला : "ही स्याडू ! इनको मैं ही अपने साथ लाया हूँ। आप इनसे दो बातें करके मेरी लाज रख लीजिए। नहीं तो मुझे बहुत लज्जित

होना पड़ेगा।"

साधु बाबा ने पूछा : "आप कौन हैं ?"

"मैं अमेरिकन एम्बैसी का लेबर-अटैचे हूँ। इस देश की लेबर मूवमैंट से सम्पर्क स्थापित करना मेरा काम है। आज मैंने अकस्मात सुना कि आप लेबर मूवमैंट में एक नए सिद्धान्त का प्रतिपादन कर रहे हैं। इसीलिए मैं इनको साथ लेकर दौड़ा चला आया।"

साधु बाबा एक क्षण के लिए मौन रहकर विचार करने लगे। फिर उन्होंने टाइम के संवाददाता को सम्बोधित किया : "अच्छा ! आप पूछिए, क्या पूछना चाहते हैं ?"

संवाददाता अपनी जेब से दूसरा फ्लैश बल्ब निकालता हुआ बोला : "पहले आपका फोटो तो ले लूँ।"

"नहीं, फोटो की कोई आवश्यकता नहीं।"

"फोटो के बिना कैसे चलेगा ?"

"मेरे फोटो का मेरे सिद्धान्त से क्या सम्बन्ध है ?"

"वाह, आपकी जीवनी भी तो केबल करनी होगी। आपका वजन, आपका आयतन, आपका खान-पान। फोटो के बिना वे सब बातें मूर्त नहीं हो पाएँगी।"

साधु बाबा ने चाइल्ड से पूछा : "आप तो कह रहे थे कि आपको मेरे सिद्धान्त में दिलचस्पी है ?"

चाइल्ड ने उत्तर दिया : "बात यह है, स्याड्र ! कि पत्रकारिता एक बड़ा ही टैक्नीकल काम है। उसके विषय में मेरे साथी ही प्रमाण हैं।"

संवाददाता बोला : "साधारण अमेरिकन पाठक को सिद्धान्त की बातों में कोई रस नहीं आता। उसको तो जीवन के मानवीन पक्ष में ही रस आता है।"

साधु बाबा ने कहा : "किन्तु हिन्दू संन्यासी की तो कोई जीवनी नहीं होती। आपको मेरे सिद्धान्त से प्रयोजन नहीं है तो आप जा सकते हैं।"

तब सम्वाददाता ने अपनी जेब से एक सौ रुपए का नोट निकाला, और

उसे साधु बाबा को दिखलाता हुआ बोला : "ही स्याडू ! यह चाहिए ?"

साधु बाबा ने नोट ले लिया। संवाददाता अपना कैमरा ठीक करने लगा। किन्तु दूसरे क्षण ही वह विजड़ित हो गया। साधु बाबा ने वह नोट धूने में डाल दिया था। सम्वाददाता के देखते-देखते नोट क्षार हो गया।

चाइल्ड को क्रोध आ गया। वह स्वर को ऊँचा करके बोला : "मैंने सुना था कि आप कम्यूनिजम का विरोध करते हैं, इसीलिए मैं तुरन्त दौड़ा चला आया। और आप...

साधु बाबा ने बीच में ही पूछा : "क्या आप भी कम्युनिजम का विरोध करते हैं ?"

चाइल्ड ने अपनी छाती पर हाथ रखकर प्रतिप्रश्न किया : "मैं, अथवा मेरे देश की सरकार ?"

"अपनी ही बात कहिए। आपकी सरकार के विषय में तो मैं सब कुछ जानता हूँ।"

"आप क्या जानते हैं ?"

"यही कि उस सरकार से बढ़कर कम्यूनिजम का पोषण करने वाली कोई अन्य शक्ति संसार में नहीं।"

"किसी पुरानी अमेरिकन सरकार के विषय में यह सत्य हो सकता है। किन्तु वर्तमान सरकार तो...

"मैं किसी विशेष अमेरिकन सरकार की बात नहीं कह रहा। सभी अमेरिकन सरकार इस विषय में एक समान हैं।"

"यह बात ठीक नहीं। डलेस था तब तक अमेरिकन सरकार कम्यूनिजम का बहुत विरोध करती थी। इसीलिए मैंने तो अपने पद से त्याग-पत्र भी दे दिया था।"

"क्यों ? आपको क्या वह नीति पसन्द नहीं थी ?"

"कम्यूनिजम का विरोध करने वाली किसी भी नीति का समर्थन मैं नहीं कर सकता।"

"तो आप मुझ जैसे कम्यूनिजम के विरोधी के पास कैसे चले आए ?"

"वह तो मेरा जॉब है। मैं अपना जॉब करता हूँ, और अपनी रोटी कमाता हूँ।"

साधु बाबा ने सम्वाददाता से पूछा : "और आप ?"

सम्वाददाता बोला : "कम्यूनिज़म का विरोधी तो मैं भी नहीं हूँ।"

"तो आप भी केवल जॉब ही कर रहे हैं ?"

"बिल्कुल ! जॉब के अतिरिक्त और सार ही क्या है।"

"तो डलेस के समय में भी आप लोग अपना जॉब क्यों नहीं करते रहे ? खैर, आप दोनों अब जा सकते हैं। मुझको आप-जैसे लोगों से कोई बात नहीं कहनी।"

चाइल्ड बोला : "किन्तु आप अमेरिका की जनता से तो कुछ कहना चाहते हैं ? वे लोग जब जानेंगे कि भारत में आप जैसा कम्यूनिज़म का विरोधी...

साधु बाबा ने बीच में ही कहा : "मैं केवल कम्यूनिज़म का ही विरोधी नहीं हूँ। मैं तो चाहता हूँ कि कम्यूनिस्ट पार्टी के असुरों के साथ-साथ अमेरिका का पशु-परिवार भी इस देश से विलीन हो जाए।"

"अमेरिकन लोग क्या इतने बुरे हैं ?"

"बुरे तो उनको मैं नहीं बतला रहा। बुरा होने के लिए भी बल चाहिए। कम्युनिस्ट बुरे हैं, किन्तु उनमें बल है इसीलिए वे बुरे भी बन सके हैं। नपुंसक लोग क्या बुरे बनेंगे ?"

"तो अमेरिका के लोग नपुंसक है ?"

"इसके अतिरक्त उस देश का कोई अन्य परिचय ही नहीं। अपनी पाशव-प्रवृत्तियों की पूर्ति करते-करते उस देश के लोगों का पुरुषत्व क्षीण हो चुका है। उनसे मुझे किसी प्रकार के पराक्रम की प्रत्याशा नहीं।"

सम्वाददाता भभक उठा। वह साधु बाबा की ओर अँगुली तानकर गुर्राया : "ही स्याडू ! नपुंसक इस देश के लोग हैं या अमेरिका के, इस बात का उत्तर तुमको नई दिल्ली की लड़कियों से मिल जाएगा। तुमको अपने पुरुषत्व पर गर्व हो तो चलो, तुम हमारे साथ स्पर्धा करके देख लो। देखें

नई दिल्ली की लड़की किसके साथ...

धनपत उठकर खड़ा हो गया। अमेरिकन का अश्लील इंगित वह समझ गया था। इंगित में भरा सत्य भी उसे ज्ञात था। वह जानता था कि नई दिल्ली की भारतीय आधुनिकाएँ किस प्रकार अमेरिकन लोगों पर लट्टू हैं। किन्तु यह काण्ड उसके लिए असह्य था कि कोई अमेरिकन भारत की भूमि पर खड़ा होकर भारतीय नारी के अध:पतन पर आत्मतृप्ति अनुभव करे। धनपत के स्नायुमण्डल फूल उठे।

किन्तु साधु बाबा ने धनपत को किसी प्रकार की भी चेष्टा करने से रोक दिया। वे बोले : "धनपत ! तुम इन लोगों के साथ हाथापाई करोगे ? क्या तुम्हारे पुरुषत्व के अनुकूल कोई अन्य करणीय ही नहीं रहा ?"

दोनों अमेरिकन लौट चले। और तब अटलप्रसाद पाण्डे अकस्मात् उठकर उनके साथ हो लिया। उसने न जाने उन दोनों से क्या कहा। उन दोनों के मुख प्रफुल्लित हो उठे। उन्होंने एक बार मुड़कर साधु बाबा की ओर देखा। विजय-गर्व-गर्भित दृष्टि से। फिर वे अटल को अपनी कार में बैठाकर जिस ओर से आए थे उसी ओर चले गए।

धनपत बड़बड़ाया : "यह लड़का न जाने कौन है ?"

साधु बाबा बोले : "कम्यूनिस्ट है, कम्यूनिस्ट। कम्यूनिस्ट के अतिरिक्त अन्य कौन अमेरिकन लोगों के साथ घुल-मिल सकता है ? और किसी की तो बात ही अमेरिका वालों की समझ में नहीं आती।"

मनसाराम बोला : "तब तो इसको पीटना चाहिए था। झूठा कहीं का ! कह रहा था कि संघ का स्वयं सेवक है !"

साधु बाबा ने हँसकर कहा : "सिद्धान्त की लड़ाई के लिए प्रस्तुत हुए बिना हाथापाई करना भी मारात्मक है, मनसाराम !"

तीसरा परिच्छेद

: १ :

मार्च मास बीत चला है। धरा पर वसन्त का वैभव विकीर्ण है। वातास में मलयानिल की मुदिता। दिल्ली यूनिवर्सिटी के लॉन में विविध वर्ण के पुष्प प्रफुल्लित हैं। और आगामी परीक्षा में पास होने के लिए अनवरत प्रयास करने वाले अनेक छात्र इतस्ततः पदचार करते हुए अथवा उपासीन होकर अपनी पाठ्य-पुस्तकों का पारायण कर रहे हैं।

अपराह्न की वेला प्रायः बीत चली। वृक्षों की छाया का आयतन प्रति-पल बढ़ने लगा। ऐसे समय में एक वृक्ष के नीचे उपासीन परमानन्द ने अपने पास में बैठी हुई रोज़ा से कहा : "रोज़ी ! बात अब मेरे हाथ में नहीं रही। आज तेरी ममी डैडी के पास आई थीं। मेरी शिकायत करने। उनका खयाल है के मैंने ही तुझको उनके खिलाफ़ करके घर से भगा दिया है।"

रोज़ा ने पूछा : "क्या कह रही थीं ममी ?"

"वे कह रही थीं कि अगर मैं तेरे साथ शादी करना चाहता हूँ तो उनको कोई ऐतराज नहीं। मेरे डैडी अगर मान जाएँ तो वे तो तैयार हैं। इसके लिए रोज़ा को घर से भागने की कोई ज़रूरत नहीं।"

"तेरे डैडी ने क्या कहा ?"

"डैडी बोले कि उनको भी कोई ऐतराज़ नहीं। वे तो बहुत दिन से यह चाहते हैं के कमला की लड़की उनके घर में बहू बनकर आए, और उन दोनों की पुरानी दोस्ती और भी पुख़्ता हो जाए।"

"तूने क्या कहा ?"

"मैंने कहा कि रोज़ा अपनी मर्ज़ी से घर छोड़कर गई है। उसमें मेरा

कोई हाथ नहीं।"

"वे लोग मान गए तेरी बात ?"

"डैडी तो मान गए। लेकिन तेरी ममी को यक़ीन नहीं हुआ। उनको तेरे भाग आने में कोई राज़ मालूम पड़ता है। और मुझे वे तेरा राज़दार समझती हैं।"

"तो क्या कुछ ग़लत समझा है उन्होंने ?"

रोज़ा परमानन्द की ओर देखकर मुस्कराने लगी। परमानन्द भी मुस्करा उठा। फिर उसने पूछा : "रोज़ी ! तू अपने घर लौटकर नहीं जाएगी ?"

रोज़ा बोली : "नहीं।"

"लेकिन इस ज़िद की वजह क्या है ?"

"ज़िद कहाँ कर रही हूँ, पम्मी ! जिस फिज़ा में मेरी रूह सूखती है वहाँ रहना मैं बिल्कुल नहीं चाहती। बस, इतनी-सी वजह है। ज़िद की कौन सी बात है इसमें ?"

"तुझे अपनी ममी से ममता नहीं होती ?"

"ममता तो बहुत होती है। लेकिन वह बेकार है। ममी को तो मैं उस फिज़ा से बाहर निकाल नहीं सकती।"

"कोशिश करके देख ली ?"

"कोशिश का कोई नतीजा नहीं निकलेगा। मैं जानती हूँ। इसीलिए कोई कोशिश नहीं की।"

"कोशिश तो करनी चाहिए। आखिर इतना तो तुझको मालूम है कि तेरे सिवाय तेरी ममी का और कोई महबूब नहीं। तेरे बिना उनकी ज़िन्दगी तल्ख़ हो जाएगी।"

"कुछ दिन के लिए। ज़्यादा अरसे तक नहीं। फिर वे मुझे भी भूल जाएँगी।"

"यह कैसे मुमकिन है ?"

"ममी को मैं खूब जानती हूँ। वे तो अपने सिवाय और कुछ भी नहीं देख पातीं। अपनी तरक़्क़ी की फ़िक्र में वे और इतनी सारी बातें भूल गईं। तो

फिर मुझको ही क्यों नहीं भूल जाएँगी ?"

"यह तेरी ना-इन्साफ़ी है, रोज़ी ! तू तो जानती है कि तेरी मम्मी पार्टी के लिए क्या-क्या कुरबानी करने के लिए तैयार हैं। पार्टी के मफ़ाद के मुकाबले में वे अपना मफ़ाद नहीं मानतीं।"

"पार्टी को भी मानती थीं वे किसी दिन। लेकिन वह तो बहुत पहले की बात है। अब वे पार्टी पर फ़िदा नहीं हैं, पार्टी से ख़ौफ़ज़दा ही हैं।"

परमानन्द चकित होकर रोज़ा का मुँह देखने लगा। उसने पहले-पहल यह बात सुनी थी कि पार्टी की इतनी बड़ी लीडर पार्टी से भयभीत हैं। वह तो यही मानता आया था कि पार्टी के सिद्धान्त पर अचल विश्वास होने के कारण ही कम्यूनिस्ट अपना काम करते रहते हैं। रोज़ा किन्तु एक सर्वथा विपरीत बात कह रही थी।

तब रोज़ा बोली : "मम्मी ! मैंने कम्यूनिस्ट पार्टी को भीतर से देखा है। पार्टी के मशहूर-मशहूर लोगों को मैं जानती हूँ। मेरा तो यही तजुरबा है कि पार्टी में बहुत दिन तक वे ही लोग टिक पाते हैं जिनके भीतर सब कुछ मर जाता है। फिर वे लोग चाहे कितनी ही तरक्क़ी क्यों न कर लें। वह उनके दिल और दिमाग़ की तरक्क़ी नहीं हो सकती। सिर्फ़ उनकी लाश ही फूलती रहती है।"

परमानन्द की समझ में नहीं आया कि क्या कहे। वह तो कम्यूनिज़म और कम्यूनिस्ट पार्टी के बारे में जो कुछ जानता था वह सब उसने रोज़ा से ही सीखा था। इसके पूर्व यदि वह कम्यूनिज़म के किसी सिद्धान्त अथवा पार्टी की किसी नीति के प्रति संशय प्रकट कर देता था तो रोज़ा आवेश में आकर उसके ऊपर बूर्जुआ होने का आक्षेप करती थी। पार्टी की मार्जना करने के लिए घण्टों मगजपच्ची किया करती थी रोज़ा। और अब वही रोज़ा एकबारगी ऐसी बदल गई थी जैसे वह किसी दिन कम्यूनिस्ट ही न रही हो। परमानन्द की समझ में नहीं आ रहा था कि इस परिवर्तन का रहस्य क्या है।

रोज़ा कहने लगी : "जब कोई नौजवान पहले-पहले पार्टी की तरफ़

आता है तो उसके दिल में एक आइडियलिज़म होती है, और उसके दिमाग़ में दुनिया के लिए कुछ कर गुज़रने का जुनून। लेकिन पार्टी के अन्दरूनी हालात को कुछ दिन देख लेने के बाद उसका दिल बग़ावत करने लगता है, और दिमाग़ दिल को सँभाल नहीं पाता। फिर या तो वह अपने दिल और दिमाग़ का दिवाला निकालकर ही पार्टी का मेम्बर बना रह सकता है, या अपने दिल और दिमाग़ की सलामती के लिए पार्टी से निकल भागता है। इन दो नतीजों के सिवाय तीसरा नतीज़ा निकलता नहीं देखा।"

परमानन्द ने पूछा : "तो क्या ऐसे लोग बहुत हैं जो पार्टी में जाकर बाहर निकल आए ?"

"वाह ! आज दुनिया में पार्टी के मौजूदा मेम्बरों की निस्बत उन लोगों की तादाद कहीं ज्यादा है जो एक वक़्त पार्टी में दाखि़ल हुए थे और फिर पार्टी छोड़कर चले गए। मेरा मतलब, ग़ैर-कम्यूनिस्ट मुल्कों में।"

"फिर भी पार्टी की मैम्बरशिप तो बराबर बढ़ती ही जाती है। उस दिन तू ही बतला रही थी मैम्बरशिप की पुरानी और नई फीगर्ज़ ?"

"वो फीगर्ज़ भी दुरुस्त हैं।"

"लेकिन दोनों बातों का मीज़ान तो नहीं मिलता ?"

'मिलता क्यों नहीं ? बढ़ती हुई मैम्बरशिप की दो वजह हैं। दोनों एक साथ काम करती हैं। और दोनों का नतीजा एक ही निकलता है। एक वजह तो यह है कि ग़ैर-कम्यूनिस्ट मुल्कों की ज़िन्दगी किसी भी क़िस्म की आइडियलिज़म से ख़ाली होती जा रही है। वहाँ पर अपने खाने-पहनने और अपने-आपको आगे बढ़ाने के सिवाय इन्सान के लिए ज़िन्दगी का कोई दूसरा मक़्सद ही नहीं रह गया। बहुत से नौजवानों को इस ज़िन्दगी में कोई सार नहीं दिखाई देता। नौजवानों में तो क़ुदरतन एक आइडियलिज़म का माद्दा होता है। वे चाहते हैं कि ज़िन्दगी का कोई मिशन होना चाहिए। और आज की दुनिया में कम्यूनिस्ट पार्टी के सिवाय किसी के पास भी कोई मिशन मालूम नहीं होता। इसलिए वे लोग आसानी से कम्यूनिस्ट पार्टी की तरफ मायल हो जाते हैं।"

रोजा एक क्षण के लिए मौन हो गई। परमानन्द उसकी बात पर मनन कर रहा था। वह सहसा कुछ नहीं बोला।

तब रोज़ा ने ही कहा : "तू दूर क्यों जाता है, पम्मी! अपने तजुरबे को ही तोलकर देख ले। तेरे पास किस चीज़ की कमी थी? फिर तू क्यों कम्यूनिस्ट बना? तुझे किसी मिशन की तलाश थी, इसीलिए तो? तेरा दिल कहता था कि तुझे किसी अपने से बड़ी बात के लिए जिन्दगी बसर करना चाहिए। क्या मैं ग़लत कह रही हूँ?"

परमानन्द ने इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। वह गम्भीर होकर बोला : "दूसरी वजह क्या है? पहले तू दूसरी वजह बतला, रोज़ी!"

रोजा ने उत्तर दिया : "दूसरी वजह है हमारी तालीम। मेरा मतलब है मॉडर्न तालीम जो योरप से फैलकर आज सारी दुनिया पर छा गई है। उस तालीम में हमको जो कुछ सिखाया जाता है उससे कम्यूनिज़म के सिवाय और कुछ भी सिद्ध नहीं होता। हमारे दिमागों को कम्यूनिस्ट ढंग से सोचने की आदत पड़ जाती है, हमारे दिलों में कम्युनिस्ट ढंग के ही जज़्बात जगह पाते हैं। आजकल की किसी भी यूनिवर्सिटी में तालीम-याफ़्ता नौजवान कुदरतन कम्यूनिज़म की तरफ बह जाते हैं। दूसरी कोई राह ही उनके सामने नहीं रह जाती।"

"नहीं, रोज़ी! ऐसी बात तो नहीं है। दुनिया के ग़ैर-कम्यूनिस्ट मुल्कों की यूनिवर्सिटियाँ जो तालीम मोहिया करती है उसमें कम्यूनिज़म की मुख़ालफ़त ही होती है। फिर भी अगर इन यूनिवर्सिटियों के पढ़े-लिखे कुछ-लोग कम्यूनिस्ट बन जाते हैं तो कोई और ही वजह होनी चाहिए।"

"और क्या वजह हो सकती है?"

"मैं नहीं कह सकता। आज तक मैंने कभी इस सवाल के बारे में सोचा ही नहीं। सोचूँ तो शायद जवाब मिल जाए।"

"वह जवाब मैं जानती हूँ।"

"तो तू ही बतला दे।"

"साधारण बूर्जुआ जब किसी कम्युनिस्ट को देखता है तो वह फौरन

कह देता है—इस शख्स का दिमाग़ ख़राब हो गया। इसके सिवाय और इस सवाल की कोई तसल्लीबख्श तशरीह नहीं। यह दूसरी बात है कि बूर्जुआ को हर क़िस्म के पागल पर प्यार आता है।"

"बूर्जुआ के नुक़्तेनज़र से तो कम्युनिस्ट का दिमाग़ खराब ही होता है। इससे बढ़कर और तसल्लीबख्श तशरीह बूर्जुआ के लिए क्या हो सकती है ?"

"अगर वह कम्यूनिस्ट के बारे में ही यह बात कहता तो शायद यह तशरीह तसल्लीबख्श होती। लेकिन ऐसी बात तो नहीं है। बूर्जुआ तो और बहुत क़िस्म के लोगों के बारे में भी ऐसी ही बात कहता है। कोई मज़हबी आदमी मिल जाए तो वह भी पागल। आर्टिस्ट भी पागल। साइन्टिस्ट भी पागल। बड़ा काम करने वाले सब लोग पागल।"

"तू तो मज़ाक कर रही है, रोज़ी !"

"मज़ाक नहीं कर रही, पम्मी ! बिल्कुल पते की बात कह रही हूँ। तूने फ्रॉयड की थ्योरी नहीं पढ़ी। मैंने कुछ-कुछ पढ़ी है, और बहुत-कुछ सुनी है। फ्रॉयड कहता है कि इन्सानी तारीख़ के सारे पीर-पैग़म्बर, सारे सन्त-महात्मा, सारे फ़नकार, सारे हीरो, सारे महापुरुष किसी-न-किसी डिग्री में पागल थे। और जो जितना पागल था उसकी उतनी ही धूम मची।"

"फ्रॉयड मैंने नहीं पढ़ा। आज उसकी थ्योरी भी मैंने पहली बार सुनी है। लेकिन मैं तो जानता हूँ के वह गली-सड़ी बूर्जुआ तहज़ीब का एक दिमाग़ी नमूना है। उस शख्स के बारे में पार्टी की क्रीटिसिज़म ग़लत थोड़े ही है।"

"तू बात को दूसरी तरफ ले जा रहा है, पम्मी ! मैं फ्रॉयड की तारीफ़ तो नहीं कर रही थी। मैं तो उसको गन्दी नाली का कीड़ा मानती हूँ। गन्दी नाली के बाहर जो कुछ भी उसे दिखाई देता है वह सब उसके लिए पागल-पन है। लेकिन मैं जो बात कह रही थी वह कुछ और है। मैं तो तेरे सवाल का जवाब दे रही थी। फ्रॉयड को बूर्जुआ तहज़ीब का नमूना मानकर तू

गलती कर रहा है। फ्रॉयड सिर्फ़ नमूना नहीं है, वह तो नुमायन्दा है। फ्रॉयड के फ़िलसफ़े में बूर्जुआ तहज़ीब का इतर निकल कर हमारे सामने हाज़िर होता है।"

"और नाक सड़ जाती है!"

परमानन्द बीच में ही बोल पड़ा। रोज़ा कुछ और कहना चाहती थी। परमानन्द की बात सुनकर वह चुप हो गई। उसकी मुख भंगिमा अभूतपूर्व रूप से गम्भीर हो चली। परमानन्द समझा कि रोज़ा रुष्ट हो गई है। वह पश्चात्ताप के स्वर में बोला : "आम सॉरी, रोज़ी! मैं बीच में बोलना नहीं चाहता था। लेकिन मुझसे रहा नहीं गया। गुस्ताख़ी कर बैठा। मुझे माफ़ कर दे, रोज़ी!"

रोज़ा ने मुस्कराकर कहा : "तूने तो कोई गुस्ताख़ी नहीं की, पम्मी! तू ने तो बिल्कुल ठीक कहा। यह बात सही है कि बूर्जुआ तहज़ीब को कुरेदते ही किसी की भी नाक सड़ने लगेगी। लेकिन इस सड़ाँध का कारण क्या है? ऊपर से आँखें चौंधिया देने वाली यह तहज़ीब भीतर से इतनी पिलपिली और पज़मुर्दा क्यों है?"

"तू ही बतला। तेरी तशरीह सुनना चाहता हूँ। मेरी तशरीह तो तू जानती है। मैंने और तूने एक-साथ वह तशरीह सीखी थी। मार्क्स, लेनिन, स्टालिन और माओत्से-तुंग से।"

"लेकिन अबकी बार मुझे जो तशरीह मिली है उसने मार्क्स वगैरह को भी मात कर दिया। बात यह है कि बूर्जुआ नज़रिया हैवानियत के सिवाय और कुछ भी समझ ही नहीं सकता। खा लो, पी लो, पहन लो, सैक्स कर लो—यह तो हुई ज़िन्दगी। समाज की फ़िक्र करना, दीन-दुखियों के साथ हमदर्दी दिखलाना, किसी अपने से बड़े कॉज के लिए जद्दोजहद करना, सत्यं शिवं सुन्दरं की सेवा करना—यह पागल-पन है।"

परमानन्द मौन रहा। बात उसकी समझ में आ गई। उसने अपने समाज को आँखें खोलकर देखा था। अपने बूर्जुआ समाज को। और उस समाज के जीवन से उसको बड़ी ही विरक्ति हुई थी। जिसको देखो वही

अपने-आप में डूबा हुआ था। अपने सुख का प्रदर्शन, अपने दुःख का रोना, अपनी जीत की कहानी कहना, अपनी हार पर क़िस्मत को कोसना। जी घुटा करता परमानन्द का।

परमानन्द ने अपने समाज के बाहर भी देखा था। चारों ओर फैले हुए संसार को। उस संसार के सुख पर उसने सन्तोष का अनुभव किया, उसके दुख के प्रति उसके हृदय में संवेदना जागी थी। उस संसार के सारे दुख-दर्द को मिटाकर अखण्ड सुख की स्थापना करना चाहता था वह। कोई किसी अन्य को पाँव तले न कुचलने पाए, कोई किसी अन्य को कुवचन न कह सके, कोई किसी अन्य का अधिकार आत्मसात् करना न चाहे, किसी पुरुष का पुरुषार्थ असफल न हो, किसी स्त्री की आँखों में आँसू न झलकें, किसी बालक की निर्द्वन्द्व किल्लोल में बाधा न आए। परमानन्द का मानस ऐसे संसार के स्वप्न देखा करता था। प्रतिपल।

और इसीलिए वह अपने समाज में पागल कहलाता था। इतना बड़ा लड़का हो गया! कितने बड़े बाप का बेटा!! यह नहीं कि अपने कारखाने का काम-काज संभाल ले! यह नहीं कि किसी बड़े बाप की बेटी ब्याह लाए!! लाख-दो-लाख दहेज में देने वाले आते हैं। ऐसी लड़कियों का रिश्ता लेकर कि जिनके रूप के आगे रम्भा भी पानी भरे। लेकिन लड़का एक नहीं सुनता। उस मरी कम्यूनिस्ट छोकरी के पीछे डोलता है। क्या धरा है उस छोकरी में? न जात का पता, न पाँत का। जैसी उसकी माँ हर-जाई, वैसी ही वह भी हरजाई। माँ ने पाँच महीने का पेट करके ब्याह किया था। ग़ैर जात के मरद से। अब यह लड़की...

रोज़ा बोली : "पम्मी! बूर्जुआ तालीम हमको यही तो सिखलाती है कि यह दुनिया, यह ज़िन्दगी, और इसी ज़िन्दगी में मिलने वाले भोग ही सब कुछ हैं। जिस किसी में आइडियलिज़म होती है वह इस तालीम को पाकर चाहता है कि सिर्फ उसकी ही ज़िन्दगी में क्यों, सब लोगों की ज़िन्दगी में ये भोग मुयस्सर होने चाहिए। और वह एक-न-एक दिन सोशलिस्ट या कम्यू-निस्ट बनकर रहता है। बूर्जुआ नज़रिए की मुकम्मल तकमील दरअसल

कम्यूनिज़म ही है। उन सब लोगों के लिए जो अपने दिमाग़ पर जरा-सा भी ज़ोर डालते हैं, जिनका दिल ज़रा-सा भी वसीह है। और मैं तो उन्हीं लोगों की बात कह रही हूँ।"

परमान्द बोला : "तेरी बात मान लेता हूँ, रोजी ! ज्यादा से ज्यादा-तर लोग क्यों कम्यूनिस्ट पार्टी में आते हैं, इस बात की तशरीह तो तूने कर दी। फिलहाल तो कर ही दी....

"तो क्या तेरी तसल्ली नहीं हुई ?"

"सोचकर देखूंगा। शायद कोई शुबा रह जाए।"

"शुबे का अक्सर एक और भी नतीजा निकलता है, पम्मी ! आदमी जिस सिद्धान्त पर जितना ही ज्यादा शुबा करता है, उसी सिद्धान्त को वह और भी ज्यादा जोशो-ख़रोश से प्रीच करने लग जाता है। कहीं तेरे केस में वैसा न हो जाए।"

"जैसा तेरे केस मे हुआ था ? मैं तो समझता था कि कम्यूनिज़म पर तेरा मुकम्मल यक़ीन है। मुझे क्या मालूम था कि भीतर-ही-भीतर तू इस तरह सुलग रही है !"

"कम्यूनिस्ट पार्टी के भीतर रह लेने पर किसी भी जिन्दादिल और अहले-दिमाग़ इन्सान का कम्यूनिज़म पर मुकम्मल यक़ीन नहीं रह सकता। पार्टी के भीतर पैदा होने वाली आए दिन की ज़बरदस्तियाँ दिल को ठेस तो पहुँचाती ही हैं, दिमाग़ में जुम्बिश तो पैदा करती ही हैं।"

"तो जो लोग कम्यूनिस्ट पार्टी से बाहर निकल आते हैं वे पार्टी के बारे में सच बात क्यों नहीं बतला देते ? बाक़ी लोगों की आँखें तो खुलें।"

"उनमें से ज्यादातर लोग तो पार्टी के बाहर निकलते ही बुझ जाते हैं। जिन्दगी में एक बार ही इश्क़ किया था, और पहली ही महबूबा बेवफ़ा निकली ! बस इश्क़ की सारी बात ही झूठी है। अपना घर बसाओ, रुपया कमाओ, और ज़िन्दगी के मज़े ले लो। ऐसे लोगों को मैंने अपनी आँखों से देखा है। इसी दिल्ली शहर में न जाने कितने हैं ऐसे लोग। उनकी तर्ज़-ज़िन्दगी को देखकर कोई कह भी नहीं सकता कि एक दिन वे अपने सिवाय

कुछ और भी सोच चुके हैं। बूर्जुआ के दिल में एक बुलबुला उठा था। बुल-बुला फूट गया। किसी भी फूँक से। और बूर्जुआ फिर वापिस बूर्जुआ हो गया।"

"बाक़ी लोगों की बात भी बतलाओ।"

"बाक़ी लोगों में से बहुतों के सीने में पार्टी के ख़िलाफ़ एक कीना होता है। वे पार्टी के बारे में बकझक करके कीना निकालना चाहते हैं। फ़िज़ूल की बक-झक करके। बे सिर-पैर की बातें करके। लेकिन पार्टी के डर से वे चुप हो जाते हैं। कभी गुप-चुप कुछ कह-सुन लेते हैं। खुलकर कभी सामने नहीं आते।"

"पार्टी का क्या डर है ? कम्यूनिस्ट मुल्कों में तो पार्टी का डर शायद हो भी। ग़ैर-कम्यूनिस्ट मुल्कों में क्या डर है ?"

"असली डर तो ग़ैर-कम्यूनिस्ट मुल्कों में ही है। कम्यूनिस्ट मुल्क में तो पार्टी के ख़िलाफ़ जाने वाले को रात के बारह बजे गुम कर दिया जाता है। हमेशा के लिए। फिर किसी को यह भी याद नहीं रहता कि एक दिन किसी ऐसे शख़्स का वजूद भी था। एक ही बार पूरा टण्टा मिट जाता है। पार्टी की मुक्ति हो जाती है, और मुख़ालफ़त करने वाले की भी। लेकिन ग़ैर-कम्यूनिस्ट मुल्कों में तो मुक्ति इतनी आसान नहीं। यहाँ अगर कोई पार्टी के ख़िलाफ़ हाथ-पाँव मारे तो पार्टी को भी उसके ख़िलाफ़ हाथ-पाँव मारने पड़ते हैं। और पार्टी जब भी हाथ-पाँव मारती है, तभी सारे समाज में एक क़यामत आ जाती है।"

"क़यामत किसके लिए ?"

"पार्टी के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने वाले के लिए। एक लम्हे में यह मश-हूर हो जाता है कि फलाँ शख़्स ख़ुफ़िया पुलिस का कारिन्दा है, अमेरिका का एजेण्ट है, उसने पार्टी का रुपया मार लिया, उसने पार्टी में लुच्चापन किया। ज़िन्दगी भरके जानने वालों को यक़ीन होने लगता है कि उस शख़्स में कुछ गड़बड़ ज़रूर है। फिर वह अपनी बात कहे तो किससे कहे ? कोई सुनने वाला भी तो होना चाहिए ?"

यह बात परमानन्द को जँच गई। उसने कई-एक पुराने कम्यूनिस्टों की दुर्दशा अपनी आँखों से देखी थी। एक दिन उनका सब जगह मान-आदर होता था। वे कम्यूनिस्ट थे तब। और दूसरे दिन कोई उनको अपने पास भी नहीं बैठने देता था। कम्यूनिजम के विरुद्ध मुँह खोलकर दो बातें कह देने के कारण। अपने-आप को कम्यूनिस्टों का विरोधी मानने वाले लोग भी कहने लगते थे —'इस आदमी के साथ कुछ गड़बड़ ज़रूर है! इसका क्या विश्वास? पार्टी के साथ भी विश्वासघात करके आया है यह। यह तो हम भी जानते हैं कि कम्यूनिज़म खराब है। किन्तु इसने तो कम्यूनिज़म से प्रेम किया था! यह उस प्रेम को क्यों झुठला रहा है?"

रोज़ा बोली: "करुणा करामत अली को तो तुम जानते ही हो। इस औरत को कोई चुप नहीं कर सका। कांग्रेस से बाहर निकलकर इसने कांग्रेस को कोसा। सोशलिस्ट पार्टी से निकलकर सोशलिस्टों को बुरा-भला सुनाया। और इसके खिलाफ किसी को कुछ भी कहने की जुर्रत नहीं हुई। लेकिन कम्यूनिस्ट पार्टी ने इसको एकदम चुप कर दिया। क्या मजाल कि चूँ भी कर ले।"

परमानन्द ने पूछा: "लेकिन करुणा क्या कुछ कहना चाहती है? मत-लब, कम्यूनिस्ट पार्टी के खिलाफ़?"

"वाह! बहुत-कुछ कहना चाहती है। पार्टी के सब लोग जानते हैं कि दूसरे जनरल इलेक्शन हुए उसके पहले ही उसका पार्टी से इख़्तलाफ हो गया था। वह पार्टी से इस्तीफ़ा देकर एक पब्लिक स्टेटमेंट देना चाहती थी। पार्टी ने उसे समझाना चाहा। वह नहीं मानी। तब पार्टी ने उसको अपना असली रूप दिखा दिया। और उस बेचारी की बोलती बन्द हो गई। उस दिन के बाद आज मुँह खोलती है। ऐसी बन गई जैसे ग़रीब बकरी की जात।"

"क़िस्सा क्या हुआ?"

"पार्टी ने उसको बतलाया कि वह पार्टी के खिलाफ़ जाना चाहती है तो पार्टी उसको एक्सपैल करने के लिए तैयार है। लेकिन पार्टी को जनता

के सामने बतलाना पड़ेगा कि यह नौबत क्यों आई। और पार्टी का एकस्प्लैनेशन देखकर करुणा की फूँक निकल गई।"

"ऐसी क्या बात थी ?"

"पार्टी जनता को जतला देना चाहती थी कि ब्रिटिश पुलिस के पुराने एजेण्ट करामत अली की बीवी अमेरिकन पुलिस की एजेण्ट निकली। करामत अली ने कांग्रेस का रुपया ग़बन किया था, बीबी ने कम्युनिस्ट पार्टी के फण्ड्ज़ साफ कर दिए। ऐसे फण्ड्ज़ जो बेचारे किसान-मजदूरों ने अपना पेट काटकर पार्टी के काम के लिए दिए थे। करामत अली अय्याश था, बीवी उससे भी लुच्ची निकली। पार्टी के नए-नए छोकरों पर रोज़-रोज़ राल टपकाने लगी।"

"यह सब क्या सच है ? क्या करामत अली वाक़ई....

"सच-झूठ का तो सवाल ही नहीं उठता, पम्मी ! पब्लिक लाइफ में कौन ऐसा बशर है जिसके बारे में कुछ-कुछ नहीं कहा-सुना जाता ? और कौन ऐसा पारस पत्थर है जिसमें कोई ऐब ही नहीं हो ? लेकिन लोगों को पक्का यक़ीन होता है तभी जब कॉमरेड करंजिया का ब्लिट्ज़्, पार्टी का हुक्म पाकर, किसी का परदा फाश कर देता है। तब किसी को राई-रत्ती शुबा नहीं रह जाता।"

"ऐसी बात तो नहीं है, रोज़ी ! आखिर बात के कुछ तो सिर-पैर होने ही चाहिएँ ?"

"जिस बात के सिर-पैर हों उससे पार्टी को क्या मतलब ? और कॉमरेड करंजिया क्यों ऐसी बात अपने पेपर में कहने लगा ? कल को कोई मुख़ालिफ़ सुबूत मिल जाए तो ? पार्टी इतनी बेवकूफ नहीं है, पम्मी ! और न कॉमरेड करंजिया ही कच्ची गोलियाँ खेला है। वे लोग जब भी किसी पर हमला करते हैं तभी ऐसी बात कहते हैं जिसका उल्टा-सीधा कोई भी सुबूत न हो।"

"और लोग मान लेते हैं ?"

"मान लेते हैं ! मैंने हिन्दुओं को ब्लिट्ज़् पढ़ते देखा है। उनको वेद

की बात पर भी कभी ऐसा विश्वास नहीं हुआ। मुसलमानों को पढ़ते देखा है। कुरान शरीफ़ उसके सामने फीकी लगने लगती है। धरम-करम की बला से फारिग बूजु़आ लोगों की तो कौन कहे? वे तो हमेशा ही मानते रहते हैं कि सबकी जाती जिन्दगी में गिलाजत भरी है, बस किसी-किसी का भण्डा नहीं फूटता। इसलिए किसी का भी भण्डा फूटते देखकर बूर्जुआ बाग्-बाग् हो जाता है। सुबूत की बात सोचने की फ़ुरसत उसे कहाँ?"

"मैंने भी ब्लिट्ज् को बहुत बार पढ़ा है। ऐसी बात तो नहीं लगी।"

"यही तो मुश्किल है! तूने औरों के बारे में पढ़ा है ना। इसीलिए। कभी तेरे बारे में कुछ निकले तब कहियो। मैं ऐसे कई लोगों के केस जानती हूँ। एक अमेरिकन तो मुझे उसी दिन मिला था। ब्लिट्ज् का इतना बड़ा भक्त नहीं देखा। वह ब्लिट्ज पढ़कर ही सबके बारे में अपनी राय क़ायम-कर लेता था। ब्लिट्ज् जिन लोगों के ख़िलाफ़ लिखता था उनके लिए उस अमेरिकन की नफ़रत का किनारा नहीं रह जाता था। फिर एक दिन उसके ऊपर भी ब्लिट्ज् ने पूरी रौशनी डाल दी। और उसकी सूरत देखते ही बनती थी। वह कई दिन तक ब्लिट्ज् को कोसता रहा। लेकिन अपने घर में बैठा हुआ। बाहर निकलकर मुँह दिखलाने की हिम्मत उसे नहीं हुई...

परमानन्द ने सहसा अपनी घड़ी पर दृष्टिपात किया। फिर वह हड़-बड़ाकर बोला: "रोज़ी! जो बात मैं कहने आया था वह तो मैं भूल ही गया। तेरी बातें होती ही ऐसी दिलचस्प हैं कि सुनने वाला अपनी बात कहना भूल जाता है।"

रोज़ा ने परमान्द की ओर देखा। निर्निमेष नयनों से। मानो वह जानना चाहती हो कि परमानन्द मजाक तो नहीं कर रहा है। स्वयं वह बहुत गम्भीर हो गई थी। मजाक इस समय उसके लिए असह्य होता। किन्तु उसने देखा कि परमानन्द भी गम्भीर है।

तब रोज़ा ने परमानन्द से पूछा: "तो ले, मैं चुप हो गई। तू बता, क्या कहना चाहता है?"

परमानन्द ने उत्तर दिया: "सात बजे डैडी तेरे पास आएँगे। तुझसे

बातें करने। तू तैयार हो जा।"

"मुझसे वे क्या बातें करेंगे ?"

"उनके पास एक ऑफर है। अगर तू उनका कहना मानकर अपने घर लौट जाएगी तो वे हम दोनों की शादी मंजूर कर लेंगे।"

"और नहीं लौटूँ तो ?"

"वे भी नहीं मानेंगे। एक एम० पी० की लड़की से वे अपना लड़का ब्याहने के लिए तैयार हैं। लेकिन एक लावारिस लड़की से कभी नहीं।"

"लेकिन मैं अपने घर तो कभी भी नहीं लौटूँगी। दुनिया इधर से उधर हो जाए तो भी नहीं लौटूँगी।"

"तब तो डैडी भी नहीं मानेंगे।"

"न मानें।"

"तू क्या मेरे साथ शादी करना नहीं चाहती ?"

रोजा ने कोई उत्तर नहीं दिया। तब परमानन्द ने पूछा : "रोज़ी ! तू क्या मुझसे प्यार नहीं करती ?"

रोजा ने परमानन्द की आँखों से आँखें मिलाकर कहा : "तुझसे प्यार करती हूँ, इसीलिए तो तुझसे ब्याह करना नहीं चाहती। नहीं तो जरूर कर लेती।"

"धत् ! तू तो मुझको बना रही है। सच बता, बात क्या है ?"

"बात कुछ भी नहीं, पम्मी ! मेरी तेरी जान-पहिचान हुई तब मैं कम्यूनिस्ट थी, तू सिम्पैथाइजर। मैं कम्यूनिस्ट लीडर की लड़की थी, तू कैपीटलिस्ट बाप का बेटा। दोनों पलड़े बराबर थे। उस हालत में निभ जाती। लेकिन अब तो बैलेंस बिगड़ गया।"

"कैसे बिगड़ गया ?"

"तू अब भी पार्टी का सिम्पैथाइजर है। लेकिन मैं तो अब कम्यूनिज़म की कट्टर दुश्मन हूँ। तू अब भी कैपीटलिस्ट बाप का बेटा है। लेकिन मैं तो अब कम्यूनिस्ट लीडर की लड़की नहीं हूँ। अब तो मैं लावारिस हूँ।"

परमानन्द ने रोजा का हाथ अपने हाथ में ले लिया। फिर वह अपने

स्वर में संवेदना भरकर बोला : "मेरी बात का बुरा मान गई, रोज़ी ! लेकिन मैंने तुझे अपनी तरफ से तो लावारिस कहा नहीं था। मैं तो डैडी की ही बात कह रहा था। मेरे लिए तू...

"वह बात रहने दे, पम्मी !"

"तू जानती है कि मैं कहना क्या चाहता था ?"

"वही, कोई सड़ा-बुसा शेर। और तू क्या कहता ?"

"जब तक इन्सान के सीने में मुहब्बत बाक़ी है तब तक मुहब्बत की शान में कहा हुआ कोई भी शेर सड़ा-बुसा नहीं हो सकता, रोज़ी ! मुहब्बत तरो-ताज़ा होती है तो शेर भी तरो-ताज़ा हो जाते हैं।"

"तू तो शायरी के बारे में ही शायरी करने लगा !"

"मैं शायर तो नहीं हूँ, रोज़ी ! लेकिन शायर मौजूद न हो तो उसका डिफेंस तो किसी-न-किसी को करना ही चाहिए।"

"पहले तू जाकर अपना मुँह धो आ। वह फव्वारा चल रहा है ना। उसकी नाँद में पानी भरा है। उस पानी में अपनी शक्ल भी देख लीजो।"

"तू मेरी बात का जवाब नहीं देगी ?"

"तेरी बात का जवाब तू खुद दे। मैं तो अपनी बात का जवाब जानती हूँ। मैं कभी भी लौटकर किसी कम्युनिस्ट माँ-बाप के घर में नहीं जाऊँगी। उस घर को देखकर मुझे मौत का अहसास होता है। लेकिन मैं अभी भी ज़िन्दा हूँ। मेरा दिल ज़िन्दा है। मेरा दिमाग़ ज़िन्दा है। लाशों के पड़ौस में रहने के लिए मैं तैयार नहीं।"

परमानन्द कुछ चिन्तित-सा हो गया। एक क्षण के लिए। दूसरे क्षण वह बोला : "इसका मतलब तो यह हुआ कि मैं भी अपने घर से बाहर निकल आऊँ ?"

रोज़ा ने हँसकर उत्तर दिया : "मैं नहीं कहती कुछ भी। तू अपना फैसला अपने-आप कर ले।"

"फैसला तो मैं एक सैकण्ड में कर सकता हूँ। मुझे भी अपने घर से कोई उन्स नहीं है। लेकिन सवाल तो यह है कि गुज़ारा किस तरह होगा ?

मैं तो कोई नौकरी करने लायक भी नहीं। कुछ भी नहीं सीखा मैंने। और तेरी ग़रीबी मुझसे देखी नहीं जाएगी।"

रोज़ा ने कोई जवाब नहीं दिया। तब परमानन्द फिर बोला : "बोल ना, रोज़ी ! तेरे साथ मैं इतनी दूर चला आया। आँखें मूँदकर। अब क्या तू मेरा हाथ छोड़कर चली जाएगी। बोल ना, बेरहम !"

रोज़ा ने परमानन्द के सिर पर हाथ रखकर उसे पुचकारा। फिर वह अपनी हँसी को रोकती हुई बोली : "ओह ! बड़ा ज़ुल्म हो गया बेचारे के साथ ! मैंने इसका हाथ पकड़कर कूएँ के किनारे पर ला खड़ा किया ! और अब इससे कूएँ में कूदा नहीं जाता ! !"

परमानन्द उसका हाथ हटाता हुआ बोला : "तेरे इशारा करने की देर है। कूएँ में तो मैं इसी दम कूद जाऊँ। लेकिन तू कुछ कहे भी तो ! तू तो बड़ी बेवफ़ा निकली ! !"

"पक्की बात है ?"

"एकदम पक्की। सैंट-परसैंट सरटेन ! !"

"तो तू भी लौटकर अपने घर मत जा। चल तू मेरे साथ चल। मेरे कमरे में। आज से तेरा बासा भी वहीं हो गया।"

"डैडी को कोई जवाब नहीं दूँ ?"

"डैडी को जवाब की ज़रूरत होगी तो वे ख़ुद तेरी तलाश कर लेंगे। वे तो आ ही रहे हैं हमारे पास। उसी वक़्त उनको जवाब दे दीजो। तब तक चल, ज़रा कमलानगर के कॉफ़ी हाउस में एक-एक प्याला कॉफ़ी पी लेते हैं।"

रास्ता चलते-चलते रोज़ा ने पूछा : "लेकिन, पम्मी ! एक बात तो बता। तेरे डैडी और ममी के बीच तो कई दिन से खटपट चल रही थी। तुम लोगों के कारख़ाने में होने वाली हड़ताल को लेकर। फिर अचानक यह मेल कैसे हो गया ?"

परमानन्द ने उत्तर दिया : "उस ड्रामा पर ड्रापसीन हुए तो कई दिन हो चुके, रोज़ी ! हड़ताल नहीं होगी। मामला आरबिट्रशन में दे दिया जाना

तय हुआ है।"

"मज़दूरों को तो इस बात की कोई खबर नहीं। आज सुबह ही तो मैं बस्ती में गई थी। पिताजी के दर्शन करने।"

"मज़दूरों को भी मालूम हो जाएगा। अभी तो सब-कुछ गुपचुप चल रहा है।"

"लेकिन यह सब हुआ कैसे ?"

"सुना है अमेरिकन एम्बैसी के लेबर-अटैचे ने बीच में पड़कर समझौता करवा दिया।"

"और तुम क्या अब भी यह कहते रहोगे कि अमेरिका वाले कम्यूनिज़म की मुखालफ़त करते हैं।"

रोजा हँसने लगी। परमानन्द ने कुछ नहीं कहा। वह सिर झुका-कर रोजा के साथ-साथ चलता रहा।

: २ :

मिस्टर गुप्ता टेलीफोन पर बात कर रहे थे। उनकी मुखमुद्रा मलिन थी। मानो उनका मन अत्यन्त उद्विग्न हो। वे बोले : "हाँ, हाँ, मिस्टर चाइल्ड ! आपने मेरी मिल के लिए जो कुछ किया उसके लिए मैं आपका बहुत-बहुत शुक्र गुजार हूँ...नहीं, नहीं, यह बात कैसे हो सकती है। कमला को भला आपके बिना कौन सीधे रास्ते पर...डिनर के लिए शुक्रिया, लेकिन मैं आ नहीं सकूँगा...क्या बतलाऊँ...एक और मुसीबत सिर पर आ खड़ी हुई...इस दफा शायद आप भी मेरी मदद नहीं कर सकते...मज़-दूर-बस्ती में कई दिन से एक मुस्टण्डा पड़ा है ना...हाँ, वही...अब वह जनसंघ की यूनियन को उकसा रहा है...नहीं, नहीं, मज़दूरी के मुतल्लक़ कोई माँग नहीं...यही तो मुश्किल है...हाँ, वही वेवकूफी का किस्सा है... कुछ भी हो, मन्दर तो मैं नहीं बनने दूँगा...अच्छा, आप भी जानते हैं ?... अभी, अभी फैसला करना पड़ेगा। आध घण्टे बाद उन कम्बख्तों का डैपूटेशन आने वाला है...अच्छा, बात करके आपको आगाह करूँगा... सो लाँग...सी यू लेटर !"

टेलीफोन रखकर मिस्टर गुप्ता ने एक लम्बी साँस ली। उनको वैसे भी जम्हाइयाँ आ रही थीं। मिल की चिन्ता के कारण वे कई रात नहीं सो पाए थे। नींद ही नहीं आई थी उनको। करवटें बदल-बदलकर रातें काटी थीं उन्होंने। रह-रहकर उनके मुख से निकल जाता था—हाय! अब क्या होगा!!

फिर वह मामला मिट गया। किन्तु एक और मामला आ खड़ा हुआ। परमानन्द की ओर से उनको कभी ऐसी आशंका नहीं थी।

लड़का कुछ-कुछ पागल तो था। सदा का ही पागल था। बचपन से ही। किन्तु यह उन्होंने कभी नहीं सोचा था कि वह इतना पागल निकलेगा! उस लावारिस लौण्डिया के लिए घर छोड़कर भाग गया! इतने बड़े बाप का घर!! क्या कमी थी उसको? लौण्डिया की जरूरत थी तो वे लाख लौण्डियाएँ जुटा देते। दिल्ली के बड़े-से-बड़े घरों में परमानन्द की चर्चा चलती थी। वह जिसकी लौण्डिया पर उँगली टेक देता उसी को ला देते वे। किन्तु लावारिस लौण्डिया को वे अपने घर की बहू नहीं बना सकते। आखिर उनकी इज्जत का भी तो सवाल था।

दिल लड़ गया था उस लावारिस लौण्डिया से? तो चलो, कोई बात नहीं। वो भी तो बला की खूबसूरत थी। जवान लड़का उस पर जी-जान से लट्टू हो जाए तो कोई अचरज की बात नहीं। वे खुद भी तो जवान रह चुके थे किसी दिन! वे सब समझते थे जवानी के जवार भाटे! कभी-कभी किसी पर तबीयत आ ही जाती है। तो भइ, दो दिन तबीयत बहला लेता। थोड़ा-बहुत रुपया खरच हो जाता। चलो, रुपये की तो कोई बात नहीं। रुपया तो हाथ का मैल था। लेकिन जहाँ रुपये से काम निकल सकता था वहाँ इज्जत-आबरू लुटाने से क्या फायदा?

उन्होंने तो पूछा भी था उस लावारिस लौण्डिया से। बोल, कितना रुपया लेगी? पम्मी की रखैल बनकर रहने के लिए। वे अलग से एक कोठी किराए पर ले देने के लिए भी तैयार थे। लेकिन लौण्डिया की तो आँखें ही जलने लगीं! वाह, भइ वाह! सत्तर घाट का पानी पीकर सीता-

सावतरी बनती है साली ! और उस लौण्डे से भी यह नहीं हुआ कि उस लौण्डिया को समझा ले ! वह तो उल्टा अपने बाप से ही बहस करने के लिए तैयार हो गया ! जहन्नुम में जाए ! दो दिन और दुनिया देखकर अपने-आप उसके दीदे खुल जाएँगे । तब तक......

मिस मलहोत्रा ने कमरे में आकर उनका ध्यान भंग कर दिया। वह अपना स्वर लचकाकर बोली : "सर ! एक्सक्यूज मी...

मिस्टर गुप्ता ने चौंककर पूछा : "यस, मिस मलहोत्रा !"

"सर ! बाहर एक लड़का आया है । आप से मिलना चाहता है।"

"कौन है ?"

"मुझ को वह कुछ नहीं बतलाना चाहता। कहता है के आपसे ही बातें करेगा । कोई प्राइवेट बात है, सर !"

मिस्टर गुप्ता को तैश आ गया । वे आवाज ऊँची करके बोले : "उससे कह दो, जहन्नुम में जाए !"

इसी समय अटल ने कमरे का द्वार खोलकर भीतर प्रवेश किया । फिर वह सलाम ठोककर बोला : "गुप्ताजी ! जहन्नुम में क्या जाऊँगा ? जहन्नुम में तो मैं रहता ही हूँ।"

मिस्टर गुप्ता और भी बिगड़ गए। वे अटल को फटकारकर बोले : "कौन है बे तू ! और बिना इजाजत भीतर कैसे घुस आया ?"

फिर उन्होंने मिस मलहोत्रा से पूछा : "दरवाजे का दरबान क्या मर गया ? मिस मलहोत्रा !"

उत्तर दिया अटल ने : "दरबान तो आँखें मूँदकर हरिनाम जप रहा था । मैं बराबर से खिसक आया । ये देखिए, मेरे जूते में क्रेप-सोल लगा है।"

साथ ही अटल ने एक पाँव ऊपर उठाकर अपने जूते का सोल मिस्टर गुप्ता को दिखला दिया।

मिस्टर गुप्ता भभक उठे : "चोर कहीं का ! ऊपर से...

अटल बीच में ही बोल पड़ा : "आपको एक बड़े चोर से बचाने के लिए ही मैंने ये छोटी-सी चोरी की है। लेकिन आप को शायद कोई दिल-

चस्पी नहीं। तो फिर मेरी बला से! आप खुद ही उस मुस्टण्डे से सुलझ लें।"

अटल बाहर जाने लगा। किन्तु मुस्टण्डे का नाम सुनते ही मिस्टर गुप्ता का गुस्सा टण्डा हो गया था। वे कुरसी से उठकर बोले: "अरे! आप ठहरिए तो! अब आप आ ही गए तो...

अटल मुड़ पड़ा। मिस्टर गुप्ता मिस मलहोत्रा से बोले: "यू मे गो नाऊ!"

मिस मलहोत्रा चली गई। और अटल बड़े तपाक से कुरसी पर आ बैठा। तब मिस्टर गुप्ता ने मीठे स्वर में उससे पूछा: "हाँ! आप क्या फ़रमा रहे थे?"

अटल ने उत्तर दिया: "जी, मेरा नाम अटल है। अटल परसाद पांडे। उम्र में आप से बहुत छोटा हूँ। आप तकल्लुफ मत करें।"

"बहुत अच्छे! तो, बेटा! बता क्या बात है?"

"बात तो मैं आप को पूरी-की-पूरी बतला दूंगा। लेकिन पहले कुछ...

अटल चुप हो गया। मानो वह अपनी बात कहते हुए शरमा रहा हो। उसने गर्दन नीची कर ली।

मिस्टर गुप्ता ने कहा: "हाँ, हाँ, कह ना, क्या बात है?"

अटल ने अपना सिर ऊपर उठाया। फिर वह बड़े लोचदार लहजे में बोला: "जी! गुप्ताजी! बात ये है के पहले कुछ मोलभाव हो जाए तो...

"मोलभाव!! किस बात का मोलभाव?"

"जी! मेरे पास बहुत पते की बात है। मुस्टण्डे की पिछली जिन्दगी का खुलासा। और...

अटल फिर अटक गया। गुप्ताजी ने अधीर होकर पूछा: "और क्या?"

अटल आगे की ओर झुककर फुसफुसाया: "कमलाजी की पिछली जिन्दगी का खुलासा भी।"

"उससे मुझे क्या मतलब?"

"जी ! मैंने सोचा के कमलाजी रोज-रोज आप का हुलिया तंग किए रहती हैं। आप शायद हमेशा के लिए उनका मुँह बन्द करना चाहें ?"

गुप्ताजी विचार-मग्न हो गए। बात तो सच थी। कमला जब चाहती थी तभी उनके सिर पर सवार हो जाती थी। और उनके पास उसका कोई प्रतिकार नहीं था। प्रत्येक बार पराजय उन्हीं की होती थी। केवल अबकी बार ही उस अमेरिकन की कृपा से...

अटल बोला : "गुप्ताजी ! अमेरिकन एम्बैसी वाले खरीदना चाहते थे यह खबर। दो हज़ार डॉलर दे रहे थे। लेकिन मैंने ना कर दी। आखिर वे लोग दूसरे मुल्क के सिटिज़न हैं। और आप...आप तो देसभगत आदमी ठहरे।"

दो हजार डॉलर का नाम सुनकर मिस्टर गुप्ता का मुँह लटक गया। नहीं, भइ ! यह तो बहुत मँहगा सौदा मालूम होता था ! दो हज़ार डॉलर ! अर्थात् दस हज़ार रुपये ! ! ! दस हज़ार ! ! ! इतने में तो वे दस मुस्टण्डों का मुँह बंद कर सकते थे। इतने में तो वे दस बार सारी कम्यूनिस्ट पार्टी को खरीद सकते थे।

और दस हज़ार तो इसको अमेरिकन लोग दे रहे थे। इसने उनकी ऑफर मंजूर नहीं की। इसका मतलब है कि यह और भी ज्यादा रुपये चाहता है। और ये तो सब कहने की बातें हैं ! यही, देसभगती की बातें ! रुपये के लिए ही तो देसभगती की जाती है ना ! रुपये को छोड़कर कौन साला देसभगती के चक्कर में पड़ेगा ? और...

अटल ताड़ गया कि मिस्टर गुप्ता के मानस में क्या उथल-पुथल मची हुई है। वह बोला : "देखिए, गुप्ताजी ! आपके सामने मैं लम्बा-चौड़ा मुँह नहीं बाऊँगा। सिर्फ पाँच-सौ रुपये का सवाल है। आप पाँच-सौ दे दीजिए। मैं आप को पूरी बात बतला दूँगा। अभी, इसी वक़्त। एक्रॉस दिस वैरी टेबल !"

अटल ने मेज पर हाथ दे मारा। मिस्टर गुप्ता की जान में जान आ गई। कहाँ तो दस हजार, और कहाँ पाँच-सौ ! एकदम पिचानवे परसेण्ट

का कट। और पाँच-सौ भी कहने के थे। खींचतान कर रहा था छोकरा। दस-पाँच रुपए में मान जाएगा।

मिस्टर गुप्ता बोले : "बेटा ! बात ये है के जब तक कुछ मालूम नहीं हो जाए तब तक मैं कुछ तै नहीं कर सकता। मैं हूँ कारखानेदार। रोज ही लाखों की ले-बेच करता हूँ। लेकिन माल परखे बिना मैं कभी बोली नहीं बोलता।"

अटल ने कहा : "तो बानगी दिए देता हूँ। सुनिए, ये मुस्टण्डा हिन्दु-साधू नहीं है, छुपा हुआ मुसलमान है। किसी ज़माने में ये कम्यूनिस्ट पार्टी का एक नामजद कारकुन था, और कमलाजी···

अटल कहते-कहते रुक गया। मिस्टर गुप्ता तो अपनी कुरसी में उठकर खड़े हो गए थे। अटल को चुप होते देखकर वे मचल पड़े : "कमला क्या ? कमला के बारे में तू क्या कह रहा था ?"

अटल फिर फुसफुसाया : "कमलाजी कई बरस तक इसकी माशूक़ा थीं। और कमलाजी की लड़की है ना ? वही, जिसका नाम रोज़ा है ! वो लड़की दर-असल इस मुस्टण्डे की ही औलाद है।"

मिस्टर गुप्ता की आँखों के सम्मुख सहसा एक प्रकाश-सा फैल गया। अब समझ में आया ! उन्होंने बहुत बार सोचा था—कमला तो काली-सी है ! उसका शौहर वह शर्मा भी कोई खास खूबसूरत आदमी नहीं। फिर इनके घर में यह ईद का चाँद कैसे पैदा हो गया ? उस लौण्डिया को उन्होंने देखा था। आँखें भरकर। वह तो उनका लड़का उसके पीछे पड़ा हुआ था, वरना जी तो उनका भी चाहता था...खैर, जाने दो वह बात। काम की बात यह है कि उस लौण्डिया का रंग-रूप उस मुस्टण्डे से बहुत मिलता-जुलता है।

मिस्टर गुप्ता ने झपटकर अपनी मेज़ का दराज़ खोला और चैक-बुक निकालकर सामने रखते हुए वे अटल से बोले : "बोल, बेटा ! कित्ते रुपये का काटूँ ?"

अटल ने कहा : "जी, गुप्ताजी ! बात ये है के ये चैक-वैक मेरे बस का

नहीं। मैं ठहरा चलता-फिरता आदमी। और बैंक वाले, आप जानते हैं...

"बेअरर चैक दिए देता हूँ। पाँच मिनट भी नहीं लगेंगे भुनाने में।"

"नहीं, गुप्ताजी ! मैं तो सब सौदे नक़द करता हूँ। रुपया धर दीजिए और बात सुन लीजिए। बस ! सौदा पटम-पट !!

गुप्ताजी ने दराज़ खोलकर चैक-बुक वापिस रख दी। फिर वे सौ-सौ रुपये के दो नोट निकालकर अटल की ओर बढ़ाते हुए बोले : "तो ये ले ! तू भी क्या कहेगा के मिला था कोई रईस !"

अटल ने नोट लेने के लिए हाथ नहीं बढ़ाया। वह मिस्टर गुप्ता की ओर देखता रहा। मुख पर ऐसा भाव धारण करके जैसे वह थक गया हो।

मिस्टर गुप्ता ने पूछा : "क्यों ? क्या बात है ?"

अटल ने उत्तर दिया : "जी ! पाँच सौ रुपये की बात हुई थी।"

"वो तो तू ने ही कहा था। मैंने हाँ तो नहीं भरी थी ?"

"तो जाने दीजिए। मैं समझ लेता हूँ के माल आप को पसन्द नहीं आया।"

अटल उठने लगा। मिस्टर गुप्ता भी उठकर बोले : "नहीं, नहीं, वो बात नहीं है बेटा। बात ये है के इस वक़्त मेरे पास इतना कैश नहीं है। तू तो जानता है के हमारा सारा काम चैक से ही चलता है।"

अटल ने कहा : "तो जाने दीजिए। फिर जब आप के पास कैश हो तब देख लीजिएगा। मैं तो यहीं रहता हूँ। मुझे फिर बुला लीजिएगा। तब तक अगर किसी और के साथ....

"यह कैसे हो सकता है ? और किसी से तू यह सब भूलकर भी मत कहियो।"

"जी, मुझे रुपए की सख़्त ज़रूरत है। आप नहीं देंगे तो आपका भाई कोई और...शायद अमेरिकन एम्बैसी ही...

मिस्टर गुप्ता ने दराज़ खोलकर तीन नोट और बाहर कर दिए। फिर पाँचों नोटों को अटल के आगे पटकते हुए वे बोले : "हैव योर पाउन्ड ऑफ फ्लैश, माइ बॉय ! मैं समझ लूँगा, मेरी मिल की दस लूम एक दिन

नहीं चलीं।"

अटल ने नोटों को उलट-पलटकर अच्छी तरह देखा। फिर दो-तीन बार उनको गिनकर उसने अपनी नेहरू-कट की भीतर वाली जेब में रख लिया।

और तदनन्तर अटल ने पूरी बात मिस्टर गुप्ता को बतला दी। अटल उठकर जाने लगा तो गुप्ताजी बोले : "देख, बेटा अटल! ये सब किस्सा तू किसी और को मत सुनाइयो। अमेरिकन लोगों को तो बिल्कुल नहीं।"

अटल ने उत्तर दिया : "जी! आप तसल्ली रखिए, गुप्ताजी! मुल्क में जब तक आप जैसे देसभगत मौजूद हैं तब मैं किस साले अमरीकी का मोहताज हूँ। अच्छा, अलविदा!"

अटल अपनी जेब को सँभालता हुआ बाहर निकल गया।

मिस्टर गुप्ता अपनी मूँछों पर ताव देने लगे। उनके मुख पर मूँछें नहीं थीं। उनका नाई नित्यप्रति ही बहुत घोटघाट कर उनको कर्जन-फैशन में फिट करता रहता था। फिर भी मिस्टर गुप्ता आज कल्पना की सहायता से अपने पुरुषत्व पर गर्व करने लगे। वे एक ही पत्थर से दो-दो पंछी मारने वाले थे। उस मुस्टण्डे को और कम्यूनिस्ट पार्टी की उस हरजाई को। इतना बड़ा पराक्रम उन्होंने अपने जीवन में पहले कभी नहीं किया था।

इस प्रकार प्रायः दस मिनट बीते होंगे। मिस मलहोत्रा ने फिर भीतर आकर कहा : "सर! वे लोग आ गए।"

मिस्टर गुप्ता ने गर्व से पूछा : "कौन लोग?"

"भारती मजदूर संग का डैपूटेशन, सर!"

"आई सी! आने दो!"

मिस मलहोत्रा बाहर चली गई। दूसरे क्षण चपरासी आकर मिस्टर गुप्ता की मेज के सामने कुर्सियाँ लगाने लगा। मिस्टर गुप्ता ने पूछा : "क्या कर रहा है, धनीराम!"

धनीराम ने उत्तर दिया : "वे लोग आए हैं ना, मालिक! बिटिया

बोली, धनीराम पाँच कुर्सियाँ लगा दो !"

मिस्टर गुप्ता ने हाथ हिलाकर कहा : "तू जाकर अपना काम कर ! यहाँ किसी साले के लिए कुर्सी-वुर्सी की जरूरत नहीं है ! !"

धनीराम लौटने लगा। तब मिस्टर गुप्ता ने अपनी मेज के सामने पड़ी एकमात्र कुर्सी की ओर संकेत करके कहा : "यह भी उठा ले जा ! इसे भी वहाँ रख दे दीवार के सहारे।"

धनीराम ने वह कुर्सी भी उठाकर रख दी और फिर वह बाहर चला गया। दूसरे क्षण मिस मलहोत्रा लौट आई। वह असमञ्जस के स्वर में बोली : "तो सर ! आप उन लोगों से नहीं मिलेंगे ?"

मिस्टर गुप्ता ने कहा : "मिलूँगा क्यों नहीं ? उन कम्बख्तों के लिए ही तो तैयार होकर बैठा हूँ।"

"लेकिन, सर ! आपने कुर्सियाँ तो...

"क्यूँ ? वे लोग क्या मेरे मेहमान हैं ? मिल के मजदूर ही तो हैं। मालिक के सामने उनको खड़े रहने की आदत होनी चाहिए !"

"लेकिन, सर ! उनके साथ एक साधू बाबा भी तो आए हैं ?"

"मैं जानता हूँ। पर उससे क्या हुआ ? मुस्टण्डे से मुलाक़ात करने के लिए क्या मैं अपना दस्तूर बदल दूँ ?"

"लेकिन, सर ! ...

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं होता। तुम तो अंग्रेजी बाल कटवाकर भी नेटिव ही रह गईं। वही पुराने जमाने की हिन्दू। इससे अच्छा तो...

मिस मलहोत्रा ने मिस्टर गुप्ता का शेष वाक्यांश नहीं सुना। वह चुप-चाप बाहर चली गई।

दूसरे क्षण पाँच व्यक्ति कमरे में प्रविष्ट हुए। सब के आगे साधु बाबा थे। उनके पीछे-पीछे पूरन, मनसाराम, धनपत और मौजीराम। चारों मजदूरों ने एक बार इतस्ततः दृष्टिपात किया। वे लोग साधु बाबा के लिए कुर्सी खोज रहे थे। स्वयं वे लोग खड़े रहने के लिए प्रस्तुत थे।

किन्तु मिस्टर गुप्ता ने उनको समय नहीं दिया। वे दृप्त कण्ठ से बोले :

"जल्दी-जल्दी कह डालो, तुम लोग क्या कहना चाहते हो। मेरे पास ज्यादा वक्त नहीं है। मुझे पाँच मिनट बाद बाहर जाना है।"

आगन्तुक लोग सन्नाटे में आ गए। साधु बाबा के अतिरिक्त अन्य सब लोग। मिस्टर गुप्ता का व्यवहार बहुत ही विचित्र था। उन लोगों ने तो अपनी ओर से साक्षात्कार करने की याचना की नहीं थी। उन्होंने तो केवल अपनी माँगें ही मालिक के पास भेजी थीं। और मालिक ने स्वयं ही मैनेजर के माध्यम से उन लोगों को कहलवाया था कि वे लोग एक प्रतिनिधि-मण्डल बनाकर उनसे मिलें। तो क्या...

मिस्टर गुप्ता गुर्राए : "मेरा टाइम क्यों वेस्ट कर रहे हो? कुछ बोलते क्यों नहीं? बेवकूफ कहीं के!!"

पूरन को क्रोध आने लगा था। वह कुछ कह बैठता उसके पूर्व ही साधु बाबा शान्त स्वर में बोले : "गुप्ताजी! आपके पास इस समय अवकाश नहीं है तो हम लोग किसी अन्य समय आ जाएँगे।"

मिस्टर गुप्ता का पारा एकदम सौ डिग्री पर चढ़ गया। वे मेज़ पर हाथ पटककर चिल्ला उठे : "तुझसे कौन बात करता है बे? तुझको यहाँ बुलाया ही किसने है? तू तो मेरी मिल का मज़दूर नहीं है।"

साधू बाबा फिर भी शान्त रहे। वे हँसकर बोले : "मैं मज़दूर तो नहीं हूँ, गुप्ताजी! किन्तु मज़दूर लोग मुझे मानते हैं।"

"तभी तक, जब तक के तेरी कलई नहीं खुल जाती। अबे जा! तेरे जैसी जने कितनी कुल्फियाँ देखी हैं!"

पूरन से नहीं रहा गया। वह प्रखर स्वर में बोल उठा : "मालिक! भगवान् के लिए आप साधु बाबा का अपमान मत कीजिए। यह हम लोग सहन नहीं कर सकते।"

मिस्टर गुप्ता ने कहा : "कौन-से साधू बाबा का? कोई सच्चे साधू बाबा हों तो ले आओ। मैं अभी उनके पाँव धोकर चरनामिरत ले लूँगा। लेकिन इस लुंगाड़े को तू क्यूँ साधू बाबा कहता है?"

पूरन को क्रोध आ गया। वह कड़ककर बोला : "मालिक!!"

मिस्टर गुप्ता हँसने लगे। फिर उन्होंने पूरन से कहा : "मेरी बात का बिश्वास नहीं होता ? अच्छा, तो जरा इस बुरदाफ़रोश से ही पूछकर देख ले के ये कौन है ?"

दूसरे क्षण उन्होंने साधु बाबा को धमकाकर पूछा : "बोल बे, तेरा असली नाम हबीब सिदीक़ी है या नहीं ?"

साधु बाबा ने शान्त स्वर में उत्तर दिया : "हाँ, आज से दस वर्ष पूर्व तक मेरा यही नाम था।"

पूरन इत्यादि के सिर पर मानो वज्रपात हुआ हो। वे नेत्र विस्फारित करके साधु बाबा की ओर देखने लगे। एकमात्र धनपत पर ही मिस्टर गुप्ता के प्रश्न का अथवा साधु की स्वीकारोक्ति का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा।

मिस्टर गुप्ता ने साधु बाबा से दूसरा प्रश्न पूछा : "और तू कानपुर में कम्यूनिस्ट पार्टी का नामजाद कारकुन था या नहीं ?"

साधु बाबा ने उसी शान्त स्वर में उत्तर दिया : "सन् १६४८ के नवम्बर मास तक मैं कानपुर में कम्यूनिस्ट पार्टी का एक प्रमुख सदस्य था।"

"और तूने एक कुँवारी हिन्दु-लड़की के साथ जिनाकारी की थी या नहीं ?"

"मैंने पार्टी में काम करने वाली और सर्वथा वयस्क तथा आत्म-निर्भर एक लड़की से प्रेम किया था।"

"वह लड़की हिन्दू थी या मुसलमान ?"

"जन्म से वह हिन्दू थी।"

"तूने उसके पेट में बच्चा पैदा नहीं किया ?"

"हाँ, वह गर्भवती हो गई थी।"

"शादी के पहले।"

"हम दोनों विवाह करना चाहते थे।"

"तो ब्याह किया क्यों नहीं ?"

"उस सब समाचार से आपका प्रयोजन नहीं गुप्ताजी ! आपका काम तो इतनी बात से ही चल जाएगा।"

साधु ने मुड़कर अपने सत्संगियों की ओर देखा। धनपत के अतिरिक्त सबको मानो काठ मार गया था। उनमें से किसी ने भी आँखें उठाकर ऊपर नहीं देखा।

तब धनपत ने मिस्टर गुप्ता से पूछा : "मालिक ! इन सब बातों से क्या मतलब है आपको ? हम लोग तो एक दूसरा सवाल लेकर आपके पास आए हैं।"

मिस्टर गुप्ता ने धनपत को धमकाते हुए कहा : "मुझको मतलब कैसे नहीं ? मैं क्या हिन्दू नहीं हूँ ? मैं क्या हिन्दू-सोसाइटी का सुभचिन्तक नहीं हूँ ? तो फिर मेरी मिल के हिन्दू भाइयों को एक बदचलन मुसलमान वहकाए—यह मैं कभी बर्दाश्त नहीं कर सकता। अपनी मिल के मजदूर मेरे लिए मेरी अपनी संतान के समान हैं।"

धनपत कुछ और कहना चाहता था कि पूरन उसको रोककर बोला : "धनपत रहने दो। विवाद करने से कोई फायदा नहीं। भूल हमारी है। हमें ही सोच-समझकर पाँव उठाना चाहिए था। चलो, अब यहाँ से चलो।"

पूरन और उसके साथी मुड़ पड़े। मिस्टर गुप्ता ने उनको रोककर कहा : "देख, पूरन ! तुम लोगों को अगर किसी किस्म की कोई तकलीफ हो तो तुम फौरन मुझसे कहना। भला ?"

पूरन ने दबी आवाज में उत्तर दिया : "जी, मालिक !"

वे चारों जने चले गए। साधु बाबा अभी भी धनपत के साथ कमरे में खड़े थे। मिस्टर गुप्ता ने धनपत से पूछा : "तू कौन-से डिपार्टमैंट में काम करता है बे ?"

धनपत ने उत्तर दिया : "जी, कैलेण्डरिंग में।"

"तेरा नाम ?"

"धनपत।"

"कितने साल की नौकरी है ?"

"आपका कारखाना खुला तब से यहीं पर हूँ, मालिक !"

"इतना पुराना आदमी होकर भी तू बेअदबी से बाज नहीं आया ?"

"कौन जाने, मालिक ! कि बेअदब कौन है ? इस समय आपकी बनी हुई है। आप जो-कुछ भी समझें सो ठीक है।"

"ओ ! तू बदतमीज़ ही नहीं, मग़रूर भी है। अच्छा, अभी निकाले देता हूँ तेरी मग़रूरी।"

मिस्टर गुप्ता ने मिल-मैनेजर से टेलिफोन मिलाकर कह दिया कि कैलेण्डरिंग डिपार्टमेंट में काम करने वाला धनपत फौरन नौकरी से निकाल दिया जाए, और मिल के दरवाज़ में नहीं घुसने पाए, और उसका कोई प्रॉवीडेण्ट-फण्ड इत्यादि हो तो उसे नहीं दिया जाए। उनकी इजाज़त के बग़ैर। फिर वे धनपत से बोले : "अब तू जा सकता है।"

धनपत ने हँसकर कहा : "भगवान आपका भला करे, मालिक ! मुझ-में यदि कोई मग़रूरी बची हुई थी तो वह आज निकल गई। अब भगवान आपकी मग़रूरी भी निकाल दें, मैं भगवान से यही प्रार्थना करता हूँ।"

मिस्टर गुप्ता ने अपना मुँह फेर लिया। तब साधु बाबा ने मुस्करा-कहा : "गुप्ता जी ! आज आपने इतने लोगों के सम्मुख अपने-आपको हिन्दू कहा है। मैं जानता हूँ कि आप उस समय मिथ्या भाषण कर रहे थे। किंतु भगवान से मेरी यही प्रार्थना है कि इस मिथ्या को वे सत्य में परिणत कर दें।"

मिस्टर गुप्ता जुगुप्सा के स्वर में बोले : "जा बे, जा ! यह पण्डतों की जुबान किसी और पर आज़मा ! मुझ पर इसका कोई असर नहीं होने वाला।"

साधु बाबा धनपत का हाथ पकड़कर चुपचाप कमरे से बाहर निकल गए।

मिस्टर गुप्ता ने क्रुद्ध होकर अपनी मेज पर मुक्का दे मारा। साधु बाबा की बात ने उनकी जय को पराजय में परिणत कर दिया था। साधु बाबा की शान्ति ने उनको अशान्त कर दिया था।

उन्होंने मिस मलहोत्रा को बुलाकर कहा : "ज़रा कमला का टेलीफोन मिलाओ तो।"

मिस मलहोत्रा ने डायरेक्ट लाइन पर कमला का नम्बर घुमा दिया। उधर कमला उस समय अपने घर पर ही थी। रिसीवर को मिस्टर गुप्ता के हाथ में देकर मिस मलहोत्रा बाहर चली गईं। मिस्टर गुप्ता बातें करने लगे: "हलो...हाँ, मैं ही हूँ, मिस्टर गुप्ता...कहो कैसी हो...कमला! ...बहुत अच्छा...मुझे तुमसे एक बात कहनी थी...हाँ, उस सैटलमैंट के सिलसिले में ही...नहीं, इतनी फुरसत नहीं है....बात यह है कि मैं वह मामला आरबिट्रेशन में देने के लिए तैयार नहीं...हाँ, कुछ भी समझो...खैर, यही मान लो के मेरा ख़याल बदल गया...नहीं, नहीं, यह मेरा फाइनल फ़ैसला है...मैं इस मामले पर पूरा ग़ौर कर लेने के बाद ही तुमसे यह सब कह रहा हूँ... यह मेरी मर्जी की बात है के मैं कौन सी माँग मंजूर करूँ...नहीं, नहीं, मैं कोई कमिटमैंट करने के लिए तैयार नहीं। तुमको नोटिस वापस ले लेना होगा...हाँ, अनकण्डीशनली...बिल्कुल!! इसमें क्या शक है...

उधर से कमला का स्वर ऊँचा हो गया। आज पहिले-पहल मिस्टर गुप्ता ने उसके साथ इस प्रकार बातें की थीं। आज पहले-पहल मिस्टर गुप्ता ने उसको 'तुम' कह कर सम्बोधित किया था। इतनी पुरानी जान-पहचान। कमलाजी, कमलाजी कहते नहीं थकते थे मिस्टर गुप्ता। उनका बदला हुआ भाव देखकर कमला क्रुद्ध हो उठी।

प्रत्युत्तर में मिस्टर गुप्ता का स्वर भी ऊँचा हो गया। और उन्होंने 'तुम' को 'तू' पर उतार दिया। वे गुर्राकर कहने लगे: "देख, कमला! अब तू मुझको डराने-धमकाने की अपनी पुरानी आदत बिल्कुल छोड़ दे.... क्या कहा? पार्टी की तरफ से बोल रही है?...लेकिन पार्टी से मेरा क्या वास्ता? मैं तो फक़त तुझको जानता हूँ...और तू तो ऐसी अहसान फ़रामोश है के कुछ कहने की बात ही नहीं...खैर, पार्टी ही सही...हाँ, मैं तेरी पार्टी का इलाज भी कर सकता हूँ? तेरी पार्टी को दफ़नाकर रख सकता हूँ मैं...हाँ, इसमें क्या शक है? मैं अब भी सोवियत रूस का एडमायरर हूँ... यह नतीजा कैसे निकाल लिया?...सोवियत यूनियन को मैं बिट्रे कर रहा हूँ या तेरी पार्टी बिट्रे कर रही है...

कमला का स्वर और भी तेज़ हो गया। टेलीफोन उसके क्रुद्ध आक्रोश से फटा पड़ रहा था। किन्तु मिस्टर गुप्ता सहसा हँसने लगे। फिर उन्होंने अपने स्वर में मिठास भर कर कहा : "अच्छा, कमला ! जाने दे ये सब बातें। तू ज़रा मुझको यह तो बता के कानपुर का हबीब सिद्दीक़ी कौन है ? ...क्या कहा ?...तूने कभी उस शख़्स की शक्ल नहीं देखी...लेकिन तू तो कानपुर में रह चुकी है ?....वह तो वहाँ का मशहूर पार्टी-मेम्बर था...क्या कहा ? चाइल्ड को भी यह राज मालूम है ?....हैं ! ! कितने डॉलर में ? ...पाँच-सौ डॉलर में ! ...हैं ! ! चाइल्ड खुद तुझसे कह रहा था...क्या मतलब ? तो क्या यह सब झूठ है ? ....नहीं, कमला ! हबीब ने खुद इक़रार किया हैं... अभी पाँच मिनट पहले....हाँ, यह भी इक़रार किया है के उसका एक हिन्दू लड़की से नाजायज़ ताल्लुक़ था...क्या कहा ! वो लड़की तू नहीं थी ?... तो और कौन है वो ? ...तेरी पार्टी की ही कोई लड़की होनी चाहिए...मैं सब पता लगा लूँगा...और...

उधर से कमला ने रिसीवर पटक दिया। इधर मिस्टर गुप्ता के हाथ से भी रिसीवर छूट पड़ा। और वे माथा पकड़कर अपनी कुरसी में लुढ़क गए।

वे ठगे गए थे। एक छोकरे ने ठग लिया था उनको ! ! उनकी अंटी से पूरे पाँच-सौ रुपये निकाल लिए थे उस छोकरे ने ! उन्होने सोचा था कि पाँच-सौ रुपए के एक पत्थर से वे दो-दो पंछी मारेंगे ! किन्तु वह पत्थर तो पुराना पत्थर निकला ! पहले से किसी और के हाथों में बिका हुआ।

नहीं, वे बिल्कुल तो नहीं ठगे गए ! वह मुस्टण्डा तो स्वयं कह रहा था कि वह पुराना कम्यूनिस्ट है, जात का मुसलमान है, और उसने किसी हिंदू लड़की के साथ दुराचार किया था ! तो चलो, एक शत्रु का पत्ता तो कटा। उनके पाँच-सौ रुपए बिलकुल व्यर्थ तो नहीं गए !

किन्तु यह सब किस्सा क्या है ? कमला का नाम उस छोकरे ने क्यों लिया ? कमला कह रही थी कि चाइल्ड को भी उसने यही किस्सा बतलाया है ! पाँच-सौ डॉलर लेकर ! !

मिस्टर गुप्ता ने चाइल्ड का टेलीफोन मिलाया। वह अपने दफ्तर में नहीं था। किन्तु दफ्तर से उसके घर का नम्बर मिल गया। चाइल्ड के घर पर कोई पार्टी हो रही थी। मिस्टर गुप्ता ने वहीं उसको पकड़ लिया। फोन पर बातें होने लगीं। मिस्टर गुप्ता कह रहे थे : "आपने सुबह मुझको यह सब क्यों नहीं बतलाया ?...टॉप सीक्रेट का क्या मतलब ? वह छोकरा तो यह खबर दो-दो आने में बेचेगा...क्या कहा ? तुम्हार कानपुर का सोर्स कहता है के कमला वाली बात बिल्कुल सच्ची है ?...लेकिन कमला तो इनकार कर रही है...खुदा जाने क्या राज़ है...वाशिंगटन इसमें क्या करेगा ?...खैर ! आप लोग जो ठीक समझें, करें....हाँ, मैंने तो कदम उठाना शुरू कर दिया....देखता हूँ, कमला किस करवट बैठती है....कोई बात नहीं, वह मुस्टण्डा तो मेरे काबू में आ ही गया...बाइ बाय !"

टेलीफोन रखकर मिस्टर गुप्ता फिर अपनी कुरसी में लुढ़क गए। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि इन अमेरिकन लोगों को खुदा ने किस धात का बनाया है ! साले कहते रहते थे कि वे कम्यूनिज़म को उखाड़ना चाहते हैं। किन्तु मौक़े पर कभी कुछ नहीं कर पाते। यह मौक़ा आया था। दिल्ली की पार्टी तो उलट-पुलट हो ही जाती। किन्तु इन सालों ने फाइल वाशिंगटन भेज दी। रूस की एम्बैसी को ऐसा मौक़ा मिला होता तो....

भइ, रूस सोलहों आने सच्चा देश है। वहाँ कभी कोई भूल-चूक नहीं होती...

टेलीफोन बज उठा। बिज़नैस कॉल थी। मिस्टर गुप्ता दूसरी बातें करने लगे। और कुछ देर पहले की बातों को वे बिल्कुल भूल गए।

: ३ :

साँझ के समय न्यू इण्डिया कॉटन मिल्ज़ की चारों मज़दूर यूनियनों के नेता एक बैठक में बैठे थे। कम्यूनिस्ट यूनियन की ओर से कमला तथा जोरावर सिंह। भारतीय मज़दूर संघ की ओर से पूरन और मनसाराम। सोशलिस्ट यूनियन का सेक्रेटरी करतसिंह। तथा कांग्रेस यूनियन का प्रधान पृथिवीनाथ।

गत पन्द्रह-बीस दिन में परिस्थिति ने बारम्बार पलटा खाया था। पहले तो कम्यूनिस्ट यूनियन का आह्वान सुनकर शेष तीनों यूनियनों ने भी हड़ताल करने का निश्चय किया था और मालिक को नोटिस दे दिया था। फिर, नोटिस की अवधि पूरी होने के पूर्व ही, कमला और मालिक के मध्य एक समझौता हो गया था। मामला आरबिट्रेशन में दे देने की बात थी। किसी अन्य यूनियन से पूछा तक नहीं गया था कि समझौता उचित हुआ या अनुचित। इस अवहेलना से मर्माहत होकर भारतीय मजदूर संघ ने निश्चय किया था कि वे लोग, मालिक के सम्मुख नई माँगें रखकर, एक नए संघर्ष का सूत्रपात करेंगे।

कमला ने पूरन को समझाने का प्रयास किया था कि वह संघर्ष का विचार त्याग दे। कमला के मत में स्वदेश उस समय एक भयानक संकट में से गुज़र रहा था। उस समय, उसके मतानुसार, यह अत्यन्त आवश्यक था कि उत्पादन का क्रम एक पल के लिए भी न रुके। उसने इसीलिए मिस्टर गुप्ता का पक्ष सर्वथा दुर्बल देखकर भी उस समय उनके साथ द्वन्द्व करना ठीक नहीं समझा था, और मिस्टर गुप्ता के साथ समझौता कर लिया था।

पूरन ने कहा था : "किन्तु, कमला जी ! हम तो वेतन-वृद्धि की माँग नहीं उठा रहे। हमारी माँगें तो बहुत सीधी-सादी हैं—मालिक मज़दूर बस्ती में एक मन्दिर बनवा दें। वे दान-दक्षिणा देते रहते हैं। मिल के धर्मादा खाते में भी कई हज़ार रुपये आए साल निकलते रहते हैं। मज़दूरों को धर्म-ध्यान करने की एक प्रेरणा मिल जाएगी। साधु-सन्त इस ओर आएँगे। उनका सत्संग करके मज़दूरों का जीवन सुधर जाएगा।"

कमला मौन रही थी। धर्म के प्रश्न को लेकर वह पूरन के साथ कोई विवाद करना नहीं चाहती थी। वह जानती थी कि मौलिक मतभेद होने के कारण कोई निष्कर्ष नहीं निकलेगा। पूरन ने आगे कहा था : "रही मदिरालय और वेश्यागृहों की बात। उनको बस्ती से उठवा देने में तो मालिक को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। मज़दूरों का चरित्र दूषित हो,

और मज़दूरों के घरों में नित्य-नवीन कलह उपजे—इस सब से तो मिल के काम में भी बाधा आती है, और उत्पादन भी कम हो पाता है।"

कमला ने अपने मुख पर शंका का भाव प्रकट करके उत्तर दिया था : "मज़दूरों की जैसी ज़िन्दगी है उसको तो तुम जानते हो, पूरन ! जी-तोड़ मेहनत करते हैं वे लोग। फिर अगर वे लोग दो घड़ी अपना मनबहलाव कर लें तो तुमको शिकायत नहीं होनी चाहिए। तुम तो सन्त आदमी हो। लेकिन सभी लोग तो तुम जैसे नहीं हो सकते। और लोगों को तो शराब भी चाहिए, और....मेरा मतलब, मज़दूर लोग अगर अपनी मर्ज़ी से ये सब काम छोड़ दें तो ये दूकानें अपने-आप उठ जाएँगी। ज़ोर-ज़बर करवाने की क्या ज़रूरत है ? सो भी मालिक की तरफ से। मालिक को हम आज इस बात पर ज़ोर-ज़बर करने का मौक़ा देते हैं, कल वह किसी और बात को लेकर ज़ोर-ज़बर करेगा। यह तो भेड़ों के गल्ले में भेड़िए को बुला लेने की कोशिश है, पूरन !"

पूरन जानता था कि बस्ती में ठेके पर तथा चोरी से मद्य का व्यवसाय करने वाले सब लोग कम्यूनिस्ट पार्टी के पिट्ठू हैं। कम्यूनिस्ट पार्टी उनसे नियमित तौर पर रुपया ऐंठती थी। वेश्यागृहों को चलाने वाले गुण्डे भी कम्यूनिस्ट पार्टी के ही पिट्ठू थे। बहुत बार ऐसा हुआ था कि किसी ग़ैर-कम्यूनिस्ट यूनियन का कोई मज़दूर शराब पीकर अथवा वेश्या-गमन करके रुपया नहीं दे पाया था। तब कम्यूनिस्टों के उन पिट्ठुओं ने उसको दबाकर उसे कम्यूनिस्ट यूनियन में भर्ती होने पर विवश किया था।

किन्तु वह सब बात उसने कमला से नहीं कही। कारण, वह कमला से विवाद करना नहीं चाहता था। उसकी कामना यही थी कि किसी प्रकार कम्यूनिस्ट नेताओं को समझा-बुझाकर यदि आगामी संघर्ष में तटस्थ भी रक्खा जा सके तो यह बात उनके सफल होने में सहायक होगी। इस-लिए पूरन ने कहा : "कमला जी ! मैं आपका यह कथन स्वीकार करता हूँ कि मज़दूरों का जीवन कठोर है। मैं भी मानता हूँ कि उनके मनोरञ्जन का सुचारु प्रबन्ध होना ही चाहिए। इसीलिए हमारा यह प्रयत्न है कि

देहात के विविध अञ्चलों से आने वाले मज़दूर विविध प्रकार की संस्कृति-परिषद् बनाएँ और अपने-अपने अञ्चल से नाटक करने वालों तथा कथा और भजन सुनाने वालों को आमन्त्रित करते रहें। इस प्रकार मज़दूरों के जीवन में रस भी जुट जाएगा, और उनका सांस्कृतिक स्तर भी ऊपर उठ सकेगा।"

कमला को क्रोध आ गया था। जब देखो तब वही पोंगापन्थी! मन्दिर बनाना, साधु-सन्तों को बुलाना, कथा और भजन करवाना—यह सब तो देश को अतीत की ओर खींच ले जाने का आग्रह था। इस प्रकार के प्रयास में कम्यूनिस्ट पार्टी किसी की भी सहायता नहीं कर सकती थी। कम्यूनिस्ट पार्टी का मुख अतीत की ओर नहीं, अनागत की ओर उठा हुआ था। कम्यूनिस्ट पार्टी का कर्तव्य था कि वह अतीत की आराधना करने वाले प्रत्येक सिद्धान्त तथा संगठन का सम्पूर्ण उच्छेद कर डाले। कमला ने व्यंग के स्वर में कहा था: "पूरन! अगर तुम अपने दिमाग़ से सोच-समझकर कोई स्कीम पेश करते तो उस पर ग़ौर किया जा सकता था। लेकिन तुम तो किसी और का सिखाया हुआ सबक़ दोहरा रहे हो। तोते की तरह।"

पूरन ने शान्त रहकर उत्तर दिया था: "आप की यह बात सत्य है कि ये विचार हम लोगों के मस्तिष्क में अपने-आप नहीं उपजे। हमारे पूज्यवर साधु बाबा ने ही हम लोगों को ऐसी शिक्षा दी है। किन्तु इस शिक्षा में भूल कहाँ है? इन बातों को हम लोगों ने स्वयं नहीं सोचा, इसीलिए क्या ये भ्रान्त हो गईं?"

कमला ने कोई उत्तर नहीं दिया था। वह उसी क्षण उठकर चली गई थीं। और अगले दिन जोरावर सिंह ने पूरन से कह दिया था कि भारतीय मज़दूर संघ ने यदि मज़दूरों में किसी प्रकार का संकीर्ण सम्प्रदायवाद फैलाने की चेष्टा की तो मिल की सारी जनतान्त्रिक तथा प्रगतिवादी शक्तियाँ एक साथ मिलकर मज़दूर संघ का विकट विरोध करेंगी। पूरन ने सोशलिस्ट तथा कांग्रेस यूनियनों के नेताओं से भी बातें करके देखा था। वे भी

इसी मत के निकले थे कि वे लोग पोगा-पन्थी के फेर में पड़ना नहीं चाहते।

अब अकस्मात् परिस्थिति ने फिर पलटा खाया था। पूरन का पक्ष सर्वथा दुर्बल हो गया था। साधु बाबा के मुसलमान होने और हिन्दू लड़की से दुराचार करने का समाचार सारी मिल में फैल चुका था। भारतीय मज़-दूर संघ के सदस्य उसी समय जाकर साधु बाबा को बस्ती से भगा देना चाहते थे। पूरन ने उनको बड़ी कठिनाई से रोका था। जोरावर सिंह इत्यादि की भी इच्छा थी कि पुलिस में खबर देकर साधु बाबा को पकड़वा दिया जाए जिससे उसकी पूरी पोल खुल पाए। किन्तु कमला ने उन लोगों को मना कर दिया था। फिर भी इक्के-दुक्के मज़दूर तो धूने के पास जाकर साधु बाबा को गाली-गलौज दे ही आए थे। एक-दो ने उनके ऊपर थूका भी था।

केवल एक धनपत ही साधु बाबा के पास बैठा उनकी सेवा कर रहा था। उसने क्रोध से लाल-पीले मज़दूरों के पाँव पकड़-पकड़कर प्रार्थना की थी कि संसार से विरक्त पुरुष को वे लोग बुरा-भला न कहें।

तब एक दिन अपराह्न के समय एक अन्य साधु बाबा ने मैदान में आकर एक दूसरा धूना लगा दिया था। बहुत से मज़दूर उसके सत्संग में जा बैठे थे। वह सुल्फे की चिलम उन सब के बीच घुमाता हुआ उपदेश दे रहा था कि संसार मिथ्या है, मोह में डालने वाली माया है, और किसी को भी "मैं" और "मेरी" के फेर में नहीं पड़ना चाहिए। बीच-बीच में वह यह भी कहता जाता था कि कलियुग में धर्म की ऐसी हानि हो गई है कि साधु-संन्यासी लोग तक यह भूलते जा रहे हैं कि उनको संसार से कोई प्रयोजन नहीं रहना चाहिए। वे लोग भी गृहस्थों के समान संसार की समस्याओं को लेकर व्यस्त होने लगे हैं और अपनी तपस्या में बाधा डाल रहे हैं। पुराने साधु बाबा के प्रति विक्षुब्ध मज़दूरों को विश्वास होने लगा था कि ये नए साधु बाबा कोई बहुत ही पहुँचे हुए महात्मा हैं। और उसके धूने पर दूध मिठाई तथा फलों की ढेरी लगने लगी थी।

दूसरी ओर मिस्टर गुप्ता के अपनी बात से मुकर जाने के कारण

कम्यूनिस्ट यूनियन को फिर संघर्ष के लिए तत्पर होना पड़ा था। और उस संघर्ष के स्वरूप पर विचार करने के लिए आज मज़दूर नेताओं की यह सभा समाहूत हुई थी।

सर्वप्रथम कमला ने सभा को सम्बोधित किया। वह बोली: "सबसे पहले मैं आप लोगों से माफ़ी माँगना चाहती हूँ। मेरे कारण ही आप लोगों को धोखे का शिकार होना पड़ा। मैं नहीं जानती थी कि गुप्ता अचानक ऐसा काइयाँ हो गया है। मैं तो ज़िन्दगी-भर कम्यनिस्ट पार्टी की मेम्बर रही हूँ। और कम्यूनिस्ट तो आप जानते है साफ-गो इन्सान होता है। इसलिए कम्यूनिस्ट पहले-पहल किसी काइयाँ आदमी को नहीं समझ पाता। लेकिन एक बार अगर यक़ीन हो जाए कि फलाँ शख्स काइयाँ हैं तो कम्यूनिस्ट उसका सिर कुचलने के लिए भी तैयार होना जानता है। अपने सिर पर कफ़न बाँध कर। तो, दोस्तो! अब आप लोगों को ही फ़ैसला करना है के गुप्ता को उसके किए की सज़ा किस तरह दी जाए।"

दूसरे नम्बर पर पृथिवीनाथ बोला: "मैं तो पहले ही जानता था कि गुप्ता कोई चाल चल रहा है। वह चाहता था कि एक बार मजदूरों का जोश ठण्डा हो जाए। वरना मजदूरों की कोई माँग मंजूर करने की मर्ज़ी तो उसकी शुरू से ही नहीं थी। वह तो बहुत दिन से मसानी के साथ सांठ-गाँठ कर रहा है। कांग्रेस के दफ्तर में यह पक्की ख़बर आ चुकी है कि वह मसानी से सलाह-मशवरा करके ही सारे काम करता है। और मसानी को तो आप सब जानते ही हैं। वह अमरीकी एम्बैसी से ही पूछ-पूछ कर पानी पीता है। इसलिए मुझको इस सारी बात में अमरीका की कोई गहरी साज़िश मालूम होती है।"

पूरन ने कहा: "पृथिवीनाथजी! इन लम्बी-चौड़ी बातों में जाने से क्या लाभ? पहली बार जब हड़ताल का निश्चय हुआ तब कुछ लोग कह रहे थे कि चीन और रूस मज़दूरों को भड़का रहे हैं। अब आप अमरीका को खींच लाए। भगवान ही जानता है कि कौन लोग क्या-क्या चालें चल रहे हैं। किन्तु हमारे सम्मुख तो अब यह समस्या है कि हम लोग कौन सी

चाल चलें। हमें तो उसी पर विचार करना चाहिए।"

जोरावर सिंह ने कटाक्ष किया: "देख लिया!! अमरीका की बुराई सुणते ही मिरचें लग गई ना!! वह मन्दर-फन्दर खुलवाणे की बातें जब हो रही थीं तभी मैं समझ गया था के क्या खेल खेला जा रहा है और कौण खिलवा रहा है। लेकिन क्या करें, पूरण! तुम हमारे मजदूर भाई हो।"

पृथिवीनाथ बोला: "मैं भी तो यही कहता था। आखिर यह मुस्टण्डा पाकिस्तान का एजेण्ट निकला ना! और पाकिस्तान को तो अमरीका ही चला रहा है।"

पूरन ने कहा: " वे साधु बाबा अमरीका के तो बहुत विरुद्ध हैं। वे प्रतिदिन हम लोगों से कहते रहते थे कि इस देश से सारे अमरीकी लोगों को कान पकड़कर निकाल दिया जाना चाहिए। तुरन्त। नहीं तो इस देश में घुन लग जाएगा। अमरीका का तो नाम सुनते ही साधु बाबा की जुगुप्सा का वार-पार नहीं रहता।"

जोरावरसिंह बोला: "हाथी के दाँत खाणे के और, दिखाणे के और! समझे, पूरण! तुमने शाखा में जाकर डण्ड ज़रूर पेले हैं। लेकण, यार! कभी अपने दमाग़ को दुख नहीं दिया! वरणा यह तो बहुत सीधी-सी बात थी। भइया! अमरीकण एजण्ट अगर अपणे-आप को इस तरा छुपाणे की कोसस नहीं करेगा तो क्या मैं करूँगा वो कोसस?"

करनसिंह अभी तक चुप था। अब उसने भी वार्तालाप में योगदान किया: "मैं ज्यादा कुछ नहीं जानता। लेकिन इतना जरूर जानता हूँ के अमरीकी लोग इस मुल्क में इन्डस्ट्री, खासकर हैवी इन्डस्ट्री, बिल्कुल नहीं बनने देना चाहते। वे चाहते हैं के इस मुल्क का आदमी खेती-बाड़ी करता रहे और स्टील के कारखाने उनके अपने मुल्क में खुलते रहें। इसलिए अमरीका की सदा यह कोशिश रहती है कि यहाँ के लोग मन्दर-मसजद में माथा रगड़ते रहें। फिर कोई खतरा नहीं रहेगा के यहाँ भी किसी दिन कोई स्टील का कारखाना खड़ा हो जाए।"

कमला ने कहा: "और रूस तो चाहता है के हिन्दुस्तान जल्द-अज़-जल्द

स्टील के मामले में अपने पाँव पर खड़ा हो जाए। देखो रूस ने भिलाई को कितनी जल्दी तैयार किया है।"

पूरन चुप रहा। बात दूसरी ही ओर जा रही थी। उसको स्वयं इन अन्तरराष्ट्रीय प्रश्नों में कभी कोई दिलचस्पी नहीं रही थी। क्या मतलब था इस बात से कि कौन-सा देश क्या चाहता है? भारत के सारे प्रश्न भारत के भीतर ही, भारतीय ढंग से सुलझने चाहिएँ। हाँ, अमेरिका के प्रति उसके मन में भी आवेग था। अमेरिका ने पाकिस्तान से सैनिक सन्धि करके बड़ा ही दुराचार किया था। और पूरन के मन में रूस के प्रति कुछ श्रद्धा भी थी। रूस के डर से ही पाकिस्तान ने भारत से छेड़-छाड़ नहीं की थी। और रूस ने भारत में स्टील का कारखाना भी बनाया था। पाकिस्तान से कभी भिड़न्त हो गई तो वह स्टील बहुत काम आएगी।

तब जोरावरसिंह ने सब की ओर दृष्टि घुमाकर पूछा: "तो फिर आप लोगों का क्या फैसला है?"

पृथिवीनाथ ने कहा: "हड़ताल का नोटिस कल ही दे देना चाहिए। और अबकी बार इस गुप्ता के बच्चे को नाक रगड़वाकर ही छोड़ना चाहिए ताके वो फिर कभी इस क़िस्म की हरकत करने का हौसला नहीं करे।"

पूरन बोला: "किन्तु यह भी सोच लेना चाहिए कि मजदूरों के बीच बहुत धाँधली फैली हुई है। वे नेताओं के प्रति असन्तुष्ट भी हैं। ऐसी अवस्था में यदि संघर्ष को कुछ दिन के लिए स्थगित करके मजदूरों को समझाने का काम किया जाए तो अधिक अच्छा रहेगा। अन्यथा असफल होने की सम्भावना ही अधिक है।"

करनसिंह बोला: "हाँ, यह भी सोच लेने की बात है। मज़दूरों में धाँधली ज़रूर है। खासकर कम्यूनिस्टों और संघवालों की यूनियनों के मजदूरों में। सिर्फ़ सोशलिस्ट यूनियन के मजदूर ही मुस्तैद हैं।"

पृथिवीनाथ ने कहा: "कांग्रेस की यूनियन के मज़दूर भी मुस्तैद हैं।"

पूरन ने कह दिया: "आप लोगों की यूनियनों में मज़दूर ही कितने हैं? चने को लेकर भाड़ फोड़ने की तैयारी करने से कोई लाभ नहीं।"

करनसिंह को क्रोध आ गया। वह व्यङ्गमय वाणी में बोला : "हमारी यूनियन में मज़दूर बहुत कम हैं। यह बात सच है। हमने तो आँखें मूँदकर भेड़-बकरियों को अपनी यूनियन में भरा नहीं। छाँट-छाँटकर समझदार लोगों को ही लिया है। वे सिद्धान्त की बात जानते हैं। यह नहीं के बर्छी-सी चोटी रख ली, तिलक लगा लिया, हनुमान के आगे माथा टेक आए, और जब कोई काम की बात होने लगी तो बुद्धू की तरह ताकने लगे।"

पृथिवीनाथ ने भी सुर मिलाया : "और यही बात हमारी यूनियन के बारे मे भी सच है। हमारे सारे मेम्बरों के दिल और दिमाग़ जवाहरलालजी की जोत से जगमगा रहे हैं। वे किसी से भी पीछे रहने वाले नहीं।"

तब कमला बोली : "यह तो बहस होने लगी। हम लोग इकट्ठे हुए थे कोई इत्तफ़ाक़ करने के लिए। मैं तो एक ही बात जानती हूँ। सारी यूनि-यनें ही अच्छी हैं, और सारे मज़दूर मुस्तैद हैं। अब हम लोगों को मिलकर कोई फ़ैसला करना चाहिए।"

जोरावरसिंह ने कहा : "फ़ैसला तो हो चुका, कामरेड सरमा ! पृथिवी-णाथजी तैयार हैं, करणसिंह भी तैयार है, और पूरण भी...क्यों, पूरण ! तुम भी तयार हो ना ?"

पूरन असमंजस में पड़ गया। वह इस प्रकार हड़बड़ी में कोई निश्चय करने के लिए तैयार नहीं था। वह तो यही सोचकर सभा में आया था कि वहाँ जो बातचीत होगी उसके निष्कर्ष पर वह अपने अन्यान्य साथियों के साथ परामर्श करेगा। किन्तु जोरावरसिंह तो सहसा उसकी नकेल पकड़-कर ही चल दिया।

साधु बाबा के काण्ड को लेकर पूरन का नेतृत्व पहले ही खटाई में पड़ा जा रहा था। उसके प्रति श्रद्धा रखने वाले भी उसके सीधेपन पर हँस रहे थे। इस अवस्था में तो वह अपने अन्य साथियों के साथ परामर्श किए बिना कोई भी निश्चय करने के लिए प्रस्तुत नहीं था। उसने अपने समीप उपासीन मनसाराम की ओर देखा। मनसाराम अभी तक मौन था। अब वह बोला : "पूरन भैया ! इस प्रकार हठात् तो हमें कोई निश्चय नहीं

करना चाहिए ।"

पृथिवीनाथ ने कहा : "क्यों ? तुम लोग क्या अपनी यूनियन के लीडर नहीं हो ?"

मनसाराम बोला : "लीडर तो हैं, पृथिवीनाथजी ! किन्तु इस विषय में मजदूरों का मत भी तो ज्ञात होना चाहिए।"

पृथिविनाथ ने फिर कटाक्ष किया : "अजीब बात है ! संघ के लोग कब से डैमोक्रैसी के पैरोकार हो गए ?"

जोरावरसिंह ने भी जोर लगाया। वह बोला : "यह खबर तो यारो नागपुर भेजी जाणी चाहिए ! फोरण ! ! वहां पर वह फासस्टों की टोली बैठी है ना ? उनको फोरण इतला होणी चाहिए के तुम्हारे चेले जम्हूरियत में विसवास करणे लगे हैं।"

मनसाराम को तैश आ गया। वह गुर्राया : "जोरावरसिंह ! शिष्टाचार मत भूलो। नेतागण सब लोगों के पूज्य होते हैं। हमने तो कभी तुम्हारे नेताओं पर छीटे नहीं कसे।"

जोरावरसिंह घबराया नहीं। वह बोला : "तुम्हारी वात मैं माणता हूँ, मणसाराम ! लेकण नेता लोगों के बारे में ही। डण्ड-बैठक और कवायद करवाणे वाले लोग नेता कब से हो गए ?"

पृथिवीनाथ और करनसिंह हँसने लगे। जोरावरसिंह का कार्टून सुनकर। तब कमला ने सहसा जोरावरसिंह को फटकार दिया। वह बोली : "जोरावर ! तुझे बात करने की बिल्कुल तमीज़ नहीं। लेकिन फिर भी तेरी जबान सबसे ज्यादा चलती रहती है। कैंची की तरह। तुझको सौ दफा समझाया है के मजदूरों का सवाल हो तो तू पार्टीबाज़ी की टाँग मत अड़ाया कर। लेकिन तेरे भेजे में बात बैठती ही नहीं। तू समझ ही नहीं सकता के मजदूर-मजदूर सब एक। फिर क्या कांग्रेस और क्या सोशलिस्ट, क्या कम्यूनिस्ट और क्या संघ ?"

जोरावरसिंह ने भीगी बिल्ली बनकर सिर झुका लिया। पृथिवीनाथ और करनसिंह भी सिटपिटा गए। कमला के मुख से यह नई बात निकली

थी। वे कमला की ओर ताकने लगे।

कमला ने उन लोगों की अवहेलना करके पूरन से कहा : "पूरन ! तुम लोग जाओ। जाकर अपने साथियों से सलाह कर लो। फिर जो फैसला हो उससे मुझको आगाह कर दो।"

पूरन और मनसाराम उठकर चल पड़े। तब कमला ने उनको रोककर कहा : "देखो, पूरन ! अगर कल दोपहर तक तुम्हारा फैसला मुझे मालूम हो जाए तो बहुत अच्छा रहेगा।"

पूरन ने कहा : "हम प्रयत्न करेंगे कि आपको कोई-न-कोई निश्चय तब तक सुना दिया जाए !"

वे दोनों बाहर चले आए। पूरन ने मनसाराम से कहा : "मनसाराम ! मैं इसी समय धनपत से बात करना चाहता हूँ। वह इस समय कहाँ होगा भला ?"

मनसाराम ने उत्तर दिया : "वह तो साधु बाबा के पास बैठा है। अकेला। और कोई नहीं है वहाँ। बुला लाऊँ ?"

"नहीं, चलो हम भी वहीं चले चलते हैं।"

मनसाराम ने पूरन की ओर देखा। पूरन का मनोभाव उसकी समझ में नहीं आ रहा था। जब से वे लोग मिस्टर गुप्ता से बातें करके लौटे थे, तब से पूरन असाधारण रूप से मौन था। साधु बाबा के विषय में न जाने किस-किस ने आकर क्या-क्या कहा था। किन्तु पूरन मुख खोलकर एक शब्द भी नहीं बोला था। अब यह कह रहा था कि चलो साधु बाबा के धूने पर ! फिर वही बात ! ! लोग क्या कहेंगे ?

किन्तु मनसाराम पूरन का मित्र ही नहीं, अनुयायी भी था। श्रद्धा-सम्पन्न अनुयायी। वह पूरन के परामर्श को भी आदेश के समान ही ग्रहण करता था।

इसलिए वह चुपचाप पूरन के साथ हो लिया।

धूने पर पहुँचकर दोनों ने साधु बाबा के पाँव छुए। पूर्ववत्। जैसे इस बीच कुछ हुआ ही नहीं हो। साधु बाबा ने उन दोनों को आशीर्वाद दिया।

पूर्ववत् मुस्कराकर। और वे दोनों धूने के सामने बैठ गए।

धनपत ने स्नेह-सूचक स्वर में कहा : "आओ, पूरन ! आओ, मनसाराम ! भोजन कर आए, भाई !"

पूरन बोला : "भोजन कहाँ किया है अभी ! अभी तो उस सभा से उठ कर आ रहे हैं। कमलाजी फिर हड़ताल का नोटिस देना चाहती हैं। कांग्रेस वाले और सोशलिस्ट तो तैयार हो गए। हमको भी निश्चय करना है।"

धनपत विस्मित हो उठा। उसने कहा : "कमलाजी के साथ तो समझौते की बात पक्की सुनी थी ?"

"वे कह रही थीं कि आज साढ़े-दस ग्यारह बजे मालिक ने टेलिफोन पर कह दिया कि वह समझौता उनको स्वीकार नहीं है।"

"वे क्या चाहते हैं ?"

"यही कि यूनियनें बिना किसी शर्त के अपने नोटिस वापिस ले लें। तब वे मजदूरों की माँगों पर विचार करेंगे।"

धनपत यह सुनकर मौन रहा। तब पूरन ने पूछा : "तुम्हारा क्या मत है, धनपत !"

धनपत बोला : "अब मैं क्या मत दूँगा ? मैं तो अब इस मिल का मजदूर रहा नहीं। अब मेरे मत का क्या मोल ?"

अब की बार पूरन और मनसाराम विस्मय में पड़ गए। अभी तक किसी को ज्ञात नहीं था कि धनपत को मिस्टर गुप्ता ने मिल से निकाल दिया है। साधु बाबा के सिवाय। पूरन ने पूछा : "क्या कह रहे हो, धनपत ! हुआ क्या है ?"

धनपत ने कहा : "कुछ नहीं। सुबह तुम लोग तो चले आए। मैं साधु बाबा के साथ पीछे रह गया था। मालिक ने मेरा नाम-धाम पूछा और मिल के मैनेजर को टेलीफोन कर दिया कि मैं मिल में नहीं घुसने पाऊँ।"

"क्या कुछ और कहा-सुनी हो गई थी ?"

"कुछ भी नहीं। वह तो पहले ही मुझसे चिढ़े बैठे थे।"

मनसाराम बोला : "तुम झूठमूठ उनसे विवाद जो करने लग गए।

यह मामला ही ऐसा नाजुक था कि चुप रहना ही ठीक होता।"

पूरन बोला : "भइ, धनपत ! सच कहता हूँ एक बार तो मैं भी लड़-खड़ा गया था। सब कुछ ऐसा अकस्मात् हुआ कि बस...

मनसाराम बोला : "यदि साधु बाबा पहिले से हमको सब कुछ बतला देते तो हम भी तैयार होकर जाते। फिर तो बात कुछ और ही बनती।"

धनपत ने साधु बाबा की ओर देखा। मानो वह चाहता हो कि वे इस बात का कोई उत्तर दें। साधु बाबा ने हँसकर कहा : "मनसाराम! मुझसे क्या किसी ने कभी पूछा था कि मैं कौन हूँ ? पूछा होता तो मैं कुछ भी नहीं छुपाता।"

मनसाराम बोला : "किन्तु, महाराज ! आप यह तो जानते ही थे कि हम लोगों के साथी कैसे निष्ठावान हिन्दू हैं। उनको अकस्मात् यह बात ज्ञात होना...

"मैं भी तो निष्ठावान हिन्दू हूँ, मनसाराम ! मैंने भी तो निष्ठावान हिन्दू-जैसा आचरण किया था। हिन्दू संन्यासी तो मरकर फिर जन्म लेता है। काषाय-वस्त्र पहिनते समय। उसके अतीत की रामकहानी का क्या कोई अर्थ रह जाता है ? उसके लिए, अथवा किसी अन्य के लिए ?"

"किन्तु आप तो संन्यासी होने के पूर्व..."

मनसाराम ने अपनी बात पूरी नहीं की। किन्तु उसका आशय स्पष्ट था। साधु बाबा ने हँसकर कहा : "कम्यूनिस्ट था। और उसके पूर्व मुसल-मान। किन्तु उससे क्या ? कोई अहिन्दू यदि हिन्दु-धर्म के प्रति श्रद्धासम्पन्न होकर हिन्दू बनना चाहे तो क्या उसके लिए हमारे हिन्दु-समाज में कोई स्थान नहीं ?"

मनसाराम बोला : "ऐसी बात नहीं है, महाराज ! किन्तु...

"है कैसे नहीं ? कुछ लोगों की बात मैं नहीं कहता। किन्तु साधारण हिन्दु-समाज में तो यह संकीर्णता सर्वत्र व्याप्त है। वह समाज अपने लोगों का बहिष्कार करना तो जानता है, किन्तु अपने से बाहर के लोगों को अपने भीतर लेना नहीं जानता। आज इस देश में जो भी मुसलमान अथवा ईसाई

हैं वे सब अन्ततः हिन्दू पूर्वजों की ही सन्तान हैं ना ? एक समय बलात्कार के कारण अथवा लोभ के कारण अथवा भ्रान्ति के कारण उनके पूर्वज अपने धर्म को छोड़ बैठे थे, अपने समाज से स्खलित हो गए थे। किन्तु क्या उनकी सन्तान को भी सदा-सदा के लिए उस भूल का शिकार रहना पड़ेगा ? हिन्दु-समाज क्या उनको क्षमा नहीं कर सकता, उनको अपनी छाती से नहीं लगा सकता ? वेद के काल से लेकर मुसलमानों के आक्रमण तक पराए को अपना बना लेना, विधर्मी को स्वधर्मी बना लेना, विदेशी को स्वदेशी बना लेना ही हिन्दु-धर्म का सहज स्वभाव था। कितने ग्रीक, पारसी हूण, शक और कुशान लोगों को हिन्दु-समाज ने आत्मसात् कर लिया। किन्तु आज हिन्दु-समाज एक मुसलमान का हिन्दू बनना सहन नहीं कर सकता ? यह तो अन्याय है, मनसाराम ! असमर्थता भी। इस प्रकार यह हिन्दु-समाज कितने दिन और जीवित रह सकेगा ?"

"यह बात तो नहीं है, महाराज ! हिन्दुओं की ओर से तो बहुत दिन से शुद्धि-आन्दोलन चल रहा है। अनेक अहिन्दू लोग हिन्दू बने हैं।"

"शुद्धि-आन्दोलन की बात जाने दो। उसको संयोग-वश ही यत्र-तत्र सफलता मिली है। और उसी काल में जितने अहिन्दू लोग हिन्दू बने हैं उनसे कहीं अधिक हिन्दू मुसलमान और ईसाई बन गए हैं।"

पूरन बोला : "और अब बौद्ध भी बनते जा रहे हैं।"

साधु बाबा ने कहा : "वह बात मैं नहीं कहता। बौद्धों को मैं हिन्दू ही मानता हूँ। बौद्ध बनने वाले लोगों को हिन्दु-समाज के बाहर गया हुआ मत मानो, पूरन !"

"हम तो नहीं मानते, महाराज ! किन्तु बौद्ध लोग तो ऐसा ही मानते हैं। हमारे न मानने से क्या होगा ? सिक्खों को भी हम हिन्दू मानते रहे। इतने दिन तक। और अब सिक्ख लोग कहने लगे कि वे हिन्दू ही नहीं हैं। हिन्दु-समाज का भाग्य ही कुछ ऐसा हो गया। अपने लोग ही अपने-आपको हिन्दू कहने से जी चुराने लगे। अन्य धर्मावलम्बियों की तो कौन कहे ?"

"किन्तु यह सब हुआ क्यों ?"

"सो मैं आपसे पूछना चाहता हूँ। मेरे पास इस समस्या का कोई समाधान नहीं, महाराज ! एक दिन मैं सोचता था कि समाधान मुझे ज्ञात है। किन्तु अब वह विश्वास भी मैं खो बैठा।"

साधु बाबा कुछ कहा ही चाहते थे कि फूलचन्द और अटल उस ओर आते हुए दिखाई दिए। उनको देखकर वे मौन हो गए।

फूलचन्द अथवा अटल ने साधु बाबा को प्रणाम नहीं किया। वे वैसे ही उनके सामने आ बैठे। और बैठते ही फूलचन्द ने कहा : "महाराज ! नये साधु बाबा आए हैं न ! वे कहते हैं कि साधु-संन्यासियों को दुनियादारी नहीं करनी चाहिए। इस विषय में आप क्या कहते हैं ?"

साधु बाबा ने उत्तर दिया : "यह तो ठीक ही बात है, फूलचन्द ! साधु-संन्यासी को दुनियादारी तो नहीं करनी चाहिए। किसी को दुनियादारी करना हो तो वह दुनिया को छोड़े ही क्यों ?"

"तो, महाराज ! आप अपनी कथनी के अनुसार करनी क्यों नहीं कर रहे ?"

साधु बाबा ने इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। वे फूलचन्द की ओर करुण दृष्टि से देखते हुए मौन रहे।

धनपत ने फूलचन्द से पूछा : "इनकी कौनसी करनी इनकी कथनी के विरुद्ध देख ली, फूलचन्द !"

फूलचन्द ने उत्तर दिया : "वाह ! ये तो जब से आए हैं तब से इन यूनियनों के टंटे में पड़े हैं। इन्होंने तो मिल में हड़ताल ही करवा दी होती। मालिक से मिलने नहीं गये थे ये ? मेरा मतलब, मजदूरों के सवाल को लेकर ?"

धनपत ने साधु बाबा की ओर देखा। वह चाहता था कि इस प्रश्न का उत्तर भी वे स्वयं ही दें। साधु बाबा बोले : "धर्म की रक्षा करना तो दुनियादारी नहीं है, फूलचन्द ! धर्म की रक्षा करना तथा दूसरों से करवाना तो साधु-संन्यासियों का प्रधान कर्तव्य है। धर्म के ऊपर ही तो यह समस्त

संसार, सारा समाज, सारे आश्रम टिके हुए हैं। धर्म से ओत-प्रोत हैं ये सब। संसार के किसी भी कोने में, किसी भी समस्या को लेकर यदि धर्म का प्रसंग उपस्थित हो तो साधु-संन्यासियों को तटस्थ अथवा कूटस्थ नहीं रहना चाहिए। अन्यथा वे समाज के शोषक मात्र रह जाएँगे।"

पूरन बोला : "किन्तु, महाराज ! अधिकतर तो यही देखा जाता है कि हमारे साधु-संन्यासी तटस्थ अथवा कूटस्थ ही रहते हैं। और यदि कोई एकाध संन्यासी धर्म के प्रसंग में राज-समाज का पथप्रदर्शन करना चाहता है तो सारा साधु-समाज उसकी निन्दा करने लग जाता है। करपात्रीजी का उदाहरण ले लीजिए। नेहरू सरकार और वामपन्थी दल तो उनके पीछे पड़े ही, सारे-के-सारे साधु और संन्यासी भी उनको बुरा-भला कहने लगे।"

"उससे क्या हुआ ? सच्चे संन्यासी तो करपात्रीजी ही हैं। अन्य लोगों के विषय में मैं अपशब्द नहीं कहना चाहता। किन्तु संन्यासी शब्द का दुरुप-योग भी उनके लिए मैं नहीं करूँगा।"

फूलचन्द ने पूछा : "अभी हाल में जो साधु-समाज बना है, उसके विषय में आपका क्या मत है ?"

साधु बाबा ने उत्तर दिया : "मैं तो अपनी सनातन परम्परा की बात जानता हूँ, फूलचन्द ! हमारी परम्परा में कभी यह विहित नहीं था कि साधु-संन्यासी किसी राजा का उपदेश सुनकर राज्य का काम करने के लिए उद्यत हो जाएँ। राजा को ही साधु-संन्यासियों का उपदेश सुनकर उनके ही बतलाए हुए धर्मोपार्जन के लिए उद्यत रहना पड़ता था। हमारे इतिहास-पुराण में क्या एक कथा है जिसमें वनवासी ऋषि राजा के पास आकर उससे अपना काम करने के लिए कहते हैं ? ऐसी अनेक कथाएँ हैं। और राजा को जब उपदेश की आवश्यकता होती है तो वह ऋषि के आश्रम पर जाता है, या अनायास ही आगत ऋषि को अपने से ऊँचे आसन पर आसीन करके बद्धाञ्जलि खड़ा हुआ प्रश्न पूछता है।"

"इतिहास-पुराण की बात जाने दीजिए। कौन जानता है कि वे सब कपोल-कल्पनाएँ ही नहीं हैं। और वैसा युग यदि कभी था तो वह बीत

चुका। उसके उपरान्त तो भारत में महात्मा बुद्ध हुए, फिर शंकराचार्य आए, फिर इस्लाम और ईसाइयत यहाँ जम गए। और अब विनोबाजी एक नए धर्म की स्थापना कर चुके हैं।"

"धर्म तो एक ही है, फूलचन्द! सनातन धर्म। कालक्रम में बाह्य आचार-व्यवहार भले ही बदल जाए, धर्म का तत्व तो यथावत् रहता है।"

"तो विनोबाजी क्या बकवाद कर रहे हैं?"

"वह बात मैं नहीं कहूँगा। तुम चाहो तो कह सकते हो।"

फूलचन्द कुछ और कहना चाहता था। किन्तु साधु बाबा ने हाथ उठाकर उसको रोक दिया। फिर वे पूरन को सम्बोधित करके बोले: "पूरन! तुम्हारी उस समस्या का समाधान भी यही है। हिन्दु-समाज जब तक सनातक धर्म पर आरूढ़ रहा तब तक हिन्दु-समाज की पाचन-शक्ति परिपूर्ण रही। किन्तु जिस समय से हिन्दु-धर्म कुछ ऐतिहासिक महापुरुषों के प्रवचनों को सर्वांग-सम्पूर्ण मानने वाले सम्प्रदायों में विभक्त हो गया, तब से उसकी पाचन-शक्ति क्षीण हो गई। पाखण्ड में पाचन-शक्ति की मात्रा अत्यल्प होती है।"

फूलचन्द ने बिगड़कर कहा: "आप सनातन धर्म के सिवाय सारे धर्मों को गाली क्यों दे रहे हैं?"

साधु बाबा ने हँसकर कहा: "पाखण्ड शब्द की परिभाषा यदि तुम जानते तो तुम इस शब्द को गाली नहीं समझते, फूलचन्द! पाखण्ड का अर्थ है व्यष्टि को समष्टि के स्थान पर प्रतिष्ठित करना, अंगमात्र को सम्पूर्ण शरीर मान लेना।"

फूलचन्द उठता हुआ बोला: "आप से तो बातें करना ही व्यर्थ है। हमको तो गांधीजी ने सर्वधर्मसमभाव की शिक्षा दी है। हम आपके कहने से उस शिक्षा को नहीं भुला सकते।"

अटल ने फूलचन्द का हाथ पकड़कर रोका। और फिर उससे कहा: "आप वह बात पूछना तो भूल ही गए, फूलचन्दजी!"

फूलचन्द ने पूछा: "कौन-सी बात?"

अटल बोला : "वही ! कानपुर में इनकी कुराफात वाली बात !"

फूलचन्द ने तुरन्त साधु बाबा से पूछ लिया : "हाँ, महाराज ! एक बात तो बताइए। वह कानपुर में आपने जो एक कँवारी लड़की को ख़राब कर दिया था वह अपनी कमलाजी ही थी ना ?"

साधु बाबा ने कोई उत्तर नहीं दिया। वे सर्वथा शान्त दृष्टि से सामने की ओर देखते हुए बैठे रहे। किन्तु उनके सामने बैठे लोग विचलित होकर उनका मुख ताक रहे थे। विशेषतया मनसाराम।

फूलचन्द ने टोका : "जवाब दीजिए, महाराज ! मैंने बड़े विश्वस्त सूत्र से सुना है।"

साधु बाबा फिर भी मौन रहे। फूलचन्द ने कहा : "यह तो अजीब बात है, महाराज ! नगर की एक प्रतिष्ठित स्त्री को लेकर अपवाद फैलता जा रहा है, और आप मौन हैं।"

अटल ने कहा : "उस दिन वे अमेरिकन लोग आए तो उनको भी इन्होंने कोरा ही टरका दिया था। आज मैं पूरी बात समझ गया। ये अपनी गुजश्ता जिन्दगी को परदे में रखना चाहते हैं।"

मनसाराम उद्विग्न होकर साधु बाबा से बोला : "महाराज ! आप कुछ कहते क्यों नहीं ? आपके विषय में विचित्र-विचित्र रहस्यों का उद्घाटन होता रहता है। और आप मौन रह जाते हैं !"

साधु बाबा ने हँसकर उत्तर दिया : "मनसाराम ! इस बात का सम्बन्ध यदि केवल मुझसे ही होता तो मैं मौन नहीं रहता। किन्तु इसका सम्बन्ध तो एक अन्य व्यक्ति से भी है।"

पूरन ने कहा : "किन्तु, महाराज ! जब तक आप इस बात का खण्डन नहीं करेंगे, तब तक तो यह बात बढ़ेगी।"

साधु बाबा बोले : "किन्तु कमला से ही क्यों न पूछ लिया जाए ? वही बतला देगी कि सत्य क्या है।"

जवाब दिया अटल ने : "वे तो कहती हैं कि वे किसी हबीब सिदीक़ी को नहीं जानतीं।"

साधु बाबा बोले : "तो फिर उनकी बात पर ही विश्वास कर लो।"

"आप कुछ नहीं कहेंगे ?"

"मुझे इस प्रसंग में कुछ नहीं कहना।"

"अच्छा, मत कहिए। लेकिन मुझको तो सब मालूम है।"

पूरन ने अटल से पूछा : "तुमको क्या मालूम है ?"

अटल ने उत्तर दिया : "वाह, इन महाराज की जड़ खोदकर कौन लाया ? मैं ही तो गया था कानपुर। इनका कच्चा-चिट्ठा तैयार करने। वहाँ पार्टी के पुराने लाल-बुझक्कड़ पड़े हुए हैं। ये ही ज़रा कह दें कि कमला जी ने अपनी लड़की का नाम रोज़ा इनके कहने से नहीं रक्खा ?"

फूलचन्द ने चमककर पूछा : "क्या कहा ? क्या..."

अटल बीच में ही बोल उठा : "वह लड़की जब पेट में आई तभी इन दोनों ने तय कर लिया था कि लड़की हुई तो उसका नाम जर्मनी की उस महान् शख्सियत के नाम पर रक्खेंगे, और अगर लड़का...

"अजी लड़की को मारो गोली ! पहले तुम यह तो बताओ कि रोज़ा का अर्थ क्या है ? मैं तो अभी तक इसको मुसलमानी नाम समझता था। जैसे ताज बीबी का रोज़ा।"

अटल हँसने लगा। फिर वह बोला : "आपसे इसीलिए तो कहा करता हूँ के आप हमारा साहित भी पढ़ लिया करें। आपने रोज़ा लक्ज़म्बूर्ग का नाम नहीं सुना ? कौन-सी दुनिया में रहते हैं आप ?"

फूलचन्द ने शरमाकर कहा : "विनोबा जी की किसी पुस्तक में तो इनका नाम आया नहीं। इस महापुरुष के विषय में कुछ बतलाओ तो, अटल !"

अटल फिर हँसने लगा और वह बोला : "वे महापुरुष नहीं, महाऔरत थीं, फूलचन्द जी ! और कैपीटलिस्टों से लड़ती हुई मारी गई थीं।"

"किन्तु इस लड़की ने तो उनके नाम पर कलङ्क लगा दिया।"

"सो तो वो भी अपनी माँ की बेटी है। माँ ने भी ब्याह करने से पहले ही ख़सम कर लिया था।"

मनसाराम उत्सुक हो उठा। वह अपना कौतूहल नहीं रोक पाया। उसने फूलचन्द से पूछ लिया : "बात क्या है, फूलचन्द !"

फूलचन्द नाक-भौं सिकोड़कर बोला : "अजी बात क्या होती ! मालिक का एक लड़का है। वही जो विलायत से पढ़कर लौटा है। कमलाजी की लड़की उसको लेकर भाग गई। बिना ब्याह किए ही !"

साधु बाबा अभी तक मौन रहकर ही यह सब सुन रहे थे। अब हठात् उन्होंने फूलचन्द तथा अटल को सम्बोधित करके कह दिया : "तुम दोनों अब यहाँ से चले जाओ। तुरन्त। और फिर कभी भूलकर भी इस ओर मत आना।"

फूलचन्द बोला : "यह तो हमारी बस्ती का मैदान है। तेरे बाप की जायदाद तो है नहीं। और न तू ने ही यह जगह मोल ले ली है। तू ही क्यों नहीं चला जाता यहाँ से ?"

साधु बाबा का मुख आवेश से आरक्त हो उठा। और अनायास ही उन्होंने पास में पड़ा हुआ चिमटा अपने हाथ में उठा लिया। मानो दूसरे क्षण वे फूलचन्द को मार बैठेंगे।

फूलचन्द और अटल ने साधु बाबा का भैरव-भाव देखा। वे तुरन्त ही वहाँ से उठकर रफू-चक्कर हो गए। और उस छोटी-सी सभा में एक मर्म-वेधी मौन छा गया।

कुछ क्षण उपरान्त साधु बाबा भी उठकर खड़े हो गए। और वे विषादमयी वाणी में बोले : "धनपत ! पूरन ! मनसाराम ! आज सहसा मैं अपने स्वभाव से स्खलित हो गया। आज मुझको क्रोध आ गया। मेरी कई वर्ष की साधना व्यर्थ हो गई। अब मैं यहाँ नही रह सकता। अब मुझको यहाँ से चले जाना ही चाहिए।"

धनपत इत्यादि कुछ कहते इसके पूर्व ही किसी अन्य पुरुष का स्वर सुन पड़ा : "हमारा भी यही खयाल है। तुझको यहाँ बिल्कुल नहीं रहना चाहिए। चल, हम तेरा इन्तजाम कर देते हैं।"

सब ने मुड़कर उस ओर देखा जिधर से ये अशिष्ट शब्द सुनाई दिए

थे। और सबने देखा कि कई-एक काँस्टेबल साथ लेकर एक पुलिस अधिकारी खड़ा-खड़ा मुस्करा रहा है। उधर, कुछ दूर पर, जोरावरसिंह, फूलचन्द, अटल और कुछ अन्य विशिष्ट व्यक्ति मजदूरों की एक भीड़ को साथ लेकर उसी ओर आ रहे थे।

पुलिस अधिकारी ने आगे बढ़कर साधु बाबा के हाथों में हथकड़ी डाल दी। साधु बाबा धनपत इत्यादि को देख-देखकर मन्द-मन्द मुस्करा रहे थे। उनका कुछ क्षण पूर्व का आवेश सर्वथा बिलुप्त हो चुका था।

उपसंहार

तीन मास उपरान्त ।

त्रियामा का प्रथम याम बीत चुका । शुक्लपक्ष की एकादशी का चाँद सूर्यातप से संतप्त वसुन्धरा के आँगन को अपनी ज्योत्स्ना के ज्वार से शीतल कर रहा है। क्षितिज के ओर-छोर एक निबिड़ निस्तब्धता के निस्सीम सागर में निमज्जित हैं । वियोगाग्नि-सा विदग्ध वातास सघन आम्र-कुञ्जों में अवस्थान करता हुआ नव-मञ्जरी के मृदुल मर्दन से अपने शरीर का दाह मिटाना चाहता है। और इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप वातावरण एक सूक्ष्म सौरभ-सार से सिक्त हो चला है।

काठ-कबाड़ के बेड़े से बँधे बगीचे में बैठी हुई शुभ्रवसना नारी-मूर्ति ने पीठ फेरी। पीछे पड़ी छपरैल की ओर से किसी की पदचाप सुनकर। नारी-मूर्ति के नासिका-रन्ध्रों से एक दीर्घ-निश्वास निर्गत हुआ। मानो उसकी समाधि भंग होने पर उसके संज्ञाहीन शरीर में प्राणों का पुनःसंचार हुआ हो। नारी-मूर्ति के नयन निस्पन्द थे। मानो किसी की बाट जोहते-जोहते वे नयन ज्योत्स्ना-पथ पर पथरा गए हों।

छपरैल की ओर से एक नर-मूर्ति उस ओर आ रही थी। घुटनों तक की धोती के अतिरिक्त सर्वथा नंगधड़ंग नर-मूर्ति। उस नरमूर्ति को देखकर नारी-मूर्ति उठ खड़ी हुई। नरम-नरम दूर्वादल का आसन त्यागकर। और वह नरमूर्ति के निकट आने की बाट जोहने लगी। अपने स्थान पर ही अचल रहकर।

नरमूर्ति स्नेह-स्नवित स्वर में मुखरित हुई : "तू अभी तक सोई नहीं, बिटिया!"

—१३

नारीमूर्ति ने प्रतिप्रश्न पूछा : "आप अभी तक जाग रहे हैं, बाबा !"

"मैं तो एक नींद ले चुका। लेटा था। आँखें झपक गईं। बुढ़ापे का रोग है यह। पर तू क्यों जाग रही है ?"

"वे अभी तक नहीं आए, बाबा !"

"बाबू अभी तक नहीं आया ?"

"नहीं ! गाड़ी का टाइम तो बीत चुका, बाबा !"

नरमूर्ति अब नारीमूर्ति के निकट आ गई थी। नरमूर्ति ने नारीमूर्ति को निहारा। निर्निमेष नयनों से। बड़ी ममता थी उन निस्तेज नयनों में। तब नरमूर्ति ने नारीमूर्ति के मस्तक पर अपना हाथ रख कर उसे पुचकार दिया। नारीमूर्ति ने अपना मस्तक नत कर लिया। उसके बड़े-बड़े, काले-कजरारे नयनों से आँसुओं की झड़ी लगा चाहती थी।

नरमूर्ति ने सान्त्वना के स्वर में कहा : "बाबू आता ही होगा, बिटिया! गाड़ी लेट भी तो हो जाती है !"

नारीमूर्ति ने शंका प्रकट की : "इतनी देर तो कभी नहीं हुई, बाबा !"

"मैं अभी जाता हूँ गाड़ी की खबर लेने। इतने तू तनिक सुस्ता ले।"

"आप इत्ती रात गए कहाँ जाएँगे, बाबा !"

"अरी तो मैं क्या कोई शहराती शौखीन हूँ, बिटिया ! मैं तो गँवइ-गाँव का गँवार हूँ। मेरे लिए भला क्या देर, और क्या सवेर ? फिर यह तो मेरा देस है। इस धरती के कोने-कोने को जानता हूँ मैं। यहां मुझे भय किस बात का हो सकता है, बिटिया !"

"तो मैं भी आपके साथ चलूंगी, बाबा।"

"अकेली को यहाँ डर लगेगा ? ना ?"

नरमूर्ति हँसने लगी। नारीमूर्ति के लिए अपना हृदय छलकाकर। नारीमूर्ति भी मुस्करा उठी। मन्द-मन्द। नरमूर्ति ने एक बार फिर हाथ उठाकर नारीमूर्ति का सिर सहलाया। अब उस शिर पर साड़ी का शुभ्र आँचल नहीं था। अब उस शिर की मसीकृष्ण केशराशि ज्योत्स्ना के ज्वार को चुनौती दे रही थी। नारीमूर्ति ने फिर अपना मस्तक नत कर लिया।

उसकी आँखें फिर डबडबा आई थीं।

इसी क्षण बगीचे के उस पार से किसी के आने की आहट हुई। नारी-मूर्ति की पीठ थी उस ओर। किन्तु बगीचे का द्वार नरमूर्ति के सम्मुख था। नरमूर्ति ने हर्षोन्मत्त स्वर में कहा : "लो, वह आ गया बाबू !"

नारीमूर्ति अनायास ही पीठ मोड़कर बगीचे के द्वार की ओर दौड़ पड़ी। और नवागन्तुक के निकट जाकर वह प्रकम्पित स्वर में बोली : "बड़ी देर कर दी तुमने ! बाबा तो तुम्हारी तलाश में जा रहे थे !"

नवागन्तुक धोती-कुरता धारण किए हुए था। नंगे सिर। उसके कन्धे पर से एक कपड़े का थैला लटक रहा था। वह बोला : "गाड़ी बहुत ही लेट हो गई। एक क्षण भी रुके बिना आया हूँ।"

नरमूर्ति ने अपने स्थान पर खड़े-खड़े ही स्वर ऊँचा करके कहा : "बिटिया तो बैठी-बैठी तेरी बाट में सूख गई, बाबू !"

नवागन्तुक ने नारीमूर्ति की ओर देखा। दोनों की नयनद्युति परस्पर टकरा गई। और दोनों ने ही अपने-अपने नयन नत कर लिए। उन दोनों के नयनों में निर्मल प्रणय का पारावार परिप्लावित था।

नारीमूर्ति ने सशंक स्वर में पूछा : "क्या समाचार लाए ?"

किन्तु नवागत ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह नतमस्तक और मौन खड़ा रहा। मानो वह मुखरित होने में बाधा का बोध कर रहा हो।

नारीमूर्ति आपाद-मस्तक सिहर उठी। फिर वह अश्रु-गद्गद् वाणी में बोली : "तुम बोलते क्यों नहीं ? तुम मौन क्यों रह गए ?"

नवागन्तुक ने नतमस्तक ही रहकर नम्र स्वर में उत्तर दिया : "उन-को सजा हो गई ! छः मास की सख्त क़ैद। दो हजार रुपए जुर्माना, नहीं तो तीन महीने की क़ैद और।"

नारीमूर्ति एक क्षण विजड़ित हो गई। अश्रु-विगलित भी। साड़ी के आँचल से अपने आँसू पोंछती हुई वह बोली : "किन्तु आज तो फैसला सुनाने की बात नहीं थी ? आज तो उनको अपना बयान देना था ?"

नवागन्तुक ने कहा : "बयान देने से उन्होंने इन्कार कर दिया। वकील

और मजिस्ट्रेट के कहने पर भी उन्होंने मुख नहीं खोला। बस खड़े-खड़े मुस्कराते रहे वे। बड़े ही शान्त भाव से। ऐसी शान्ति नहीं देखी !"

नारीमूर्ति ने और कुछ नहीं कहा, न कोई अन्य प्रश्न ही पूछा। वह हठात् ही छपरैल की ओर भाग खड़ी हुई। मानो वह वहाँ जाकर अपना मुँह छुपा लेना चाहती हो, और छुप-छुप कर अपने अवरुद्ध आँसू बहाने के लिए व्यग्र हो।

नवागन्तुक अग्रसर होकर नरमूर्ति के निकट आ गया। नरमूर्ति ने कहा : "चल, बाबू ! तू कुछ खा ले। भूख लगी होगी। बिटिया ने भी अभी तक कुछ नहीं खाया है। वह भी भूखी होगी।"

नवागन्तुक बोला : "मुझे तो बिल्कुल भूख नहीं है, बाबा !"

"मन खराब हो गया ? ना ?"

"हाँ, बाबा ! मन तो बहुत खराब हो गया। हम लोग देखते रह गए और वे जेल चले गए। हम उनके लिए कुछ भी नहीं कर पाए।"

"करनेवाला तो भगवान् है, बाबू ! बन्दा क्या कर सकता है ? और फिर वे तो महात्मा हैं। उनके पास तो सक्ती है। जब उनने ही अपनी सक्ती नहीं बरती तो हमारे-तुम्हारे किये क्या हो सकता था। महात्माओं की बातें तो महात्मा लोग ही जानते हैं, बाबू ! जब उनने ही जेल जाना मन्जूर किया है तो हम लोगों को मन मैला नहीं करना चाहिए। वे जब चाहेंगे तब जेल से निकल आएँगे। उनको वहाँ कौन रोक लेगा ? इस राछसी सरकार के पास तो उनको रोकने की कोई सक्ती नहीं है।"

"सो तो ठीक है, बाबा ! किन्तु दुःख तो इस बात का है कि आपका इतना पैसा व्यर्थ ही बरबाद हो गया, और काम कुछ नहीं बना।"

"अपील करके क्यों नहीं देख लेते ?"

"वकील कहते हैं कि अपील से कोई लाभ नहीं होगा। उनकी ओर से तो एक भी गवाह नहीं है। वे खुद भी कुछ कहने के लिए तैयार नहीं। फिर आपका और रुपया पानी में डालने से क्या लाभ ?'

"मेरे रुपये की बात भूल जा, बाबू ! रुपया तो सब भगवान का है। जो

रुपया महात्मा के काम में लग गया वह तो सकारथ हो गया। इससे बढ़िया और कौन-सा काम रुपये से सिद्ध हो सकता है, बाबू!"

"आप तो दरियादिल आदमी हैं, बाबा! किन्तु मेरे मन का मलाल तो नहीं मिटता।"

"तू तो बावला है, बाबू! तूने उस दिन मेरी जान बचाई थी। बदले में मैं तेरे लिए अपनी जान दे दूँ तो भी उरिण नहीं हो सकता मैं। पैसे-रुपये की बात तू क्यों कहता है?"

"वाह! बाबा! आप तो फिर वही राग अलापने लगे। आप को यह याद ही नहीं रहता कि मैंने तो अपनी कार के नीचे कचूमर निकाल दिया था आप का। आप की जान तो हस्पताल वालों ने बचाई थी।"

"हस्पताल भी तो तू ही ले गया था मुझे?"

"सो तो कोई भी ले जाता। हस्पताल की गाड़ी आ जाती। उसमें मैंने कौन-सा अहसान कर दिया आप पर?"

"हस्पताल की गाड़ी आती तब तक तो कई बार मेरे प्राण निकल गए होते। गाँववालों की लाश को शहर में कौन सँभालता है, बाबू!"

नवागन्तुक ने कुछ नहीं कहा। इस कृतज्ञता-निवेदन ने उसको लज्जित-सा कर दिया था। वह मौन खड़ा रहा।

नर-मूर्ति ने कहा: "एक काम कर, बाबू! कल तू इलाहाबाद चला जा, और कोई अच्छा-सा वकील देखकर अपील कर दे। फिर आगे जो होगा सो भगवान के हाथ में है। भगवान भली ही करेंगे।"

नवागन्तुक ने फिर भी मुख नहीं खोला। वह सिर झुकाए खड़ा रहा। नर-मूर्ति ने फिर कहा: "तू रुपये की चिन्ता मत कर बाबू! मेरे पास अभी भी बीस बीघे धरती है, और आम के दो बगीचे भी बचे हुए हैं। अपील के लायक खरच तो निकल ही आएगा। कल भोर होते ही मैं धरती बेचकर रुपया ला दूँगा।"

नवागन्तुक ने हताश स्वर में कहा: "रुपये तो आप ला देंगे, बाबा! किन्तु अपील करने से लाभ क्या होगा? वकील लोग और दो-चार हज़ार

डकार जाएँगे ।"

"अबकी बार कोई होशियार-सा वकील कर लेना। कोई बालिस्टर।"

"वकील तो सभी होशियार होते हैं, बाबा ! कानपुर के वकील क्या कुछ कम थे ? किन्तु वकील क्या करें। पुलिस ने उन पर जो भी आरोप लगाया वही उन्होंने स्वीकार कर लिया। और कोई दूसरी गवाही उनके पक्ष में जुटी नहीं।"

"किन्तु, बाबू ! कानपुर में तो उनको जानने वाले बहुत लोग होंगे। क्या कोई भी...

"कई लोग तैयार थे। किन्तु उन सब को कम्यूनिस्ट पार्टी ने डरा दिया।"

"कांग्रेस वालों की मदद क्यों नहीं माँग ली ?"

"कम्यूनिस्टों के खिलाफ़ कौन कांग्रेसी जाएगा। वे तो सब-के-सब उस ऊपर वाले महा-कम्यूनिस्ट से काँपते हैं।"

"महा-कम्यूनिस्ट कौन ?"

"नेहरू। उसको यदि पता लग जाए कि किसी कांग्रेसी ने कम्यूनिस्टों के खिलाफ़ कान भी हिलाया है तो वह उस आदमी का हुलिया तंग कर दे।"

"कांग्रेस के लोग क्या इतने डरपोक हैं, बाबू !"

"डरपोक ! हीजड़े हैं हीजड़े। कांग्रेस यानी हीजड़ों की धर्मशाला।"

"तो जनसंघ वालों की मदद माँग ली होती।"

"मुसलमान के मामले में उनसे मदद माँगना व्यर्थ रहता, बाबा ! वे लोग मदद नहीं करते।"

"किन्तु यह तो धर्म का मामला था, बाबू !"

"मुसलमान का नाम सुनते ही जनसंघ वाले धर्म-अधर्म का ज्ञान भूल-कर बिल्कुल अन्धे हो जाते हैं।"

नर-मूर्ति मौन हो गई। एक क्षण के लिए। फिर उसने अपने-आपसे ही कहा : "कैसा वक्त आया है !! कानपुर जैसा बड़ा शहर ! कितने पढ़े-लिखे लोग रहते हैं वहाँ ! कितने बड़े-बड़े सेठ ! धरम के काम के लिए कोई

भी आगे नहीं आया ! !"

नवागन्तुक सूखी हँसी हँसकर बोला : "एक साहब आगे आए थे। स्वतन्त्र पार्टी के कर्ताधर्ता। कहने लगे, मसानी महात्माजी की मदद करना चाहता है। मैंने पूछा...

नर-मूर्ति ने प्रश्न किया : "मसानी कौन है, बाबू !"

"स्वतन्त्र पार्टी का सेक्रेटरी है। उसने कहलाकर भेजा था कि साधु बाबा उनको अपनी कहानी की कॉपी-राइट बेचने को तैयार हों तो वह उनके मुकदमे का खरच उठाने को तैयार है।

"वह क्या बेचने को कहता था, बाबू ?"

"अर्थात् महात्मा अपनी कहानी मसानी के बतलाये हुए किसी अखबार में कह दें। अमेरिकन लोग तो उस कहानी के लिए नकद रुपया देने के लिए तैयार थे। बहुत सारा रुपया।"

"यह तो नई बात सुनी, बाबू ! तो तूने महात्मा से कह क्यों नहीं दी यह बात ?"

"वे क्या मानते ? फिर मसानी और अमेरिकनों का नाम सुनकर तो वे आग-बबूला हो जाते। वे अपनी कहानी कहने के लिए तैयार होते तो कोर्ट ना बैठा था। वे छूट जाते। किन्तु उनको मनाता कौन ?"

"महात्माओं की बातें महात्मा लोग ही जानते हैं, बाबू ! खैर, जाने दे वह बात। तू अपील तो कर के देख ले।"

"कोई लाभ नहीं होगा, बाबा !"

"अच्छा ! अपील नहीं हो सकती तो न सही। तू एक काम कर। वह जुरमाना तो दे आ। तीन महीने की कैद तो कम होगी। महात्मा का कुछ कष्ट तो कटेगा।"

"वह भी सम्भव नहीं है, बाबा ! मैं कोर्ट से उठकर चलने लगा था तो उन्होंने मुझको कह दिया था कि मैं जुरमाना भरने की कोशिश नहीं करूँ।"

"उनको कहने दे ! वह उनका फरज था। हमको अपना फ़रज निभाना चाहिए।"

"नहीं, बाबा! उन्होंने कहा था कि यह मेरा आदेश है, इसका उल्लंघन मत करना।"

नर-मूर्ति के मुख से एक दीर्घ निश्वास निर्गत हुई। फिर उसने कहा : "मेरा भाग ही फूटा है, बाबू! महात्मा की कुछ और सेवा बन जाती तो मेरी गति हो जाती। पर भगवान को शायद मंजूर नहीं थी मेरी सेवा।"

नवागन्तुक ने झुककर नर-मूर्ति के चरण छू लिए। उत्कट श्रद्धा के उद्रेक से विह्वल हो उठा था नवागन्तुक।

तदुपरान्त वे दोनों चलकर छपरैल में जा पहुँचे। बाहर दालान में बिछे तख्त पर नारी-मूर्ति औंधी पड़ी थी। सिसक रही थी वह शुभ्रवसना नारी-मूर्ति। नर-मूर्ति ने उसके पास बैठकर उसका सिर सहलाना शुरू कर दिया। नवागन्तुक मौन खड़ा हुआ देखता रहा। उसका भी जी चाह रहा था कि नारी-मूर्ति के पार्श्व में औंधे मुख पड़कर सिसकने लगे।

× × ×

नई दिल्ली की चैम्सफोर्ड क्लब। चार जने क्लब के लॉन में आराम-कुर्सियाँ डालकर उपासीन हैं। मिस्टर गुप्ता, कपूर साहब, कमला शर्मा और मिस्टर चाइल्ड। रात अभी हुई ही है। सबके हाथों में किसी पेय का एक-एक गिलास है। और सबके बीच कोई गर्मा-गर्म बहस छिड़ी हुई है। इस-लिए वे सब-के-सब अपनी-अपनी आराम-कुर्सियों में आगे की ओर झुक आए हैं।

कमला गरम होकर कह रही थी : "गुप्ताजी! मुझे आपसे यह उम्मीद बिल्कुल नहीं थी। मेरा-आपका इतने दिन का दोस्ताना ताल्लुक़ था। मैं उम्मीद करती थी कि आप मेरी मदद करेंगे। लेकिन आपने तो एक तरह से मुझको दग़ा दे दी। मुझको अगर पहले मालूम होता कि आप मेरे साथ इस क़िस्म का सलूक करेंगे तो मैं फिर उस फ़ील्ड में नहीं उतरती।"

मिस्टर गुप्ता ने नरम पड़ कर कहा : "देख, कमला! मैं इस बात से कभी इन्कार नहीं करता कि तू मेरी दोस्त रही है, और दोस्त ही रहेगी। लेकिन दोस्ती अपनी जगह है, बिज़िनैस अपनी जगह। तू मेरे घर पर आए

और मैं तेरी खातिर-तवाजों में कोई कमी करूँ तो तू मेरा कान पकड़ सकती है, और कह सकती है कि पी० एस० गुप्ता जैण्टलमैन नहीं, कमीना है। लेकिन मिल के मामले में तो मैं लाचार हूँ। मिल को तो मैं चलाना चाहता हूँ, चौसर पर नहीं रख सकता।"

"यूनियन मेरे हाथ में रह जाती तो क्या आपकी मिल बन्द हो जाती ?"

"यही तो मुश्किल है, कमला ! यूनियन को तेरे हाथ में रखने के लिए बहुत तवालत करनी पड़ती। खैर, वह सब भी हम कर लेते। लेकिन फ़साद तो उसी जगह नहीं मिट जाता। कम्यूनिस्ट पार्टी क्या मेंहदी लगाकर बैठ जाती ? वह फिर कोशिश करती। और, भइ ! इस रोज़-रोज़ के तनाज़े में मेरा तो हुलिया तंग हो जाता।"

"आप तनाज़े से डरे, या तोड़-फोड़ से ?"

"क्या मतलब ?"

"क्या जोरावरसिंह ने आपके पास जाकर धमकी नहीं दी थी कि आप अगर मेरी मदद करेंगे तो आपकी मशीनों की खैर नहीं ?"

"मुझे किसी ने कोई धमकी नहीं दी। और न मैं किसी की धमकियों से डरने वाला हूँ। जोरावरसिंह तो क्या, खुद जवाहरलाल भी मुझे धमकी देकर मुझसे कुछ करवाना चाहे तो कामयाब नहीं हो सकता।"

"तो जोरावरसिंह ने खुले आम किस तरह कह दिया कि मालिक कमला का साथ नहीं देंगे। आपकी उसके साथ कुछ तो बात हुई होगी ?"

"बात तो हुई थी। वह मेरा रुख जानना चाहता था। मैंने कहा कि मैं तो मिल चलाता हूँ, यूनियन चलाने के मामले में मुझे मतलब दिल-चस्पी नहीं।"

"आपने यह नहीं कहा कि आप कम्यूनिस्ट पार्टी की ही मदद करेंगे ?"

"मैंने यह कहा था कि मिल की यूनियन किसी खास शख्स की मिल-कियत नहीं। यूनियन तो पार्टी की है। पार्टी उसे चलाए। मुझको तो सिर्फ़ इतना वास्ता है कि मेरी मिल में गड़बड़ नहीं होने पाए।"

"मतलब तो एक ही हुआ ना ?"

"अब तू जो भी समझे।"

"इसी को तो ग़द्दारी कहते हैं। आपने खब दोस्ती का हक़ अदा किया !!"

"यह ग़द्दारी नहीं है, कमला ! समझदारी है। अपने-राम तो बनिया के बेटे ठहरे। अपने-राम ने तो कभी मूछों पर ताव देकर किसी को नही ललकारा। लेकिन कॉमरेड शर्मा तो तेरे शौहर थे ? और कम्यूनिस्ट पार्टी के कर्ता-धर्ता भी। उन्होंने ही क्यों नहीं तेरी मदद की ? पार्टी ने तुझे मक्खी की तरह निकाल फेंका, और वे हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहे ! और फिर उनने तुझे अपने घर से भी निकाल दिया !! फिर मेरी तो क्या बुनियाद ? मेरी तो तेरे साथ दोस्ती ही थी ना, कमला ! तेरे साथ मेरी शादी तो नहीं हुई थी ?"

"शादी हुई होती तभी आप मेरे लिए कौनसी चाँदमारी करने खड़े हो जाते...

बातें हिन्दुस्तानी में हो रही थीं। चाइल्ड की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। अभी तक। अब कई बार 'शादी' शब्द सुनकर उसके कान खड़े हो गए। हिन्दुस्तानी के इस शब्द के मायने वह खूब जानता था। वह अपने चेहरे पर मुस्कान चढ़ाकर चहक उठा : "किस की शादी हो रही है ?"

कमला अपनी झेंप उतारने के लिए मज़ाक कर बैठी : "मिस्टर गुप्ता मुझसे शादी करना चाहते हैं। तुम्हारा क्या खयाल है ?"

चाइल्ड एकबारगी उछल पड़ा। हर्ष के मारे। फिर लॉन पर नाचता हुआ वह चुटकी बजाकर बोला : "लाजवाब मैच है !"

मिस्टर गुप्ता बोले : "लेकिन मुझको तो मंजूर नहीं।"

चाइल्ड किन्तु कब मानने वाला था। वह मिस्टर गुप्ता से बोला : "इस मामले में आप मुझसे सलाह लीजिए। कमला के बारे में मुझे..."

चाइल्ड को अश्लीलता की ओर अग्रसर होते देखकर कमला को काठ मार गया। दूसरे क्षण वह चीत्कार कर उठी : "चाइल्ड !! डोन्ट यू शट

अप !! यू ब्लडी बीस्ट !!"

कमला की भैरव मुद्रा देखकर चाइल्ड चुपचाप अपनी कुरसी पर बैठ गया। और वह मुस्कान उसने अपने चेहरे पर से उतार ली।

मिस्टर कपूर ने प्रसंग-परिवर्तन का प्रयत्न करते हुए कमला से पूछा : "अच्छा, कमला जी ! आप यह तो बतलाइए कि आखिर यह सब हुआ क्यों, और किस तरह ? आप तो कम्यूनिस्ट पार्टी की बहुत पुरानी मेम्बर थीं ? फिर पार्टी की मशहूर पार्लामैन्टेरियन भी। आप को पार्टी ने एक मिनट में क्यों निकाल दिया ? लोग तो न जाने आपके बारे में क्या-क्या कह रहे हैं। लेकिन मैं अफवाहों पर यक़ीन नहीं करता। मैं तो भीतर की बात जानना चाहता हूँ।"

कमला ने चाइल्ड की ओर अँगुली उठाकर उत्तर दिया : "भीतर की बात आप इस शख्स से पूछिए। कम्यूनिस्ट पार्टी का राज़दार ये शख्स है। क्यों, चाइल्ड !"

चाइल्ड कमला की हिन्दुस्तानी नहीं समझा। लेकिन कमला की मुख-मुद्रा देखकर वह समझ गया कि कमला अब उससे रुष्ट नहीं है। उसने तुरन्त ही वह मुस्कान फिर अपने मुख पर पहन ली, और कमला से अंग्रेज़ी में पूछा : "क्या बात है, कमला !"

कमला ने उसको समझाया : "कपूर साब यह जानना चाहते हैं कि मुझको कम्यूनिस्ट पार्टी से क्यों निकाला गया।"

चाइल्ड ने कपूर साहब की ओर देखकर कहा : "अमेरिकन एम्बैसी के लोगों ने इसके बारे में यह बात फैला दी कि यह अमेरिका की पे में है, और कम्यूनिस्ट पार्टी के राज़ अमेरिकन सरकार को देती है।"

कपूर साहब ने चाइल्ड से पूछा : "लेकिन सचाई क्या थी ?"

चाइल्ड ने उत्तर दिया : "सचाई खुदा जाने। मैं तो इतना जानता हूँ कि कमला मेरी दोस्त रही है, तो भी उसने अपनी पार्टी की कोई खुफिया बात मुझे कभी नहीं बतलाई, न कभी अपनी पार्टी के साथ ग़द्दारी की। अगर यह अपनी पार्टी के साथ ग़द्दारी करने की कोशिश करती तो मेरी दोस्ती

इसके साथ नहीं निभ पाती। मुझको ग़द्दार इन्सान बिल्कुल पसन्द नहीं।"

"लेकिन कमलाजी और भी तो बहुत से अमेरिकन लोगों के साथ दोस्ती रखती हैं? शायद उनमें से किसी को इन ने...

कपूर साहब ने अपनी बात पूरी नहीं की। किन्तु उसके स्वर में व्यक्त शंका को चाइल्ड समझ गया। वह बोला : "और किसी अमेरिकन की बात मैं नहीं कह सकता। अमेरिकन एम्बैसी में हर किस्म के आदमी हैं। और अमेरिकन सीक्रेट सर्विस के लोगों का तो काम ही ये है कि दूसरे मुल्कों के बाशिन्दों को ग़द्दार बनाएँ। इसलिए मैं नहीं...

कमला ने फिर चीत्कार किया : "यू ब्रूट!!"

चाइल्ड फिर सहम गया। कपूर साहब ने कमला से कहा : "आप ही क्यों नहीं बतला देतीं कि बात क्या थी?"

कमला बोली : "बात तो बहुत बेढब नहीं थी। उस हबीब के बच्चे का पर्दा फ़ाश हुआ। और मैं बीच में पिस गई। हबीब को लेकर पार्टी की बदनामी होने वाली थी। मैं पार्टी के भीतर रह जाती तो बदनामी और भी ज्यादा होती। इसलिए पार्टी ने मुझको भी निकाल बाहर किया।"

"और आप दोनों की मुहब्बत वाली वो बात...क्या...

"मुहब्बत हमारे दरम्यान हुई थी। लेकिन वो तो एक मुद्दत की बात है। उसके बाद मुझे हबीब से नफ़रत हो चुकी थी। एक अरसे से। अमेरिकन एजेन्ट से मेरी मुहब्बत बरक़रार नहीं रह सकती थी।"

"तो क्या यह दुरुस्त है कि आपने उसको बरग़लाकर...मेरा मतलब...

"मैं समझ गई। वो इल्ज़ाम सरासर झूठा है। अमेरिकन प्रौपैगैण्डा का नतीजा। उसकी कोई बुनियाद नहीं। ये इल्ज़ाम तो पार्टी ने भी मुझ पर नहीं लगाया।"

"पार्टी कैसे लगा सकती थी ये इल्ज़ाम? ये इल्ज़ाम तो पार्टी के ही खिलाफ़ जाता।"

"और किसी इल्ज़ाम की तो मैं परवाह नहीं करती।"

"लेकिन पार्टी ने तो आपके ऊपर बहुत बुरे-बुरे इल्ज़ाम लगाए हैं। आप क्या...

"पार्टी को मेरे बारे में ग़लतफ़हमी हो गई है। मतलब दिल्ली की यूनिट को। अमेरिकन लोगों की शरारत की वजह से। वो ग़लतफ़हमी दूर हो जाएगी, और...

मिस्टर गुप्ता बीच में ही बोल उठे : "लेकिन मैंने तो कुछ और ही सुना है, कमला !"

कपूर साहब ने मिस्टर गुप्ता से पूछा : "आपने क्या सुना है गुप्ताजी !"

मिस्टर गुप्ता बोले : "यही के नेहरू को लेकर पार्टी के भीतर बहस चल रही थी। कमला नेहरू के बहुत ख़िलाफ़ रही है। पार्टी में जीत नेहरू के समर्थकों की हो गई। और दिल्ली की यूनिट ने सैण्टर का संकेत पाकर काँटा निकाल दिया। हबीब का मामला तो पार्टी को बना-बनाया बहाना मिल गया।"

कमला का चेहरा खिल गया। अकस्मात्। उसने व्यग्र वाणी में मिस्टर गुप्ता से पूछा : "ये बात आपने कहाँ से सुनी ?"

मिस्टर गुप्ता ने उत्तर दिया : "पार्टी के एक लीडर से। वो आपके हमदर्द हैं। लेकिन उनका नाम नहीं बतलाऊँगा। मुझको मुमानियत है। वो तो ये भी कह रहे थे कि मेरी मिल में हड़ताल के मामले को लेकर तुम से जो उठ-बैठ करवाई गई थी वो भी इसी एक्शन की तैयारी थी।"

कमला कुछ नहीं बोली। किन्तु वह किञ्चित् चिन्तित-सी हो गई। कपूर ने उससे कहा : "कमला जी ! मैं तो आपके लिए मिस्टर मसानी की एक मैसेज लाया हूँ। वे चाहते हैं कि आप सुतन्तर पार्टी में आ जाएँ। वो आपको अपनी पार्टी की सैन्ट्रल कमिटी में लेने के लिए भी तैयार हैं।"

कमला तमककर बोली : "कपूर साब ! कम्यूनिस्ट पार्टी से मेरा झगड़ा ज़रूर हो गया है। वो झगड़ा किसी दिन मिटेगा के नहीं, ये मैं नहीं जानती। लेकिन इसका ये मतलब तो नहीं के मैं कैपीटलिज़म की ख़ैर-

ख्वाह् हो गई। फिर आपको ये याद रखना चाहिए के मैं पच्चीस साल पुरानी कम्यूनिस्ट हूँ। और कम्यूनिज़म तो सिर्फ पार्टी तक ही महदूद नहीं है। कम्यूनिज़म तो एक फ़िल्सफ़ा है। हिस्ट्री की हक़ीक़त को हर पहलू से और मुकम्मल तौर पर समझाने वाला फ़िल्सफ़ा। वो फ़िल्सफ़ा क्या मैं इसीलिए नामंज़ूर कर दूँ के उसकी पैरोकार एक पार्टी यूनिट ने हिमाक़त की है?"

"लेकिन अपना फ़िल्सफ़ा तबदील करने के लिए आप से कौन बदतमीज़ कहता है? आपका फ़िल्सफ़ा आपको मुबारक हो। वो तो आपका ज़ाती मामला है। हम को तो आप की पब्लिक पावर में दिलचस्पी है। आप दिल्ली में अभी तक एक लीडर की हैसियत से रही हैं। हम चाहते हैं के आप की वो हैसियत बरक़रार रहे। लेकिन लीडरशिप के लिए किसी पार्टी का प्लैटफ़ॉर्म भी निहायत ज़रूरी है। सुतन्तर पार्टी आप को अपना प्लैट-फ़ॉर्म ऑफ़र कर रही है। आप को इसमें क्या ऐतराज़ है?"

"मुझे पार्टी-प्लैटफ़ॉर्म की ज़रूरत पड़ेगी तो क्या एक सुतन्तर पार्टी का मुर्दा ही चढ़ने को मिलेगा? सोशलिस्ट पार्टियाँ भी तो हैं? मेरे मुँह खोलने की देर है, वो लोग फ़ौरन मुझको अपना लीडर बनाने के लिए दौड़ पड़ेंगे।"

मिस्टर गुप्ता बोले: "हम तो, कमला! तुझको यही सलाह् देंगे के तुम कांग्रेस में चली जाओ। असूलन तेरी बात में और कांग्रेस की पॉलिसी में कोई फ़र्क़ नहीं।"

कांग्रेस का नाम सुनकर चाइल्ड चौंक उठा। उसने पूछा कि मिस्टर गुप्ता क्या कर रहे हैं। मिस्टर गुप्ता ने उसको अंग्रेज़ी में समझा दिया कि उन्होंने कमला को क्या सलाह दी है। तब चाइल्ड बोला: "मैंने कई-एक कांग्रेसवालों को इस मामले में साउन्ड किया था। वे सब-के सब यही बोले के मैनन नहीं मानेगा। नेहरू की तो खुशामद करके उसको खुश किया जा सकता है। लेकिन मैनन को कौन मनाए? हम तो...

कमला को क्रोध चढ़ आया। वह गुर्राकर बोली: "चाइल्ड! तुम को

मेरी फ़िक्र करने के लिए किसने कहा था ?"

चाइल्ड अपनी मुस्कान चढ़ाकर बाला : "तुम्हारे लिए मेरी मुहब्बत ने।"

कमला ने अपना सिर दोनों हाथों से पकड़ लिया। और वह रोष के स्वर में बोली : "ओ!! ये अमेरिकन तो मुझे कहीं का भी नहीं रहने देंगे!!"

चाइल्ड फिर सहमकर चुप हो गया। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि उसके सारे पाँसे क्यों उलटे पड़ रहे हैं। वह जितना ही कमला को खुश करने के कोशिश करता था, उतना ही वह नाराज़ होती जाती थी। चाइल्ड ने सिर झुका लिया।

कपूर साहब ने अपनी बात का सूत्र फिर सँभाला। वह कमला से बोला : "सुतन्तर पार्टी में आने से आप को एक फ़ायदा तो पॉजीटिवली हो सकता है, कमला जी!"

कमला ने पूछा : "कौनसा फायदा ?"

"आपकी लड़की आपके पास वापस आ जाएगी।"

"सो कैसे ?"

"वो एक कैपीटलिस्ट के लड़के के साथ भागी है ना ? इसका मतलब है के वो कैपीटलिजम को पसन्द करती है। आप को सुतन्तर पार्टी में आया हुआ देखकर वो लौट आएगी।"

मिस्टर गुप्ता ने कहा : "मैं तो उसको अपने घर में नहीं घुसने दूंगा। मेरे लड़के को बरबाद करके रख दिया उसने। लड़का तो गया सो गया। लेकिन मैं अपनी मिल्कियत पर उस लौण्डिया का हाथ कभी नहीं पड़ने दूंगा।"

कपूर साहब ने कहा : "उसकी आपको फ़िक्र नहीं, गुप्ताजी! मिस्टर मसानी उस लड़की पर लट्टू हैं। वो कह रहे थे उस दिन के वो लड़की सुतन्तर पार्टी के पब्लिक रिलेशन्ज संभाल ले तो सुतन्तर पार्टी मोर्चा मार ले। वो तो उसको कई हज़ार रुपया महीना देने के लिए भी तैयार हैं।"

"उस दिन मैं मिस्टर मसानी से मिलने गया तो उनके पास एक और

भी खूबसूरत लौण्डिया बैठी थी। वो तो कह रहे थे के वो लौण्डिया सुतन्तर पार्टी के पब्लिक रिलेशन्ज़ संभालने वाली है ?"

"बात तो थी। लेकिन एक महीने बाद ही मिस्टर मसानी ने उसको फेल कर दिया। इस मामले में मिस्टर मसानी कुछ डिफीकल्ट आदमी हैं। लेकिन मिस शर्मा के बारे में....मैं समझता हूँ...

कमला कुछ कहना ही चाहती थी कि अटल उस ओर आता हुआ दिखाई दिया। वह चुप ही रही। अटल ने चाइल्ड के पास आकर गुड इवनिंग कहा। चाइल्ड ने उसकी ओर लपककर पूछा कि कानपुर का क्या समाचार है। तब अटल बोला : "हबीब को छः महीने सख्त कैद और दो हज़ार रुपया जुरमाने की सज़ा मिली है।"

चाइल्ड ने अधीर होकर कहा : "हबीब को गोली मारो! उस स्टोरी का क्या हुआ ?"

"स्टोरी तो, सर! नहीं मिली। मैंने पाँच हज़ार डॉलर तक लगा दिए। लेकिन नाकामयाब रहा।"

"तो किसको मिली वह स्टोरी ?"

"किसी को भी नहीं। हबीब किसी भी अख़बार के लिए एक लफ़्ज़ भी लिखने को तैयार नहीं हुआ।"

"डैमिट! अजीब इन्सान है!!"

बैरे ने भीतर से आकर कहा : "आप लोगों का डिनर रैडी है, सर!"

सब लोग उठकर क्लब के डाइनिंग रूम की ओर चल पड़े।

: २ :

एक वर्ष उपरान्त।

दिल्ली की उसी मजदूर-बस्ती के मैदान में उन्हीं साधु बाबा का धूना फिर लगा हुआ है। रात का एक पहर बीता होगा। पूरन, मनसाराम, धनपत इत्यादि दस-बारह मजदूरों के साथ-साथ परमानन्द और रोज़ा भी साधु बाबा के सामने उपासीन हैं।

साधु बाबा ने कहा : "पूरन! मुझे ठीक से स्मरण नहीं हो पा रहा।

किन्तु सन अड़तीस-उन्तालीस के आस-पास की बात है। सस्ता-साहित्य मण्डल ने एक सम्वाद छापा था—'गांधीवाद बनाम समाजवाद'। गांधीवाद की ओर से लिखने वाले सभी लोग गांधीजी के विख्यात शिष्य थे। और समाजवाद की ओर से लिखने वाले सभी लोग कम्यूनिस्ट थे। किन्तु सारे सम्वाद का सार यही था कि समाजवाद ही गांधीवाद से श्रेष्ठतर है। मैंने...

पूरन ने पूछा : "क्या गांधीवादी भी यही कह रहे थे कि समाजवाद श्रेष्ठतर है ?"

"स्पष्ट शब्दों में नहीं। किन्तु वे सबके सब यही साबित करने का प्रयत्न कर रहे थे कि गांधीवाद भी वस्तुतः समाजवाद ही है। और कम्यूनिस्ट लोग यह साबित करने का प्रयत्न कर रहे थे कि गांधीवाद समाजवाद का शत्रु ही नहीं, अपितु सामन्तवादी युग की प्रतिक्रियाशील भावधारा का परिचायक है। इस प्रकार दोनों पक्षों ने यह तो स्वीकार कर ही लिया था कि समाजवाद ही एकमात्र कषपट्टिका है। समाजवाद के प्रति तो कोई भी किसी प्रकार की शंका प्रकट नहीं कर रहा था।"

रोजा ने कहा : "किन्तु गांधीजी का अपना मत तो समाजवाद के विरुद्ध था ना ? मैंने तो यही सुना है। इस विषय में मैंने गांधीजी को पढ़ा नहीं। जो सुना है वही कह रही हूँ।"

साधु बाबा बोले : "गांधीजी ने हिन्दुधर्म का मनमाना अर्थ लगाया था। और समाजवाद के प्रसंग में भी उन्होंने वैसा ही किया। इसीलिए वे बार-बार यह कहते रहते थे कि समाजवाद के साध्य समुचित हैं, किन्तु साधन अनुचित। इसीलिए सरदार पटेल इत्यादि की तुलना में नेहरू, जयप्रकाश, नरेन्द्रदेव इत्यादि कम्यूनिस्ट और सोशलिस्ट लोग उनको अधिक प्रिय थे। और इसीलिए वे नेहरू-जैसे कट्टर कम्यूनिस्ट को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर गए।"

सभा में कई-एक क्षण तक मौन छा गया। गांधीजी अथवा गांधीवाद का कोई भक्त अथवा समर्थक उस समय वहाँ वर्तमान नहीं था। इसलिए

किसी प्रकार का विवाद उत्थापित नहीं हुआ।

तब धनपत ने कहा : "महाराज ! आप उचित समझें तो आज एक प्रश्न का उत्तर दें। आप इतने वर्ष तक कम्यूनिस्ट रहे। आपके तो रक्त-प्रवाह में कम्यूनिजम प्रवेश पा चुका होगा। फिर आप क्योंकर इस आसुरी-मत का ओर-छोर देख पाए ?"

साधु बाबा हँसने लगे। फिर वे बोले : "संन्यासी से कोई भी व्यक्तिगत प्रश्न साधारणतः इस देश में नहीं पूछा जाता, धनपत ! अपने व्यक्तित्व का अतिक्रमण करके एक अखण्ड और असीम सत्ता में अपने-आप को विलुप्त कर देना ही जिस की साधना हो, उसके व्यक्तिगत इति-वृत्त का भला क्या मोल हो सकता है ? किन्तु....

धनपत बीच में ही बोल उठा : "मुझसे भूल हो गई, महाराज ! मैं क्षमा चाहता हूँ।"

"नहीं, नहीं, धनपत ! तुम्हारे प्रश्न का प्रसंग धर्म से सम्बन्ध रखता है। इसलिए तुम्हारे इस प्रश्न का उत्तर मैं अवश्य दूँगा।"

साधु बाबा एक क्षण के लिए मौन हो गए। वे अपने नेत्र निमीलित करके चिन्तन कर रहे थे। सभा में उपस्थित सब लोग अत्यन्त उत्सुक होकर उनके मुख की ओर देखने लगे।

तब साधु बाबा ने नेत्र उन्मीलित करके कहना आरम्भ किया : "मैं जब कम्यूनिस्ट जल्लाद के कराल करपाश से बच निकला तो कुछ दिन तक सर्वथा निरुद्देश्य हो गया। ऐसा जी चाहता था कि आत्मघात कर लूँ। जिसको देवता समझकर मैंने अपना सर्वस्व समर्पित किया था, वह तो आत्यन्तिक असुर निकला। और किसी अन्य देवमन्दिर का सन्धान तो मुझे किसी दिन मिला नहीं था। धीरे-धीरे मुझे विश्वास होने लगा कि संसार में, विश्व-ब्रह्माण्ड में देवत्व है ही नहीं, और असुरत्व ही एकमात्र अस्ति-तत्व है। किन्तु इस समस्त अन्धकार के बीच भी मन के किसी कोने में न जाने कैसी एक अम्लान ज्योति-सी जल रही थी। मेरे अन्तर में आरूढ़ कोई अन्तर्यामी मुझसे बारम्बार कह उठता था—'तुमने निस्वार्थ रहकर

ही, धर्म की भावना से प्रेरित होकर ही कम्यूनिजम की आराधना की थी। तुम्हारी वह आराधना विफल नहीं हो सकती। उसका फल तुमको अवश्य मिलेगा। धर्म का सत्य स्वरूप तुम एक-न-एक दिन अवश्य देख पाओगे।'

"उस अन्तर्नाद ने मुझे आत्मघात नहीं करने दिया। किन्तु मेरा तो कोई घर-बार नहीं था, कोई काम-काज भी नहीं। मैं अपने अस्थिर चित्त का भार वहन करता हुआ इतस्ततः घूमने लगा। तब एक दिन अकस्मात् ही मुझको मेरे गुरुदेव ने दर्शन दिए। संन्यासी नहीं थे वे। गृहस्थी ही थे। किन्तु उनकी अनासक्ति को कोई संन्यासी भी क्या पाएगा। उन्होंने मुझको देखते ही पहिचान लिया। मानो वे मेरी ही प्रतीक्षा में प्राणधारण किए बैठे हों। मुझको दीक्षित करते ही उन्होंने प्राणत्याग कर दिया।"

साधु बाबा पुनरेण मौन हो गए। निमीलित-नेत्र भी। मानो वे मन-ही-मन गुरुदेव की स्मृति में श्रद्धा-भक्ति का निवेदन कर रहे हों। सभा में गहन-गम्भीर मौन व्याप्त था। किसी ने भी किसी अन्य की ओर मुख फेर-कर एक आँख भी नहीं देखा। सभी की आँखें साधु बाबा के शान्त मुख पर निविष्ट थीं। निर्निमेष आँखें।

साधु बाबा ने अपनी आँखें खोलीं और वे कहने लगे : "गुरुदेव ने भगवान् के अस्तित्व में मेरी अनास्था की थाह लेकर कहा—'भगवान् को नहीं मान सकते, तो मत मानो। किन्तु अपने-आप को तो मानते हो? तो फिर अपना ही स्वरूप देखने की साधना करो। अपना स्वरूप देख लोगे तो भगवान के अस्तित्व का प्रथम आभास भी तुमको उपलब्ध हो जाएगा। तो तुम मुझको बतलाओ कि तुम अपने-आपको क्या मानते हो, क्या समझते हो?

"मैंने उस समय तक अपने-आपको जो कुछ सोचा-समझा था वह उन को बतला दिया—यही कि मैं माता-पिता के रज-वीर्य से सृष्ट एक शरीर हूँ जिसके भीतर परिस्थिति-परम्परा से प्रादुर्भूत एक मानस-तत्व का संचार होता रहता है। वे बोले—'तुम्हारी बुद्धि पर पाश्चात्य शिक्षा का मैल जमा हुआ है। मोटी तह के ऊपर और भी मोटी तह।' मैंने यह तो तुरन्त मान

लिया कि मेरे समस्त संस्कार पाश्चात्य शिक्षा द्वारा ही सृष्ट हुए हैं। किंतु उन संस्कारों को मैल मानने के लिए मैं उस समय प्रस्तुत नहीं था। तब उन्होंने उन संस्कारों को धोना प्रारम्भ किया। और कई-एक मास में मैं सर्वथा शुद्ध हो गया। तब उन्होंने मेरी बुद्धि को एक अन्य दिशा की ओर द्रवित किया, मेरे हृदय को एक अन्य राग द्वारा हिल्लोलित किया। बुद्धि की वह दिशा···

रोज़ा बीच में ही बोल उठी : "आप की बुद्धि को गुरुदेव ने शुद्ध किस प्रकार किया? अशुद्ध बुद्धि वाले हम लोगों के लिए यह बहुत ही महत्व का प्रसंग है। यदि आप उचित समझें तो···

रोज़ा अपनी अनुनय करते-करते रुक गई। सहसा उसको ऐसा आभास हुआ कि सम्भवतः उसने बीच में बोलकर अवज्ञा की है। वह यह प्रश्न पूछने के लिए अधीर होकर यह भूल गई थी कि बीच में नहीं बोलना चाहिए। किन्तु अब वह किञ्चित् लज्जित-सी होकर अन्य लोगों की ओर देखने लगी। परमानन्द से आँखें मिलते ही वह समझ गई कि जो प्रश्न उस ने पूछा है, वही प्रश्न पूछने के लिए परमानन्द भी व्यग्र है।

साधु बाबा ने प्रश्न का उत्तर दिया। वे बोले : "बेटी! मैं गुरुदेव की शरण में गया उस समय भी मैं श्रद्धा की दृष्टि से कम्यूनिस्ट ही था। कम्यूनिअस्ट पार्टी में विश्वास टूट चुका था, तो भी। मैं तो यही मानता था कि समाज-व्यवस्था को समुचित प्रकार से रूपान्तरित करके ही मनुष्य के सुख की सिद्धि सम्भव है। उस रूपान्तरकरण का एक बहुत बड़ा प्रयास मेरे मत में असफल हो चुका था। किन्तु फिर भी मैं मानता था कि एक अन्य प्रयास सम्भवतः सफल भी हो जाए। मैं दिशाहारा था तो इसीलिए कि उस अन्य प्रयास की रूपरेखा मेरे मानस में नहीं उभर पा रही थी। संशय का उद्रेक बारम्बार मेरी कल्पना की प्रत्येक कतर-ब्योंत को बिछिन्न कर देता था।

"गुरुदेव ने कहा कि समाधान का यह समस्त पथ ही एक मृगमरीचिका है। उस ओर कोई समाधान कभी नहीं मिलेगा। मिलेगी केवल बिड-

म्बना और विभीषिका। विकृत से विकृततर, और विकराल से विकरालतर। तब उन्होंने मार्क्स से लेकर स्टालिन तक बह आने वाली कम्यूनिजम की स्रोतस्विनी का विश्लेषण करके नीर-क्षीर अलग-अलग कर दिया। उस विश्लेषण के अनुसार लेनिन अथवा स्टालिन की किसी भूल के कारण कम्यूनिजम विकृत नहीं हुआ। वस्तुतः वह अपने मूल में ही विकृत था। और मार्क्सवाद की विकृति के मूल में थी वह बृहत्तर विकृति, जिसने मार्क्स को आदितः ही असुरत्व की ओर अग्रसर कर दिया था। बूर्जुआ विचार-पद्धति का विश्लेषण करके गुरुदेव ने यह स्पष्ट कर दिया कि मार्क्स पूँजीवाद के विरुद्ध विद्रोह करने वाला विप्लवी नहीं, प्रत्युत् पूँजीवाद के प्रसार का प्रचार करने वाला प्रवीणतम पण्डित था। लेनिन ने एक पुस्तक लिखी है—'साम्राज्यवाद : पूँजीवाद की पराकाष्ठा'। गुरुदेव ने मार्क्सवाद को एक सूत्र में स्रवित करके कह दिया : 'कम्यूनिजम : पूँजीवाद की पराकाष्ठा'। और बात तुरन्त मेरी समझ में भी आ गई। तब मैं समझा कि कम्यूनिस्ट घोषणा-पत्र में मार्क्स ने पूँजीवाद का जो स्तवनगान किया है उसकी उपमा पूँजीवाद के अपने साहित्य में भी क्यों अनुपलब्ध है।

"गुरुदेव ने मुझको समझाया—'कहने को तो पूँजीवाद का तत्त्वशास्त्र कह गया कि मनुष्य ही समस्त संसार का मानदण्ड है। किन्तु वह तत्त्वशास्त्र यह नहीं समझ पाया कि वह मनुष्य कौन-सा है जो कि मानदण्ड कहलाने का अधिकारी है। महाभारत में भी कहा गया है—गुह्यं ब्रह्म तदिदं वो ब्रवीमि। न मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित्'। अर्थात्, मैं तुमको यह गुह्य सिद्धान्त बतलाता हूँ कि मनुष्य से श्रेष्ठतर और कुछ भी नहीं है। किन्तु महाभारतकार का मनुष्य तो पाश्चात्य के पूँजीवाद का मनुष्य नहीं है। उस मनुष्य के विषय में महाभारतकार का सिद्धान्त है, यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे, अर्थात् ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी है उसका साक्षात्कार तथा उसकी उपलब्धि मनुष्य अपने अन्तर में कर सकता है। इस मनुष्य को यदि समस्त संसार का मानदण्ड माना जाए तो कोई भूल नहीं, कोई दोष नहीं। किन्तु पाश्चात्य पूँजीवाद ने मनुष्य की जो परिभाषा की है उसके अनुसार

मनुष्य पशुमात्र है। पशु किस प्रकार समस्त संसार का मानदण्ड बन सकता है ?'

"तदनन्तर गुरुदेव मुझको ईसाइयत का तत्त्वशास्त्र समझाया। फिर ग्रीक-तत्त्वशास्त्र। और अन्त में वे मुझको सनातन धर्म के तत्त्वशास्त्र की ओर ले गए। इस तुलनात्मक विश्लेषण की प्रक्रिया पूर्ण होते-होते मुझको पूरा विश्वास हो गया कि मनुष्य को उसके बृहत्तम रूप में देख पाने के लिए केवल सनातन धर्म का तत्त्वशास्त्र ही सक्षम है। मनुष्य की जो परिभाषा सनातन धर्म प्रस्तुत करता है उससे प्रकृष्टतर परिभाषा अन्यत्र उपलब्ध नहीं होती।

"गुरुदेव ने मुझको बतलाया—'हमारे पुराण इत्यादि शास्त्र कहते हैं कि कलियुग में मनुष्य का आयतन घटते-घटते बहुत ही स्वल्प रह जाएगा। उनका आशय यही था कि मनुष्य अपने बुद्धि-विकार के परिणामस्वरूप अपनी ही परिभाषा को क्षुद्र-से-क्षुद्रता करता चला जाएगा। और वही हुआ। आज मनुष्य और पशु की परिभाषा में कोई प्रभेद ही नहीं रहा। और पशु से तो पाशवाचार की ही प्रत्याशा की जा सकती है। पशु की परिस्थितियों में सहस्रातिसहस्र परिवर्तन करते रहो, किन्तु अन्ततः वह रहता है पशु ही। केवल परिस्थितियों को परिवर्तित करके ही यदि कोई यह आशा करे कि पशु किसी दिन पशु के समान आचरण करना छोड़ देगा तो यह उसका मिथ्या-मोह है। और फिर परिस्थिति-परिवर्तन भी तो परिभाषा के अनुरूप ही होगा। जिस मनुष्य की सुख-समृद्धि तथा शान्ति के लिए हम नई परिस्थितियों की रचना करना चाहते हैं उसको तो हम पहले ही पशु मान बैठे हैं। फिर हमारे प्रयास की दिशा मानवोचित क्योंकर होगी ?

"इसीलिए पाश्चात्य में कई-एक शताब्दी से मानवोचित शिक्षा-दीक्षा, साहित्य-शिल्प, आचार-व्यवहार, यहाँ तक कि मानवोचित खान-पान और मनोरञ्जन का भी विलोप होता जा रहा है। पूँजीवाद ने जिस समाज-व्यवस्था को सृष्ट किया था वह पशु के लिए ही उपादेय थी। किन्तु कुछ-एक परम्परागत संस्कारों के बचे रह जाने के कारण वह समाज-व्यवस्था सर्वाङ्ग-

सम्पूर्ण नहीं हो पाई। समाजवाद और कम्यूनिज्म उस त्रुटि को दूर करने का बीड़ा उठाकर कार्यक्षेत्र में आए हैं। उनका उद्देश्य है कि पाशवाचार के अतिरिक्त किसी अन्य आचार-परम्परा का लेशमात्र भी मानव-समाज में अवशिष्ट नहीं रहने पाए। जिसने भी समाजवाद का यह स्वरूप एक बार देख लिया वह फिर समाजवाद के किसी भी नारे के फेर में नहीं आ सकता। चाहे वह नारा स्वतन्त्रता की हाँक लगाता हो, चाहे समता की, चाहे भ्रातृ-भाव की। और अपने आपको सनातन धर्म का अनुयायी मानने वाला तो कभी भी अपने-आपको किसी प्रकार का भी समाजवादी कहने की भूल नहीं कर सकता।"

साधु बाबा मौन हो गए। मानो वे किसी अन्य प्रश्न की प्रत्याशा कर रहे हों। और प्रश्न पूछा भी गया। पूरन ने पूछा : "महाराज! भारत के सनातन धर्म को ही प्रमाण मानने वाले कुछ लोगों में अपने-आपको समाज-वादी कहने की जो प्रवृत्ति पनप रही है, उसका क्या प्रतिकार है? जनसंघ के भीतर ही समाजवाद की विचारधारा दिन-प्रतिदिन सशक्त होने लगी है, और हिन्दू महासभा तो बहुत दिन से हिन्दू समाजवाद का नारा लगा ही रही है। समाजवाद के इन हिन्दू पृष्ठपोषकों से यदि यह पूछा जाता है कि वे हिन्दुत्व और समाजवाद का समन्वय किस प्रकार करते हैं तो वे हिन्दू-शास्त्रों के उद्धरण देने लगते हैं और कहने लगते हैं कि सच्चा समाजवाद तो हिन्दु-धर्म में ही मिलता है। अथवा वे कहने लगते हैं कि आजका युग ही ऐसा है कि समाजवाद की बातें कहे बिना कोई भी पक्ष पुष्ट नहीं हो सकता। अतएव वे कूटकौशल का ही आश्रय लेकर लोकसंग्रह के लिए निकल पड़े हैं। यह पथ जनसंघ को किस ओर ले जाएगा?"

साधु बाबा ने उत्तर दिया : "पतन की ओर, और विनाश की ओर। जो लोग हिन्दु-शास्त्रों में अर्वाचीन पाश्चात्य की विचारधारा खोज रहे हैं, वे पापाचार-परायण हैं। हिन्दु-धर्म का कोई भी शास्त्र किसी भी अर्वाचीन सिद्धान्त का प्रचारक कभी नहीं हो सकता। शास्त्रों के अर्थ का ऐसा अनर्थ करने वाले से बढ़कर हिन्दु-धर्म का द्रोही अन्य कोई नहीं है। रही उन लोगों

की बात जो अपनी व्यक्तिगत स्वार्थ-सिद्धि के लिए, अथवा किसी दलगत स्वार्थ-सिद्धि के लिए, हिन्दु नाम का व्यवहार करके हिन्दुधर्म के साथ प्रवंचना करते हैं, और कूटकौशल का आश्रय लेते हैं। उनके विषय में तो मुझे कुछ भी नहीं कहना।"

साधु बाबा मौन हो गए। मानो उनकी बात पूरी हो गई हो। तब रोज़ा ने पूछा : "महाराज ! मनुष्य के विषय में सनातन धर्म की दी हुई परिभाषा की प्रतीति कैसे हो ? इस बात का क्या प्रमाण है कि वह परिभाषा कोरी कपोल-कल्पना नहीं है ? आधुनिक पाश्चात्य तो अपनी परिभाषा की पुष्टि में प्रत्यक्ष प्रमाण प्रस्तुत करता है। क्या उस प्रत्यक्ष प्रमाण का खण्डन सनातन धर्म के लिए सम्भव है ?"

साधु बाबा ने कहा : "मैंने भी अपने गुरुदेव से यही प्रश्न पूछा था। और उसका उत्तर भी उन्होंने मुझे दिया था। मेरा सम्पूर्ण समाधान कर दिया था उनके उत्तर ने। संशय का सम्पूर्ण उच्छेद।"

परमानन्द लालायित-सा होकर पूछ बैठा : "वह उत्तर क्या था, महाराज !"

साधु बाबा हँसने लगे। फिर वे बोले : "वह उत्तर बुद्धि-ग्राह्य नहीं है, बेटा ! उसको साधना के पथ से प्राप्त करना पड़ता है। सनातन धर्म का मर्म साधना के बिना समझ में नहीं आ सकता। और आज का बुद्धिवादी साधना के लिए प्रस्तुत नहीं हो पाता। वह तो बुद्धि-विलास के वीचि-प्रवाह में ही हाथ-पाँव मारने को अपने पराक्रम की पराकाष्ठा मान बैठा है। उसका कोई समाधान कभी भी सम्भव नहीं।"

रोज़ा तथा परमानन्द ने अपना-अपना मस्तक नत कर लिया। मानो उन दोनों के अनुमानानुसार साधु बाबा ने उन दोनों की असमर्थता की ओर संकेत किया हो।

तब साधु बाबा ने कहा : "बेटी राधा ! परमानन्द ! तुम क्यों हताश हो गए ? मैंने तुम्हारे व्यसन की भर्त्सना की है। तुम्हारे सामर्थ्य की निन्दा तो नहीं की। तुम लोग साधना करना चाहो तो मैं तुम्हारी सहायता करने

के लिए प्रस्तुत हूँ। साधना का अधिकार पाने योग्य संयम तथा त्याग तुम दोनों में है।"

रोज़ा और परमानन्द ने परमहर्ष से हिल्लोलित होकर साधु बाबा की ओर देखा। रोज़ा एक नए नाम से सम्बोधित होने के कारण विशेष हर्षान्वित हो उठी थी। राधा! राधा!! राधा!!! न जाने इस नाम की ध्वनिमात्र में क्या रहस्य निगूढ़ था। रोज़ा को रोमाञ्च हो आया। मानो किसी अतीत जन्म-जन्मान्तर की किसी स्मृति ने उसके मानस में सिर उठाया था।

: २ :

अन्धकार में साधु बाबा का आदेश सुन पड़ा। मन्द, मृदुल स्वर में। उन्होंने कहा था : "राधा दीपक जला दो, बेटी!"

एक शुभ्र-वसना मूर्ति ने अन्धकार में उत्थान किया, और दूसरे क्षण कमरे की बिजली जाज्वल्यमान हो उठी। कमरा प्रकाश से भर गया। चारों ओर बिछे हुए आसनों पर चार व्यक्ति बैठे थे। साधु बाबा, पूरन, धनपत और परमानन्द। एक आसन खाली पड़ा था। वह रोज़ा का था। रोज़ा बत्ती जलाने के उपरान्त एक ओर खड़ी थी। आपाद-मस्तक एक अभूतपूर्व शान्ति के पारावार में परिप्लावित-सी। अन्य सब लोग भी अत्यधिक शान्त प्रतीत हो रहे थे। और साधु बाबा के नेत्रों में न जाने कैसी एक दिव्य ज्योति-सी दमक रही थी।

कई-एक क्षण तक कमरे में सन्नाटा रहा। तब साधु बाबा ने पूरन से पूछा : "ध्यान में रस आने लगा, पूरन!"

पूरन ने उत्तर दिया : "बहुत रस आने लगा, महाराज! किन्तु मानस का एक पक्ष भयभीत भी होता जा रहा है।"

"क्या कहता है वह पक्ष?"

"यही कि शान्ति का यह मार्ग उपादेय नहीं है। यह तुमको संन्यास की ओर ले जाएगा। फिर तुम समाज-कल्याण के लिए कर्मरत नहीं रह पाओगे।"

"मानस के इस पक्ष को इतना विश्वास अवश्य है कि समाज के कल्याण का रहस्य इसे ज्ञात है। पूरन ! अगली बार ध्यान में बैठो तो इससे पूछना तो सही कि कल्याण की वह परिकल्पना क्या है, और उसके सम्यक् होने का क्या प्रमाण है ?"

परमानन्द बोला : "महाराज ! मैंने अपने ध्यान में पूछा था यह प्रश्न। मेरे मानस का भी एक पक्ष भयभीत था। उसी प्रकार के संशय को लेकर जैसा कि पूरनजी ने अभी-अभी प्रस्तुत किया है। और मुझे प्रश्न का उत्तर भी मिल गया। सर्वथा सुस्पष्ट। मानो मेरे अन्तर में बैठा कोई कह रहा था—तुम्हारा यह विश्वास कि समाज के कल्याण का रहस्य तुमको ज्ञात है, तुम्हारे अशुद्ध चित्त की वृत्ति-मात्र है। तुम्हारे अहंकार का आग्रह-मात्र है वह। समाज का कल्याण करने की चिन्ता त्यागकर पहले तुम अपने कल्याण का प्रयास करो। तुम्हारा कल्याण हो गया तो समाज का कल्याण भी हो जाएगा। तब तक तुम समाज से दूर ही रहो तो तुम्हारे लिए भी उपादेय है, और समाज के लिए भी।"

रोज़ा किंचित् असहिष्णु-सी होकर बोली : "किन्तु मुझे तो इससे विपरीत उत्तर मिला। इसी प्रश्न का। मैंने भी यही प्रश्न पूछा था। मुझको उत्तर मिला—तुम अपने स्वार्थ का, अपने मनोरंजन का त्याग करके अपने स्वभाव के अनुकूल कर्म किए जाओ। जो भी कर्म तुमको यदृच्छा उपलब्ध हो, उसी कर्म में तुम्हारा कल्याण निहित है, और समाज का कल्याण भी। कर्म से तुम किसी दिन भी निवृत्ति मत खोजना। कर्म से निवृत्त होना आत्मपोषण का ही प्रकारान्तर है। अध्यात्म का आश्रय लेकर भी निवृत्ति में नित्य विद्यमान दोष दूर नहीं हो सकता।"

धनपत ने कहा : "महाराज ! मैंने न तो यह प्रश्न पूछा, और न मुझे अनायास ही इस प्रश्न का कोई उत्तर मिला। मैं तो सदा ही सत्य के साक्षात्कार की कामना करता रहता हूँ। और मेरा मन कहता है कि साक्षात्कार के पूर्व मेरे मानस में जो भी प्रश्न उत्थापित होते हैं वे सबके सब भ्रान्त हैं, और उन प्रश्नों के जो भी उत्तर मुझे मिलेंगे, वे सभी सदोष होंगे।"

साधु बाबा ने रोज़ा से कहा। "आओ, बेटी राधा! तुम अपने आसन पर बैठ जाओ। आज मैं तुमको सनातन धर्म का सारभूत सिद्धान्त बतलाता हूँ। वह सिद्धान्त है अधिकार-भेद और आधार-भेद। सनातन धर्म ने कभी यह नहीं माना कि समस्त साधक एक ही प्रकार के आधार हैं, और सबको एक ही प्रकार का अधिकार है। सनातन धर्म के अतिरिक्त कोई अन्य धर्म आधार-भेद और अधिकार-भेद की बात नहीं मानता। वे एक-ही सिद्धान्त को, एक ही साधना को, एक ही समाधान को, एक ही सिद्धि को सब मनुष्यों के लिए समान रूप से सम्यक् मानते हैं। और इसीलिए वे सब अपने कुछ अनुयाइयों के लिए वरदान बनकर, अपने अन्यान्य अनुयाइयों के लिए अभिशाप बन जाते हैं। सनातन धर्म इसीलिए उन धर्मों को पाखण्ड कहकर पुकारता है। पाखण्ड का अर्थ है खण्ड सत्य को सम्पूर्ण सत्य मान लेना, एक मनुष्य के लिए उपादेय साधना को समस्त मनुष्यों के लिए उपादेय मान लेना। इसी भ्रान्ति के कारण इस्लाम तथा ईसाइयत इत्यादि धर्मों ने बार-बार धर्म के नाम पर बलात्कार किए हैं। इसी भ्रान्ति के कारण सनातन-धर्म के ही कुछ सम्प्रदाय सतत ही मिथ्याचार के मार्ग पर अग्रसर होते गए हैं, और अन्ततः मूढ़-मतान्धता के अतिरिक्त कुछ नहीं रह गए।

"तुम चार जनों ने जो पृथक्-पृथक् प्रश्न पूछे और पृथक्-पृथक् प्रत्युत्तर पाए उसके कारण किसी विवाद का उद्भव नहीं होना चाहिए। कारण, तुम चारों के आधार पृथक् हैं, तुम चारों के अधिकार भी पृथक् हैं। तुम चारों के स्वभाव विभिन्न हैं, तुम चारों के स्वधर्म तो विभिन्न होंगे ही।"

धनपत ने शंका उठाई : "फिर भी, महाराज! प्रवृत्ति-मार्ग तथा निवृत्ति-मार्ग का विवाद तो रह ही गया। स्वभाव और स्वधर्म के न्याय से न सही, किन्तु सिद्धान्त के न्याय से तो ये दोनों मार्ग परस्पर प्रतिद्वन्दी हैं? इनके विवाद का शमन कैसे सम्भव है?"

साधु बाबा बोले : "निवृत्ति के बिना प्रवृत्ति का परमस्वरूप न तो शुद्ध होता है, न व्यक्त। मानव के अहंकार ने जो संसार सृष्ट किया है, उससे तो निवृत्त होना ही होगा। उससे निवृत्त हुए बिना जो भी स्वभावगत

प्रवृत्ति है वह सदोष है। इसीलिए निवृत्ति के पूर्व शास्त्र के आदेश को ही कर्म के प्रसंग में प्रमाण माना गया है। कारण, शास्त्र निवृत्ति-प्राप्त पुरुषो द्वारा प्रत्यक्षीकृत प्रवृत्ति की प्रेरणा देता है। प्रवृत्ति और निवृत्ति के विवाद का एक ही समाधान है—अपनी मानव-सुलभ प्रेरणा को सर्वप्रथम भगवद्-प्रेरणा में परिवर्तित कर दो, और भगवद्-प्रेरणा प्राप्त हो जाने पर पुनरेण मानव-प्रेरणा में।"

सबने सिर झुकाकर इस समाधान पर मनन करना आरम्भ किया। रोज़ा ने एक बार फिर से उठकर कमरे की बत्ती बुझा दी।